छठा अंक
2016-17

दुग्ध-गंगा

भाकृअनुप-राष्ट्रीय डेरी अनुसंधान संस्थान
(मान्य विश्वविद्यालय) -
करनाल-132 001 (हरियाणा) -

15 वें दीक्षान्त समारोह का आयोजन -

डा. के.के.अइया मेमोरियल व्याख्यान का आयोजन -

RNI:HAR/H-4834/2009

दुग्ध-गंगा
2016-17

छठा अंक

भाकृअनुप-राष्ट्रीय डेरी अनुसंधान संस्थान
(मान्य विश्वविद्यालय)
करनाल (हरियाणा)-132 001

भाकृअनुप
ICAR

संरक्षक एवं प्रकाशक

डा. आर.आर. बी. सिंह

कार्यवाहक निदेशक

परामर्श मण्डली

डा. बिमलेश मान, संयुक्त निदेशक (अनुसंधान), मुख्य सलाहकार

श्री डी.डी. वर्मा, नियंत्रक, वित्तीय सलाहकार

श्री के.पी.एस. गौतम, मुख्य प्रशा. अधिकारी एवं प्रभारी राजभाषा एकक, सलाहकार

संपादक

श्री राकेश कुमार कुशवाहा, सहायक निदेशक (राजभाषा), मुख्य संपादक

श्रीमती कंचन चौधरी, सहायक मुख्य तकनीकी अधिकारी, संपादक

तकनीकी संपादक

डा. राकेश कुमार, वरिष्ठ वैज्ञानिक, शस्य अनुभाग

डा. चन्द्र दत्त, प्रधान वैज्ञानिक, पशु पोषण प्रभाग

डा. हंस राम मीणा, वरिष्ठ वैज्ञानिक, डेरी विस्तार प्रभाग

डा. चित्र नायक, वरिष्ठ वैज्ञानिक, डेरी अभियांत्रिकी प्रभाग

फोटोग्राफी

डा. गोपाल सांखला, प्रधान वैज्ञानिक

प्रभारी, संचार केन्द्र

संपर्क सूत्र : **श्री राकेश कुमार कुशवाहा,** सहायक निदेशक (राजभाषा),
भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद-राष्ट्रीय डेरी अनुसंधान संस्थान
(मान्य विश्वविद्यालय) करनाल, हरियाणा, पिन: 132 001
फोन : 0184-2259045, फैक्स: 0184-2250042
E-mail : rakeshkumar19782014@gmail.com
Website : www.ndri.res.in

इस अंक में प्रकाशित आलेखों एवं रचनाओं में व्यक्त विचारों/आंकड़ों आदि के लिए लेखक स्वयं उत्तरदायी है।

प्रकाशन वर्ष : 2016-2017

Printed at : **Aaron Media**
UG-4, Sector-17, Super Mall, Karnal-132 001
M. 98964-33225

प्रो.(डा.) ए.के. श्रीवास्तव

सदस्य, कृषि वैज्ञानिक चयन मंडल
Member, Agricultural Scientists Recruitment Board
कृषि अनुसंधान भवन-I, नई दिल्ली-110012
Krishi Anusandhan Bhawan-I, New Delhi-110012

संदेश

मुझे यह जानकर अपार हर्ष हो रहा है कि भा.कृ.अनु.प.-राष्ट्रीय डेरी अनुसंधान संस्थान, करनाल द्वारा वार्षिक गृह पत्रिका ''दुग्ध गंगा'' के वर्ष 2016-17 के छठे अंक का प्रकाशन किया जा रहा है। पत्रिका के प्रकाशन हेतु संस्थान के निदेशक, सलाहकार व संपादक मण्डल एवं रचनाएं प्रस्तुत करने वाले वैज्ञानिकों, विशेषज्ञों, लेखकों व विद्यार्थियों को भी मेरी हार्दिक बधाई एवं शुभकामनाएं।

राष्ट्रीय डेरी अनुसंधान संस्थान, करनाल में एवं नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति, करनाल के सदस्य कार्यालयों में राजभाषा हिन्दी के प्रसार, प्रसार एवं कार्यान्वयन के लिए संस्थान के वर्तमान निदेशक डा. आर.आर.बी. सिंह, श्री सुशांत साहा, संयुक्त निदेशक (प्रशासन) व कुलसचिव, श्री के.पी.एस.गौतम, मुख्य प्रशासनिक अधिकारी, श्री राकेश कुमार कुशवाहा, सहायक निदेशक (राजभाषा) एवं श्रीमती कंचन चौधरी, सहायक मुख्य तकनीकी अधिकारी के द्वारा समन्वित रूप से किए जा रहे परिणामोन्मुखी प्रयासों की भी मैं सराहना करता हूँ।

यह मेरा सौभाग्य है कि मुझे राष्ट्रीय डेरी अनुसंधान संस्थान, करनाल में दिनांक 25.4.2008 से 30.1.2017 तक अर्थात् लगभग 9 वर्षों तक सेवा करने का मौका मिला तथा मुझे यह भलीभांति विदित है कि यह पत्रिका संस्थान की उपलब्धियों एवं गतिविधियों को प्रदर्शित करती है तथा इसके अध्ययन से पाठकगण, किसान, अनुसंधानकर्ता एवं विद्यार्थी बहुत ही लाभान्वित होंगे। इसकी सफलता के लिए हृदय से बहुत बहुत बधाई एवं मुझे यह विश्वास भी है कि विगत अंकों की भांति यह अंक भी राजभाषा हिंदी के प्रचार-प्रसार में बहुपयोगी सिद्ध होगा।

जय-हिन्द।

– ए.के. श्रीवास्तव

सत्यमेव जयते

डा. आर.आर. बी. सिंह
कार्यवाहक निदेशक

भाकृअनुप - राष्ट्रीय डेरी अनुसंधान संस्थान, करनाल
(मान्य विश्वविद्यालय)
करनाल (हरियाणा) - 132001
दूरभाष : 0184-2252800, ईमेल : dir.ndri@gmail.com

प्राक्कथन

मानव अस्तित्व, मान्य जीवन एवं मानव सभ्यता को उन्नत बनाने में विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी की भूमिका वैसे तो प्राचीन समय से रही है। परन्तु आधुनिक युग में हमारे दैनिक जीवन का एक अनिवार्य पहलू बन गई है। विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी जैसे महत्वपूर्ण विषय एक सरल व लोकप्रिय भाषा में होने चाहिए जो मुख्यत: उस परिवेश से जुड़े आम लोगों की अभिव्यक्ति का माध्यम हो। एक सरल, लोकप्रिय एवं जनसम्पर्क की भाषा का प्रयोग एवं प्रचलन कर निश्चय ही हम विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी की पहुंच आम लोगों तक ले जा सकेंगे और असंख्य युवा वैज्ञानिकों को स्वअभिव्यक्ति का माध्यम दे कर विकास एवं शोधकार्य को मुख्य धारा से जोड़ सकेंगे। समय की मांग है कि देश में हो रहे महत्वपूर्ण अनुसंधान के परिणाम जन-साधारण तक पहुंचे ताकि कृषकों में वैज्ञानिक प्रवृति जागृत हो और वे देश की प्रगति में सहभागी हो सकें।

भारत में विज्ञान और वैज्ञानिक प्रतिभागों का ढ़ांचा विकसित देशों से सर्वथा भिन्न है। विज्ञान और तकनीक को चार दीवारी में बंद करके नहीं रखा जा सकता। ग्रामीण परिवेश में आज भी लोग वैज्ञानिक उपलब्धियों के महत्त्व से अपरिचित व विज्ञान के लाभों से वंचित हैं।

भूमण्डलीकरण के इस दौर में एवं वैज्ञानिक क्रांति के इस युग में मानव की आवश्यकताएं व्यक्तित्व से पारिवारिक, सामाजिक, राष्ट्रीय तथा अंतर्राष्ट्रीय स्तर तक फैलती जा रही है। सूचना का प्रचार-प्रसार जन-जन तक जाने वाली भाषा ही कर सकती है। साहित्य वही है जो लोकहित के लिए रचा जाए और विज्ञान तथा तकनीकी लेखन को सशक्त माध्यम बनाने के लिए वैज्ञानिकों तथा तकनीकी विशेषज्ञों द्वारा हिंदी को यथासंभव अपनाने पर ही यह संभव हो सकेगा।

संस्थान द्वारा प्रकाशित की जाने वाली गृह पत्रिका ''दुग्ध गंगा'' इसी श्रृंखला की एक महत्वपूर्ण कड़ी है। इसमें डेरी विज्ञान के विभिन्न पहलुओं को लोककप्रिय लेखों के रूप में समाविष्ट किया गया है। निश्चय ही इसमें प्रकाशित जानकारी से कृषक समुदाय, वैज्ञानिक एवं छात्र सभी लाभान्वित होंगे। मैं उन सभी वैज्ञानिकों, तकनीकी अधिकारियों एवं शोध छात्रों को भी बधाई देना चाहता हूँ। जिन्होंने अपने आलेख/शोधपत्र भेजकर पत्रिका प्रकाशन में अपना भरपूर योगदान दिया है। मैं संपादक मंडल एवं राजभाषा एकक के अधिकारियों का भी आभारी हूँ, जिनके समन्वित एवं अथक प्रयासों से दुग्ध-गंगा के छठे अंक का समय पर प्रकाशन संभव हो पाया है।

- आर.आर. बी. सिंह

के.पी.एस.गौतम

मुख्य प्रशासनिक अधिकारी, प्रभारी राजभाषा एकक -
एवं समन्वयक, नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति, करनाल -

भाकृअनुप- राष्ट्रीय डेरी अनुसंधान संस्थान, करनाल, हरियाणा, पिन-132001.
दूरभाष : 0184-2259086, ईमेल आई.डी. kpsg1963@gmail.com

प्राक्कथन

''हमारा तो जो भी कदम है, किसानों की राह में है।''

वार्षिक गृह पत्रिका ''दुग्ध गंगा'' वर्ष 2016-17 का छठा अंक आपके हाथों में सौंपते हुए मुझे अपार खुशी की अनुभूति हो रही है। इस अंक का प्रत्येक लेख विभिन्न प्रकार के अनुसंधानों एवं तथ्यों पर आधारित है। प्रत्येक लेख अपने आप में किसानों, अनुसंधानकर्ताओं, विद्यार्थियों एवं जन मानस के लिए बहुत ही लाभदायक है। इस अंक को तैयार करने में भा.कृ.अनु.प.-राष्ट्रीय डेरी अनुसंधान संस्थान, करनाल के उच्च अधिकारियों, वैज्ञानिकों, सभी संबंधित अधिकारियों, कर्मचारियों एवं राजभाषा एकक के सभी अधिकारियों व कर्मचारियों के द्वारा दिए गए महत्वपूर्ण योगदान के लिए मैं उनका हृदय से आभार व्यक्त करता हूँ।

इस अंक की रूपरेखा, कार्य-योजना एवं परिणिती को साकार रूप देने में मुख्य संपादक श्री राकेश कुमार कुशवाहा, सहायक निदेशक (राजभाषा) एवं सचिव, नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति करनाल का महत्वपूर्ण योगदान रहा है। वे एक संभावनाशील अधिकारी हैं एवं उनके सार्थक प्रयासों के बिना यह पराक्रम समय पर पूरा होना संभव नहीं था। मैं उनके अथक प्रयासों की भूरि-भूरि प्रशंसा करता हूँ।

मेरी देश के किसानों, अनुसंधानकर्ताओं एवं विद्यार्थियों से विशेष रूप से यह प्रार्थना है कि वे इस अंक के प्रत्येक लेख का अध्ययन, अवलोकन एवं चिन्तन मनन करके अपने-अपने बहुमूल्य विचारों से हमें अवगत करायें ताकि हम समन्वित रूप से प्रयास करके भविष्य में इस अंक को और भी अधिक पठनीय बनाकर आपके हाथों में प्रस्तुत कर सकें। इस अंक से यदि देश के किसान लाभान्वित होते हैं तो हमें यह लगेगा कि हमारा प्रयास सफल रहा है।

यहां यह भी उल्लेख करना प्रासांगिक होगा कि राष्ट्रीय डेरी अनुसंधान संस्थान केवल एक भूमि का टुकड़ा ही नहीं है और न ही केवल कंक्रीट की दीवारों से बनी एक इमारत है, बल्कि यह अन्तर्राष्ट्रीय क्षितिज पर ''दुग्ध क्रान्ति'' का स्वाभाविक सहयोगी बनकर विश्व स्तर पर देश की पताका फहराने का एक पराक्रम भी है। यह वह पवित्र अनुष्ठान है, जिसके सर्वांगीण विकास में देश-विदेश की विभिन्न महान हस्तियां प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष रूप से जुड़ी हैं। इस प्रतिष्ठित संस्थान से जुड़ने के पश्चात् जब कोई भी व्यक्ति अस्थाई या स्थाई रूप से इससे अलग होता है तो उसे यह आभास होता है कि उसका मन इस संस्थान में ही रह गया है एवं उसकी अन्तर्रात्मा से एक ही आवाज आती है-एनडीआरआई जिन्दाबाद, भा.कृ.अनु.प. जिन्दाबाद और हिन्दुस्तान जिन्दाबाद।

-के.पी.एस.गौतम

राकेश कुमार कुशवाहा

सहायक निदेशक (राजभाषा) एवं
सचिव, नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति, करनाल -
भाकृअनुप - राष्ट्रीय डेरी अनुसंधान संस्थान, करनाल
(मान्य विश्वविद्यालय) -
दूरभाष : 0184-2259045, ईमेल : rakeshkumar19782014@gmail.com

मुख्य संपादक की कलम से

भा.कृ.अनु.प.-रा.डे.अनु.सं., करनाल द्वारा भारत में अधिकांश जनसंख्या द्वारा बोली जाने वाली एवं भारतीय संविधान द्वारा अंगीकृत राजभाषा हिन्दी में प्रकाशित वार्षिक गृह पत्रिका ''दुग्ध गंगा'' के वर्ष 2016-17 के छठे अंक को आपके हाथों में सौंपते हुए अपार हर्ष हो रहा है। मुझे आशा ही नहीं बल्कि पूर्ण विश्वास है कि यह वार्षिक पत्रिका सुधि पाठकों के लिए अत्यंत लाभकारी व उपयोगी सिद्ध होगी, चूंकि प्रयोगशाला में विकसित तकनीकों एवं प्रौद्योगिकियों को सरल रूप में उपयोगकर्ताओं तक पहुँचाने में इस प्रकार के प्रकाशन महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं।

इस अंक में डेरी प्रसंस्करण, पशु प्रजनन व आनुवांशिकी, पशु पोषण, डेरी प्रबंधन, चारा एवं कृषि उत्पादन आदि विषयों के महत्वपूर्ण आलेखों को सरल एवं सुबोध भाषा में सम्मिलित किया गया है, जिसके अध्ययन से देश के किसान, अनुसंधानकर्ता एवं विद्यार्थी निश्चित रूप से लाभान्वित होंगे। राजभाषा कार्यकला के अंतर्गत राजभाषा हिन्दी के प्रगामी प्रयोग के लिए संस्थान में आयोजित की गई विभिन्न गतिविधियों को भी शामिल किया गया है। मैं उन सभी वैज्ञानिकों, विशेषज्ञों, लेखकों व विद्यार्थियों को हृदय से बधाई देना चाहता हूँ, जिन्होंने अपने आलेखों व शोध-पत्रों से इस अंक को सफल बनाने में सहयोग प्रदान किया है।

संस्थान के निदेशक महोदय के मार्गदर्शन एवं सलाहकार व संपादक मण्डल के सतत् सहयोग के बिना इस अंक को समय पर प्रकाशित कर पाना संभव नहीं था। मैं श्री के.पी.एस.गौतम, मुख्य प्रशासनिक अधिकारी एवं प्रभारी राजभाषा एकक को इस अंक को आकर्षक बनाने में उनके बहुमूल्य सुझावों हेतु, राजभाषा एकक की श्रीमती कंचन चौधरी, सहायक मुख्य तकनीकी अधिकारी को उनके समग्र सहयोग के लिए व श्री चन्द्रभान, सहायक को प्रशासनिक सहयोग के लिए हृदय से धन्यवाद भी देता हूँ।

आशा है कि पूर्व की भांति इस अंक को भी सुधि पाठकगण रूचिकर और उपयोगी पायेंगे। इस प्रतिष्ठित पत्रिका के प्रबुद्ध पाठकों से हमारा पुन: विनम्र निवेदन है कि वे इस अंक में प्रकाशित सभी लेखों के बारे में अपनी प्रतिक्रियाएं अवश्य भेजें। उनकी प्रतिक्रिया इस पत्रिका को और अधिक उपयोगी बनाने में अपनी अहम् भूमिका अदा करती आ रही है। आपकी प्रतिक्रियाओं के इंतज़ार में हम पलक पांवड़े बिछाए बैठे हैं।

जय हिन्द!

-मुख्य संपादक

विषय-सूची

1.	**कृत्रिम गर्भाधान में हिमीकृत वीर्य का महत्व** राज कुमार, चंदन कुमार, सुनीता मीणा, तुषार कुमार मोहंति एवं मुकेश भक्त	01
2.	**भूमि की उपजाऊ शक्ति बनाए रखने एवं अधिक उत्पादन लेने के लिए ''एकीकृत नाशीजीव प्रबन्धन'' (इन्टीग्रेटेड पेस्ट मैनेजमेन्ट/आई.पी.एम.) अपनाएं** उत्तम कुमार, हरदेव राम ,राकेश कुमार, विजेन्द्र कुमार मीना, मगन सिहं, राजेश कुमार मीणा, मालूराम यादव, मनीष कुशवाहा एवं आकांक्षा टमटा	03
3.	**डेरी उत्पादों में दूध वसा की भूमिका : एक समीक्षा** जितेन्द्र कुमार, सोनिया एवं महेश कुमार	06
4.	**पारंपरिक भारतीय डेरी उत्पादों के लिए मशीनीकरण : एक परिचय** पी. बर्नवाल, अंकित दीप, एस. श्रीनिवासा एवं प्रितपाल सिंह	08
5.	**किसानों के लिए खेतीबाड़ी से सम्बंधित सामान्य एवं उपयोगी जानकारी** उत्तम कुमार, राकेश कुमार, मगन सिहं, हरदेव राम, विजेन्द्र कुमार मीना, राजेश कुमार मीणा, मालूराम यादव एवं दीपा जोशी	13
6.	**पशु पालन एवं जैव प्रौद्योगिकी** सुनीता मीणा, चंदन कुमार एवं राज कुमार	21
7.	**दानेदार खोआ का तीन चरण स्क्रैप सतह ऊष्मा एक्सचेंजर द्वारा यंत्रीकृत उत्पादन** अंकित दीप, पी. बर्नवाल एवं ए.के. डुडेजा	23
8.	**दुग्ध उत्पादाकों के लिए डेरी विकास की सरकारी योजनाएं** बुलबुल.जी.नगराले, ए.के.चौहान, परविंदर मलिक और डेन्नी फ्रान्को	28
9.	**बकरी पालन व्यवसाय** भोपाल सिंह, नीलम रानी, प्रतिभा कुमारी, रेखा रानी, अनंदिता देबनाथ एवं सी. एन. धारइया	34
10.	**किण्वित डेरी खाद्य पदार्थों में प्रोबायोटिक्स और प्रीबायोटिक्स की उपयोगिता एवं महत्ता** जगरानी मिंज, शिल्पा विज, बृजपाल सिंह, अरूण बेनीवाल, प्रियंका सैनी, शायंति मिंज एवं श्रीया मेहता	37
11.	**दुग्ध जगत में ऊँट प्रजाति का महत्व** भोपाल सिंह, रेखा रानी, प्रतिभा कुमारी, राहुल निगम, अनंदिता देबनाथ, जूई लोध एवं सी. एन. धारइया	44
12.	**साईलेज बनाई जाने वाली महत्वपूर्ण फसलों की शस्य क्रियाएं** मगन सिंह, राजेश कुमार मीना, सूमी काला, बी.के.मीना, उत्तम कुमार एवं शशांक द्विवेदी	48
13.	**फसल सुधार कार्यक्रम द्वारा सरसों की पैदावार में बढ़ोतरी** महेश कुमार, जितेन्द्र कुमार, नितिन कुमार गर्ग एवं अविनाश गोयल	50
14.	**बकरी का दूध - एक स्वस्थ्यवर्धक विकल्प** अश्विनी कुमार रॉय एवं महेन्द्र सिंह	53
15.	**ऊर्जा संरक्षण का महत्व व ऊर्जा की दक्षता को बढ़ाने के लिए ऊर्जा प्रबंधन के प्रभावी उपाय** जितेन्द्र डबास एवं ई. सुनील कुमार	56

16.	**मानव स्वास्थ्य में डेरी एवं अन्य खाद्य पदार्थों के कार्यात्मक पहलुओं का अवलोकन** जगरानी मिंज एवं शिल्पा विज	60
17.	**डेरी एवं खाद्य प्रसंस्करण संयंत्र के लिए स्वच्छ डिजाइन संबंधी कुछ आवश्यक बातें** पी.बर्नवाल, वरिष्ठ वैज्ञानिक एवं पी.एस. मिंज, वैज्ञानिक	63
18.	**उच्च गुणवत्ता के पनीर उत्पादन हेतु स्वचालित प्रेस तकनीक का विकास** चित्रनायक, मंजुनाथ एम, महेश कुमार, आशीष कुमार सिंह, अमिता वैराट एवं खूशबू कुमारी	68
19.	**डेरी फार्म में अभिलेख रखने का महत्व** तुलिका कुमारी, अर्जुन प्रसाद वर्मा, परमेश्वर के नायक एवं मानिष सावंत	70
20.	**चारा फसलों, घासों एवं खरपतवारों में पाये जाने वाले रसायन तथा उनका पशु स्वास्थ्य पर प्रभाव एवं बचाव के उपाय** अर्जुन प्रसाद वर्मा, तुलिका कुमारी एवं मालूराम यादव	73
21.	**भैंसों में सफल कृत्रिम वीर्यरोपण के लिए महत्वपूर्ण सुझाव** राज कुमार, चंदन कुमार, सुनीता मीणा, तुषार कुमार मोहंति एवं मुकेश भक्त	76
22.	**स्टेम कोशिकायें और उनके उपयोग** विशाल शर्मा, सिकन्दर सैनी एवं ध्रुव मालाकार	78
23.	**जलवायु परिवर्तन और तापमान वृद्धि का डेयरी उत्पादन एवं कृषि पर प्रभाव** महेश कुमार, अविनाश गोयल, नितिन कुमार गर्ग एवं जितेन्द्र कुमार एवं गौतम कौल	83
24.	**पशुओं में बाहृय परजीवियों से बचाव एवं प्रबंधन** स्वाति शिवानी, ऋतिका गुप्ता, चन्द्र दत्त, दिग्विजय सिंह एवं आकाश मिश्रा	85
25.	**पशुओं के प्रमुख संक्रामक रोग और उनकी रोकथाम** अर्जुन प्रसाद वर्मा, मालु राम यादव, नवल सिंह रावत एवं गोविन्द मकराना	88
26.	**जैविक खेती आज की आवश्यकता** मालु राम यादव, राकेश कुमार, विजेन्द्र कुमार मीना, बृजेश यादव एवं विनोद यादव	92
27.	**उन्नत तकनीक अपनाएं-रबी फसलों की पैदावार बढ़ाएं** मालु राम यादव, राजेन्द्र कुमार यादव, राकेश कुमार, हरदेव राम, उत्तम कुमार एवं सी.एम. परिहार	94
28.	**पाले में रबी फसलों का बचाव** विजेन्द्र कुमार मीना, बुद्धि प्रकाश मीना, उत्तम कुमार, राकेश कुमार, मगन सिंह, राजेश कुमार मीना एवं हरदेव राम	98
29.	**फसलों में पोषक तत्व एवं उर्वरक प्रबंधन** मालु राम यादव, राजेश कुमार मीना, हरदेव राम, राकेश कुमार एवं मगन सिंह	100
30.	**स्वयं सहायता समूह के माध्यम से माइक्रोफाइनान्स : खेती के लिए एक व्यावहारिक विकल्प** डेन्नी फ्रान्सको, बुलबुल जी नगराले एवं ए.के. चौहान	103
31.	**स्वदेशी डेरी उत्पादों के यंत्रीकृत उत्पादन के उपकरण** प्रशांत मिन्ज, वैज्ञानिक एवं डा. जितेन्द्र कुमार डबास, स.मु.तक.अधिकारी	106
32.	**राजभाषा कार्यकला 2016-17**	109

22 सितम्बर 2016 को बी.पी.डी. युनिट में योग गुरू रामदेव बाबा एवं संस्थान के अधिकारी

4 मार्च 2017 को संस्थान के पंद्रहवें दीक्षान्त समारोह उपरांत समूह फोटोग्राफ

01 कृत्रिम गर्भाधान में हिमीकृत वीर्य का महत्व

राज कुमार[1], चंदन कुमार[2], सुनीता मीणा[3], तुषार कुमार मोहंति[4], मुकेश भक्त[5]

- [1]शोध सहयोगी, भाकृअनुप - राष्ट्रीय डेरी अनुसंधान संस्थान, करनाल
- [2]सहायक प्राध्यापक, माधव विश्वविद्यालय, आबू रोड, राजस्थान
- [3]वैज्ञानिक, भाकृअनुप - राष्ट्रीय डेरी अनुसंधान संस्थान, करनाल
- [4]प्रधान वैज्ञानिक, भाकृअनुप - राष्ट्रीय डेरी अनुसंधान संस्थान, करनाल
- [5] वरिष्ठ वैज्ञानिक, भाकृअनुप - राष्ट्रीय डेरी अनुसंधान संस्थान, करनाल

भारत में पशुधन की उत्पादकता को बढाने में सहायता प्रजनन पद्धति एक महत्वपूर्ण साधन है तथा आधुनिक प्रजनन की योजनाओं में कृत्रिम गर्भाधान एक वरदान साबित हुआ हैं। पशुओं में कृत्रिम गर्भाधान के लिए हिमीकृत वीर्य का प्रयोग होता है किन्तु वीर्य हिमीकरण एक जटिल प्रक्रिया है जिसमें नर पशुओं से वीर्य, कृत्रिम पद्धति के द्वारा प्राप्त किया जाता हैं। तत्पश्चत् प्राप्त वीर्य की गुणवत्ता की जांच सूक्ष्मदर्शी के द्वारा करने के बाद ही मानित वीर्य को विस्तृत किया जाता हैं। सामान्यतः विस्तारण के लिए अण्डपित निर्मित वीर्य विस्तारक का प्रयोग होता हैं। विस्तारित वीर्य को प्लास्टिक की छोटी.छोटी नलिकाओं में भर कर व सील कर तरल नाईट्रोजन, जिसका तापमान –196 डिग्री सैल्सियस होता हैं, में डुबोकर हिमीकृत किया जाता है । ऐसा करने से शुक्राणु सुशुप्त अवस्था में चले जाते है एवं यह प्रक्रिया वीर्य के शुक्राणुओं को वर्षों तक जीवित रखने में सक्षम हैं। कृत्रिम गर्भाधान के लिए हिमीकृत वीर्य युक्त नलिकाओ का पिघलाव गुनगुने पानी में, जिसका तापमान 37 डिग्री सैल्सियस होता है। उसमें 30 सेकंड तक डुबोकर किया जाता हैं। परिणाम स्वरूप सुशुप्त शक्राणुओं में प्रतिगामी गतिशीलता एवं प्रजनन क्षमता लौट आती हैं। तत्पश्चात् इन शुक्राणुओं को मादा के जननांगों में, मदकाल के दौरान, कृत्रिम गर्भाधान बन्दूक द्वारा छोड़ दिया जाता हैं। यह शुक्राणु मादा के जननांगों में आगे बढकर अण्डे को निषेचित करते हैं। फलस्वरूप भ्रूण का निर्माण होता है और एक निश्चित अवधि तक भ्रूण को अपने गर्भ में पालने के बाद गर्भवती मादा बछड़े को जन्म देती हैं।

आजकल सहायता प्रजनन पद्धति में कृत्रिम गर्भाधान तकनीक का होना विकासशील देशों में प्रजनन योजनाओं की सफलता का सूचक हैं। आज पूरे देश में कृत्रिम गर्भाधान द्वारा अच्छी नस्ल के चुनिंदा नर के शुक्राणुओं से थोड़े से समय में ही ज्यादा से ज्यादा मादाओं को गर्भवती किया जा सकता हैं। यही नहीं, इन शुक्राणुओं को लम्बी दूरी तक किफायती ढंग से स्थानांतरित किया जा सकता है तथा नर की मृत्यु के कई वर्षों के बाद तक उसके शुक्राणुओं का उपयोग संभव हैं। हिमीकरण. हिमद्रवन प्रक्रिया वीर्य के शुक्राणुओं में ऊनघातक क्षति पहुंचाते हैं। इसीलिए हिमीकृत वीर्य में हिमद्रवन के पश्चात शुक्राणुओं की अपर्याप्त गतिशीलता, कार्यात्मक विशेष परिवर्तन एवं गर्भाधान दरों में कमी होना एक समस्या हैं। पशुधन के हिमीकृत शुक्राणु में उर्वरता की कमी मुख्यतः कोशिका झिल्ली के अखण्डता में परिवर्तन के कारण होती हैं। कोशिका झिल्ली की अखण्डता शुक्राणुओं में ऑक्सीकृत तनाव पर निर्भर करती हैं। यह तनाव हिमीकरण.हिमद्रवण प्रक्रिया से उत्पन्न होती है जो शुक्राणुओं में अपरिपक्व शुक्राणुधारिता व ऊनघातक क्षति पहुचाते हैं। फलस्वरूप शुक्राणुओं की उर्वरता घट जाती हैं।

पशुओं में सहायता प्रजनन के बाद गर्भधारण दर का कम होना एक चिन्ता का विषय हैं। हलांकि यह बात ध्यान देने योग्य है कि हिमीकृत वीर्य की उर्वरता कई कारकों पर निर्भर करती हैं। जैसे कि प्रयोग किये गए वीर्य विस्तारक के घटक एवं शीतरक्षक की उपस्थिति, हिमीकरण की प्रक्रिया एवं प्रमुख रूप से हिमद्रवण (पिघलाव) की प्रक्रिया। अतः सहायता प्रजनन में प्रशिक्षित व्यक्ति का चुनाव गर्भाधान की दरों को बढ़ा सकता हैं। इन कारकों के अलावा शुक्राणु की उत्कृष्ठता भी गर्भधारण की दरों को सुनिश्चित करते हैं। शुक्राणुओं की प्रगामी गतिशीलता उनकी गुणवत्ता का एक प्रमुख चिन्हक हैं। हिमद्रवित शुक्राणुओं में 40 से 45 प्रतिशत या उससे अधिक प्रागामी गतिशीलता का होना वीर्यरोपन के लिए उपयुक्त माना गया हैं। यह गतिशीलता शुक्राणुओं की कोशिका झिल्ली की अखण्डता पर निर्भर करती हैं।

प्रयोगशाला में गहन अध्ययन के पश्चात यह पाया गया कि वीर्य विस्तारक में अण्डपित की उपस्थिति प्रमुख संरक्षक के

रूप में कार्य करती हैं। यद्यपि यह शुक्राणुओं में कुछ क्षति भी पहुचाती हैं। अतः वीर्य विस्तारक में अन्य शीतरक्षक जैसे कि ग्लिसरॉल, शर्करा (ट्रेहलोस), अमीनो अम्ल (टाऊरीन, सिस्टीन) और विटामिन सी0, ई0 आदि का समावेश लाभदायक सिद्ध होता हैं। अण्डे का पित्त मुर्गियों के अण्डे से प्राप्त होता है जो कि वीर्य विस्तारक में प्रयोग होता हैं। परंतु जन्तु उत्पाद होने के कारण अण्डपित्त में जीवाणुओं एवं विषाणुओं से फैलने वाले रोगो का खतरा होता हैं।

इन सभी चुनौतियों को ध्यान में रखकर राष्ट्रीय डेरी अनुसंधान संस्थान में जीव रसायन प्रभाग एवं कृत्रिम प्रजनन अनुसंधान केन्द्र के वैज्ञानिकों ने पौधे से उत्पादित सोयाबीन निर्मित वीर्य विस्तारक का निर्माण किया हैं। इसके लिए सोयाबीन को उपचारित कर सोयाबीन दूध का निर्माण किया जाता है जिसका उपयोग वीर्य विस्तारक में होता हैं। प्रयोगशाला में विभिन्न प्रयोगों द्वारा यह भी पाया गया है कि अण्डपित की अपेक्षा सोयादूध निर्मित वीर्य विस्तारक में हिमीकृत शुक्राणुओं की उर्वरता ज्यादा होती हैं। इसके अतिरिक्त इस विस्तारक में विषाणुओं एवं जीवाणुओं से होने वाले रोगों का खतरा भी नहीं होता हैं। अण्डपित्त में उपस्थित विषाणुओं एवं जीवाणुओं से होने वाले रोगों के भय से भारतीय नर पशुओं के वीर्य का निर्यात भी सम्भव नहीं है। सोयादूध निर्मित वीर्य विस्तारक के प्रयोग से यह निर्यात भी संभव हो पाएगा।

राष्ट्रीय डेरी अनुसंधान संस्थान, करनाल (डेयरी फार्म) पिछले कई दशकों से राष्ट्रहित में पशुधन उत्थान व उनकी उत्पादकता बढ़ाने की दिशा में प्रयत्नशील रहा हैं। अतः सोयाबीन दूध निर्मित वीर्य विस्तारक का निर्माण इसी दिशा में एक और कदम है।

हमें अपने आचरण, कार्य एवं व्यवहार में राजभाषा हिन्दी को अपनाने पर गर्व है।

02 भूमि की उपजाऊ शक्ति बनाए रखने एवं अधिक उत्पादन लेने के लिए ''एकीकृत नाशीजीव प्रबन्धन'' (इन्टीग्रेटेड पेस्ट मैनेजमेन्ट/आई.पी.एम.) अपनाएं

उत्तम कुमार, हरदेव राम ,राकेश कुमार, विजेन्द्र कुमार मीना, मगन सिहं, राजेश कुमार मीणा, मालूराम यादव, मनीष कुशवाहा एवं आकांक्षा टमटा

सभी चारा अनुसंधान एवं प्रबंधन केन्द्र,भाकृअप-राष्ट्रीय डेरी अनुसंधान संस्थान,करनाल)

भारत में कृषि के प्रति वांछित आकर्षण पैदा करने एवं उसको कम खर्चीला और अधिक लाभकारी बनाने के लिए जिन उपायो पर गौर किया जा रहा है उनमें प्रमाणित बीजो की उपलब्धि,उर्वरकों का सही ढंग से उपयोग,अच्छा जल प्रबन्ध एवं एकीकृत नाशीजीव प्रबन्धन मुख्य है। भारत में हर वर्ष अनेक कीट ,रोगों,चूहों एवं खरपतवारों से फसलों की उपज पर बहुत प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। इन समस्याओं में धान का बाल काटने वाला सैनिक कीट, धान का गंधी कीट, चने एवं अरहर का फली छेदक तथा उकठा रोग, मूंगफली की सफेद गिडार, सरसों का सफेद गेरुई एवं आल्टरनेरिया झुलसा रोग एवं माहू कीट, आम का फूदका, आम का फुदका, आलू का अगेता एवं पछेता झुलसा,मटर का बकनी रोग, टमाटर एवं भिन्डी का मोजैक ,अरहर का बन्झा रोग एवं गेंहूँ का मामा/फलेरिस माइनर आदि प्रमुख समस्याएं हैं।

अभी तक इन समस्याओं से निपटने के लिए खासतौर पर केवल रसायनों/कैमिकल्स का ही सहारा लिया जाता रहा है। ये रसायन खर्चीले होने के साथ –साथ वातावरण को भी दूषित करते हैं एवं कई प्रकार की दुर्घटनाओं का भी भय बना रहता है। इन रसायनों के अवशेष फलों एवं सब्जियों आदि में रह जाते हैं तथा उपभोक्ता के स्वास्थ्य पर बहुत बुरा प्रभाव छोड़ते हैं रसायनों के निरन्तर उपयोग से कई प्रकार के कीटों,रोगों एवं खरपतवारों में उनके विरूद्ध अवरोध पैदा हुआ है और बहुत से कम महत्वपूर्ण कीट बड़ी समस्यायें बने हैं। साथ ही साथ खेत में या वातावरण में उपस्थित मित्र परजीवी कीट भी समाप्त हो जाते हैं और पर्यावरण का संतुलन बिगड़ जाता है। समस्याओं के प्रभावी निदान एवं उपरोक्त खतरों से बचने के लिए अब जिस पद्धति पर जोर दिया जा रहा है उसको **एकीकृत नाशीजीव प्रबन्धन या इन्टीग्रेटेड पेस्ट मैनेजमेन्ट/आई0 पी0 एम0** कहा जाता है। इस पद्धति से कीटों, रोगों और खरपतवारों उन्मूलन या नियन्त्रण किया जाय उनके प्रबन्ध की बात की जाती है। वास्तव में हमारा ध्येय किसी जीव को हमेशा के लिए नष्ट करना नहीं बल्कि ऐसे उपाय करने से है जिससे उनकी संख्या/घनत्व सीमित रहे और उन्हें अधिक क्षति न पहुंच सके। इस पद्धति की मुख्य बातें निम्नलिखित हैं–

1. समस्याओं के निदान के लिए केवल एक तरीके को अपनाने के बजाय कई साधनों का समन्वय किया जाए, जैसे अवरोधी किस्मों का प्रयोग एवं अन्य शस्य क्रियाओं,तकनीकी साधनों, जैविक साधनों और रसायनों का प्रयोग आदि।
2. रसायनों का इस्तेमाल उसी समय किया जाए जब वास्तव में उसकी आवश्यकता हो अर्थात विभिन्न कीटों एवं रोगों की एक निर्धारित संख्या/घनत्व पर पहुंचने पर ही रसायनों का प्रयोग किया जाए।
3. जो साधन अपनाएं जाए वह न केवल प्रभावी हो बल्कि कम खर्लीलें भी हों।
4. पर्यावरण एवं वातावरण को प्रदूषित होनें से बचाया जाए।

इन्टीग्रेटेड पेस्ट मैनेजमेन्ट/आई.पी.एम में पहली आवश्यकता यह है कि फसलों का बराबर सर्वेक्षण किया जाता रहे ताकि किसानों एवं कार्यकर्ताओं को विभिन्न कीटों एवं रोगों आदि की स्थिति के बारे में ज्ञान होता रहे। यह भी आवश्यक है कि कार्यकर्ताओं और किसानों के प्रशिक्षण का उचित प्रबन्ध किया जाए ताकि वह समस्याओं को पहचानने और उससे संबंधित उस बिन्दु अथवा अवस्था को जानने की समझ पा सकें जिन पर रसायनों का प्रयोग या दूसरे कार्य करने आवश्यक हो जाते हैं।

इन्टीग्रेटेड पेस्ट मैनेजमेन्ट में जैविक साधनों का बहुत महत्व है जिसमें विभिन्न प्रकार के परजीवी/नरभक्षी कीट, फफूँदी, बैक्टीरिया, विषाणु और अन्य जीव–जन्तु है जिनके द्वारा फसलों के हानिकारक कीटों एवं रोगों आदि का निदान किया जाता है। सामान्यता पर्यावरण में यह सारे जीव अपना कार्य करते रहते है और समस्याओं को काफी हद तक सीमा में रखते हैं, परन्तु आज की सघन खेती में इनकी सामान्य कार्यशीलता पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ा है जिसमें रसायनों का अन्धाधुन्ध प्रयोग सबसे बड़ी बाधा है। देश में कई कीट एवं अन्य समस्याओं का प्रभावी जैविक नियन्त्रण किया गया है जिसमें गन्ने का पाइरिला कीट, चने का फली छेदक एवं जलकुम्भी का सफल नियन्त्रण कुछ विशेष उदाहरण हैं। चने के फली छेदक के लिए न्यूकलियर पॉली हाइड्रोसिस वाइरस (एन. पी. वी.) 250 (इल्ली/सुंड़ी) समतुल्य (लार्वल इक्वीलेन्ट) की दर से बहुत सफल पाया गया है जलकुम्भी जो देश के जलाशयों की बड़ी समस्या है, नियोचैटिना वीविल कीट की दो प्रजातियों के द्वारा प्रभावी ढ़ंग से नियन्त्रण में आ सकती है।

अनेक प्रमुख फसलों के मुख्य कीट/समस्याओं की उस संख्या (घनत्व) का ज्ञान प्राप्त हो चुका है जिन पर रसायनों का प्रयोग किया जाना चाहिए। देश के विश्वविद्यालयों एवं अन्य संस्थानों में इन विषयों पर बहुत शोध कार्य चल रहा हैऔर जैसे–जैसे ज्ञान मिलता जायेगा वैसे–वैसे **इन्टीग्रेटेड पेस्ट मैनेजमेन्ट** की पद्धति को प्रभावी ढ़ंग से अपनाने में सफलता मिलेगी। इन्टीग्रेटेड पेस्ट मैनेजमेन्ट/आई.पी.एम अपनाने से कृषि रक्षा रसायनों पर खर्चा कम आयेगा,किसानों को राहत मिलेगी और पर्यावरण भी सुरक्षित रहेगा।

एकीकृत नाशीजीव प्रबन्धन (इन्टीग्रेटेड पेस्ट मैनेजमेन्ट/आई0 पी0 एम0) के प्रमुख बिन्दु निम्नहै :–

समस्याओं के निदान के लिए केवल रसायनों का एक मात्र तरीका अपनाने के बजाय उपलब्ध सभी साधनों का समन्वय किया जाना चाहिए। इसमें शस्य क्रियायें, अवरोधी किस्मों का उपयोग,यांत्रिक क्रियाएं, तकनीकी एवं जैविक साधनों और अन्त में आवश्यकतानुसार रसायनिक उपचार सम्मिलित है।

(क) शास्य कियाएंः/कृषण कियाएं

1. गर्मियों में खेतों की गहरी जुताई करें ऐसा करने से जमीन में छुपे कीटों रागों की विभिन्न अवस्थाएं ऊपर आकर सूर्य की तेज धूप/गर्मी से नष्ट हो जाती है तथा पक्षियों द्वारा अनेक जीवित एवं मृत कीड़े उनके भोजन बनकर नष्ट हो जाते हैं।
2. खेतों की सफाई करनी चाहिए क्योकि खेतों में खरपतवार फसल के साथ–साथ उग आते हैं, वे नाशीजीवों/कीट रोगों को संरक्षण प्रदान करते हैं। खेतों को निराई–गुड़ाई करके साफ सुथरा रखना चाहिए इससे कीट/ रोगों की अनावश्यक वृद्धि पर अंकुश लगता है।
3. प्रतिरोधी/सहनशील किस्मों के स्वस्थ बीजों की बुवाई करें।
4. बीज जनित रोगो की रोकथाम के लिए बीजो को संस्तुत बीज शोधन कर बोना चाहिए।
5. बुवाई यथा सम्भव उचित समय से करनी चाहिए।देर से बोई गई फसलों पर कीट /रोगों का अपेक्षाकृत अधिक प्रकोप होता है।
6. पौधों से पौधों की दूरी अपेक्षाकृत ज्यादा रखनी चाहिए इससे निराई–गुडाई एवं अन्य क्रियाएं करने में ज्यादा सुविधा होती है और साथ ही साथ कीट /रोगों का प्रकोप भी कम होता है।
7. गलियां–पगडण्डिया बनाना :– खेती संबंधी कार्यों की सहूलियतों के लिए फसल की 20–25 पंक्ति के बाद 1–2 पंक्ति छोड़ देनी चाहिए।
8. उर्वरकों, खादों और सूक्ष्म तत्वों का संतुलित उपयोग करना चाहिए।
9. पानी का समुचित प्रबन्ध करना चाहिए। खेत में अधिक पानी नहीं भरा रहना चाहिए। अधिक पानी के निकास का प्रबन्ध होना चाहिए।
10. फसल की कटाई जमीन के स्तर से बिल्कुल सतह से करनी चाहिए।

(ख) यांत्रिक नियंत्रण;–

1. नाशीजीवों के अण्डे–गुच्छे और उनकी इल्लियों को इकट्ठा करके नष्ट करना अथवा उन्हें उनकी रोकथाम करने वाले प्राणी समूह की हिफाजत के सिलसिले में बांस के पिंजरों में रखना चाहिए।

2. कीट अथवा रोगों के द्वारा ग्रसित पौधों के प्रभावित हिस्से अलग करके नष्ट करने चाहिए।
3. लाइट ट्रेप अथवा फेरोमोन ट्रेप का उपयोग करना चाहिए।
4. मेड़ों और सिंचाई के लिए बनाई गई नालियों में खरपतवार नहीं रहने देना चाहिए।
5. बारहमासी—लम्बे समय तक बने रहने वाले खरपतवार—घास—पात इत्यादि नष्ट करने के लिए जहॉ कही संभव हो,गर्मी के मौसम में जुताई करनी चाहिए।
6. जहॉ कही संभव हो खेत में पहले से मौजूद खरपतवारों को नष्ट करना चाहिए।
7. बुवाई करने वाले बीजो को खरपतवार रहित रखना चाहिए।
8. बुवाई के 4—6 सप्ताह बाद आवश्यकतानुसार हाथ से निराई—गुड़ाई करनी चाहिए।

(ग) जैविक नियंत्रण;—

1. परभक्षी एवं परजीवियों को संरक्षण देना।
2. परभक्षी को बाहर से लाकर खेतों में छोड़ना जैसे—जीवाणु, वायरस, फफूंद तथा प्रोटोजोआ आदि।
3. शत्रु एवं मित्र कीटों का संतुलन बनाये रखना ।

(घ)रसायनिक नियन्त्रणः—

1. कीटनाशक, खरपतवारनाशक, रोगनाशक रसायनों का प्रयोग अंतिम उपाय के रूप में करें।
2. सुरक्षित रसायनों को उचित समय पर निर्धारित मात्रा में प्रयोग करें।
3. रसायनों का प्रयोग करते समय सावधानी बरतें।
4. नीम पर आधारित रसायनों का प्रयोग करें।
5. खरपतवारनाशकों का प्रयोग बताये गये निर्देशों के अनुसार ही करें।

बात अपनी यदि हिन्दी की जबानी होगी,
सारी दुनिया इसे सुनने को दिवानी होगी।

03 डेरी उत्पादों में दूध वसा की भूमिका : एक समीक्षा

जितेन्द्र कुमार, सोनिया एवं महेश कुमार
भाकृअनुप - राष्ट्रीय डेयरी अनुसंधान संस्थान ,करनाल

परिचय (Introduction)

वसा मनुष्य के आहार में एक विशिष्ट भूमिका निभाता हैं। आहार ऊर्जा का सबसे केन्द्रित स्रोत होने के अलावा , वसा बनावट,स्वाद और खाद्य पदार्थो की सुगन्ध में महत्वपूर्ण योगदान देता हैं । खाद्य पदार्थो की उर्जा घनत्व उसमें उपस्थित जल और वसा की मात्रा से निर्धारित होता हैं । खाद्य पदार्थो की आपूर्ति से जल एवं वसा का लगभग 95% भाग उर्जा घनत्व के लिए उत्तरदायी होता हैं। जिन खाद्य पदार्थो में वसा की मात्रा अधिक होती हैं। वह कम वसा युक्त खादय् पदार्थो की तुलना में अधिक स्वादिष्ट एवं रूचिकर होते हैं। जिन उच्च वसा युक्त डेरी उत्पादों में शक्कर और नमक मिश्रित हो उसे खाने से इन्कार करना बेहद कठिन हो जाता हैं , अधिक वसा युक्त खाद्य पदार्थो का प्रयोग पादप युक्त खाद्य जैंसे अनाज और दलहन की तुलना में अधिक होता हैं । उच्च ऊर्जा केन्द्रित खाद्य की पसन्द तथा प्रभाव मानव शरीरिकी की आधार पर की जाती हैं, भावात्मक विचार ,आनुवंशिकी एंव पाचन क्रिया में गड़बड़ी या असंतुलन वसायुक्त खाद्य के सेवन को प्रभावित कर सकते हैं । वसा युक्त डेयरी खाद्य पदार्थों के लिए मानव वरीयताओं को आर्थिक, समाजिक एंव सांस्कृतिक मूल्यों से प्रभावित किया जा सकता हैं। वसा युक्त डेरी खाद्य पदार्थो के प्रति उपभोक्ताओं के दृष्टिकोण में चिकित्सीय अनुसंधान एंव संचार साधनों के कारण बदलाव आ रहा हैं। अधिकांश पश्चिमी देशों में हृदय रोग एंव मोटापे की जोखिम के सम्भावना होने के कारण बड़े पैमाने पर खाद्य पदार्थों में वसा की मात्रा में कटौंती की सिफारिश की जा रही हैं। जिसके परिणाम स्वरूप डेयरी उद्योग भी उपभोक्ताओं की वरीयता के आधार पर विभिन्न डेरी उत्पादों में वसा की मात्रा में परिवर्तन का समायोंजन कर रहे हैं । पिछले तीन दशाकों में कम वसा युक्त दूध या दूध उत्पादो की मांग में काफी बढोंत्तरी हुई है। वर्तमान उपभोक्ता स्वास्थ्य लाभ एवं पोषण पर अधिक ध्यान केंद्रित कर रहे हैं। जिसके फलस्वरूप कार्यात्मिक डेयरी उत्पादों सहित विशिष्ट डेयरी उत्पाद ,डेयरी क्षेत्र के विकास में अग्रणी भूमिका निभा रहे हैं ।

वसा युक्त खाद्य पदार्थों के प्रति उपभोक्ताओं की स्वीकृति:

डेरी खाद्य पदार्थो के प्रति उपभोक्ताओं की स्वीकृति,संतुष्टि,पोषक तत्व , स्वास्थ्य लाभ ,उत्पाद की गुणवत्ता और मूल्य के साथ सामाजिक मान्यताओं पर मुख्य रूप से निर्भर करती हैं ।

उपभोक्ता स्वीकृति प्रभावित करने वाले कारक :

डेरी उत्पादों की स्वीकृति खाद्य पदार्थो की सुगन्ध ,स्वाद तथा बनावट पर निर्भर करती हैं । भोजन में वसा के प्रयोग द्वारा मोटापे तथा अन्य रोगों की चिंताओं ने उपभोक्ताओं को डेरी उत्पादों के प्रति जगरूक किया है। वसा निर्माण मुख्य से रूप ट्राइग्लिसराइड्स और कोलेस्ट्राल एस्टर की रासायनिक अभिक्रिया द्वारा होता है। मिथाइल किटोन डेयरी उत्पाद में मुख्य रूप से उपस्थित अवयव है जो सुगन्ध का कारक हैं। इस प्रकार वसा भोजन में आहार उर्जा के अतिरिक्त स्वाद ,सुगन्ध और बनावट में भी योगदान देता हैं।

1 घी (Ghee):

घी एक प्रकार का निर्जलीय दूध वसा होता हैं । प्राचीन काल से ,घी वसा के सबसे महत्वपूर्ण स्रोत के रूप में भारतीय भोजन में प्रयोग किया जा रहा हैं । घी, गाय या भैंस के दूध से मक्खन या उनके संयोजन से तैयार किया जाता है जो एक विशेष खुशबु देता है। भारतीय उपमहाद्वीप में यह सबसे व्यापक रूप से इस्तेमाल होने वाला दूध उत्पाद हैं जिसे भोजन पकाने के रूप में भी प्रयोग किया जाता हैं। अधिक समय तक घी के भंडारण से इसके आक्सीकण के कारण इसके स्वाद में विभिन्न बदलाव आता हैं जो इसके स्वाद ,सुगन्ध और

पोषणीय गुण को प्रभावित करते हैं।

2 मक्खन (Butter) :

मक्खन एक वसा युक्त डेरी उत्पाद हैं जो क्रीम के मथने से बनता हैं । मक्खन बनाना एक प्राचीनतम दूग्ध वसा संरक्षण का तरीका हैं जो मुख्यतः दुग्ध वसा, लवण, नमी और दही से बनता हैं। मक्खन में थोड़ी मात्रा में लैंक्टोज ,अम्ल, फास्फोंलिपिड, सूक्ष्म-जीव, एंजाइम औंर विटामिन होते हैं । मीठे क्रीम के मक्खन में विभिन्न प्रकार के अम्ल पर्याप्त मात्रा में मौजूद होते हैं जो स्वाद संवेदना में योगदान देते हैं।

3 मलाई (Cream):

मलाई दूध से प्राप्त सबसे प्रथम अवस्था का वसा युक्त पदार्थ होता हैं जो मीठे क्रीम मक्खन से अलग होने के कारण दूध का जलीय अवस्था औंर वसा गोले की झिल्ली है। सम्पूर्ण क्रीम में बहुत कम मात्रा में जेड़–4 हेक्टेनॉल पाया जाता है। स्वाद के लिए जेड–10,जेड–14,जेड–15 अम्ल आवश्यक होते हैं इसकी मात्रा 0.02 प्रतिशत होती हैं ।

4 खोआ (Khoa) :

खाद्य सुरक्षा एंव मानक नियमों के अनुसार खोया विविध नामों से बेचा जाता है। यह गाय ,भैंस ,बकरी या भेड के दूध को तेजी से गर्म करके सुखाने से बनता है जिसमें वसा की मात्रा 30 प्रतिशत होनी चाहिए जबकि सिट्रिक अम्ल की मात्रा 0.1 प्रतिशत होनी चाहिए। उच्च मात्रा से युक्त वसा खोये को नम और चिकना बनाती है।

5 श्रीखण्ड (Shrikhand) :

कच्चा या स्किम्ड दूध जिसमें दूध वसा मिलाया गया हो उसे श्रीखण्ड कहते है। इसमें फल,मेवा,चीनी,इलाइची,केसर और अन्य मसाले हो सकते है। इसमें किसी प्रकार के कृत्रिम रंग और स्वाद वर्धित पदार्थ नही मिलाये जाते हैं फल श्रीखण्ड में शुष्क पदार्थ भार के आधार पर दूध वसा 7 प्रतिशत से कम नहीं होना चाहिए और दूध प्रोटिन 9 प्रतिशत से कम नहीं होना चाहिए।

6 मिल्क चाकलेट (Milk Chocolate) :

चाकलेट का प्रयोग पोषण से अधिक खुशी के लिए किया जाता है। अच्छी चाकलेट के लिए यह महत्वपूर्ण है कि वह मुँह में आसानी से बिना चिपके जल्दी से घुल जाये। मीठे स्वाद के साथ इसमें कोको की भी जरूरत होती है। अच्छी चाकलेट के लिए मलाईदार दूध की भी भूमिका होती है। दूध वसा का प्रभाव चाकलेट के घुलनशीलता पर भी पडता है।

7 दही (Yogurts) :

दही अलग–अलग नामों औंर रूपों में लोकप्रिय किण्वित दूध उत्पादों में से एक हैं यह कम वसा या बिना वसा का बैंक्टिरीया द्वारा किण्वित दूध उत्पाद हैं।दही स्वास्थ के लिए अत्यन्त लाभदायक पदार्थ है। जिसमें दूध वसा की मात्रा 3 प्रतिशत से कम होती है। इसका प्रयोग लस्सी, छाछ तथा अन्य रूपों में भी किया जाता है।

8 पनीर (Paneer) :

पनीर दूध को विकृत करके बनाया जाने वाला एक पदार्थ हैं जिसका बडें पैमाने पर प्रयोग किया जा रहा है। गहरी तली जा सकने की क्षमता के कारण पनीर का प्रयोग विभिन्न खाद्य पदार्थो को बनाने में किया जा रहा है। इसमें 70 प्रतिशत से कम नम वसा औंर दूध वसा शुष्क पदार्थ के आघार पर 50 प्रतिशत से कम नही होनी चाहिए ।

निष्कर्ष (Conclusion):

मोटापा,रोग तथा उपभोक्ताओं की चिंताओ ने वसा वाले डेरी खाद्य पदार्थो के सेवन में काफी बदलाव लाया है। इसलिए वसा युक्त डेरी खाद्य पदार्थो के उद्योग को चुनौती का सामना करना पड़ रहा है। सही मूल्यांकन और सही नीति का प्रयोग करके उपभोक्ताओं के हित का ध्यान रखते हुए सही उत्पादों को बाजार में लाने की आवश्यकता है। सही वैज्ञानिक पद्धति और जाँच द्वारा हम यह कार्य कर सकते हैं।

04 पारंपरिक भारतीय डेरी उत्पादों के लिए मशीनीकरण : एक परिचय

पी. बर्नवाल[1], अंकित दीप[2], एस. श्रीनिवासा[3], प्रितपाल सिंह[3]

- [1]-वरिष्ठ वैज्ञानिक, डेरी अभियांत्रिकी विभाग, भाकृअनुप-राष्ट्रीय डेरी अनुसंधान संस्थान, करनाल
- [2]-वैज्ञानिक, डेरी अभियांत्रिकी विभाग, भाकृअनुप-राष्ट्रीय डेरी अनुसंधान संस्थान, करनाल
- [3]-शोध छात्र, डेरी अभियांत्रिकी विभाग, भाकृअनुप-राष्ट्रीय डेरी अनुसंधान संस्थान, करनाल

कृषि के साथ–साथ पशुपालन का भारतीय अर्थव्यवस्था में एक अहम् योगदान है। भारत, वैश्विक–दूध उत्पादन में लगभग 18.5 प्रतिशत योगदान के साथ, विश्व में सबसे बड़ा दूध उत्पादक देश बना हुआ है। देश में दूध का उत्पादन वर्ष 2013–14 और 2014–15 के दौरान क्रमशः 137. 69 मिलियन टन और 146.3 मिलियन टन हुआ है। भारतीय समाज में दूध एवं दूध उत्पादों को पोषण के लिए बहुत महत्वपूर्ण माना गया है। दूध की उपलब्धता वर्ष 2014–15 में लगभग 322 ग्राम प्रतिव्यक्ति प्रतिदिन है। सामान्यतः 50–55 प्रतिशत उत्पादित दूध का उपयोग पारंपरिक डेरी उत्पादों को बनाने के लिए किया जाता है। पारंपरिक दूध उत्पादों की भारतीय बाजार में व्यापक लोकप्रियता और स्वीकार्यता के बावजूद, संगठित क्षेत्र अब तक इस बाजार की क्षमता का लाभ नहीं ले पाए हैं। इसके कई कारण हो सकते हैं जैसे उचित तकनीक पर प्रकाशित साहित्य की कमी, वाणिज्यिक उत्पादन के लिए उपयुक्त प्रौद्योगिकी की अपर्याप्तता, उपभोक्ता मांग में नए पैटर्न (तरीके/डिजाईन/जरुरत) की देखभाल करने के लिए उचित पैकेजिंग सामग्री और लेबलिंग विवरण की अपर्याप्तता, अल्प समय में उपयोग करने योग्य होना और गुणवत्ता आश्वासन प्रणाली की कमी इत्यादि। स्वदेशी डेरी उत्पादों के निर्माण की वर्तमान पद्धति (विधि) सदियों से अपरिवर्तित तकनीक पर आधारित है, जिसके अंतर्गत अभी भी इन पारंपरिक दूध उत्पादों को बाजारों में मुख्य रूप से हलवाइयों द्वारा खुले बर्तन, केतली एवं कड़ाहियों आदि में निर्मित किया जाता है जिसमें स्वाभाविक रूप से कई प्रकार की कमियां हैं जैसे ऊर्जा का अकुशल प्रयोग, कम ऊष्मा–स्थानांतरण, खराब स्वास्थ्यपरक, अस्वच्छता, ज्यादा प्रसंस्करण समय लगना और ग्रामीण स्तर पर बने/जुड़े उत्पाद की एकसमान गुणवत्ता का न होना इत्यादि। सामान्यतः दूध उत्पादों की गुणवत्ता हलवाइयों के कौशल पर निर्भर करती है। अच्छे अभियांत्रिकी/इंजीनियरिंग के सिद्धांतों पर आधारित उन्नत डेरी प्रसंस्करण मशीन/तकनीक (लघु/मध्यम स्तर) द्वारा दूध उत्पादों को बनाने पर हलवाइयों की तरह कौशल या कुशल श्रम की आवश्यकता नहीं है। इस प्रकार मूल्य–संवर्धित डेरी उत्पादों के निर्माण के लिए उपकरणों/मशीनों की अच्छी/नई/नवोन्मेषी (इनोवेटिव) डिजाइन का होना जरूरी हो गया है। पारंपरिक विधि से जुड़ी समस्याओं को दूर करने के लिए पिछले लगभग चार दशकों में विभिन्न दूध उत्पादों के मशीनों द्वारा उत्पादन हेतु कई प्रयासों के माध्यम से विभिन्न मशीन और उपकरण बनाए गए हैं। बड़े और व्यवसायिक पैमाने (स्तर) पर इन उत्पादों के निर्माण प्रक्रिया के लिए बैच, अर्द्ध–सतत और सतत उपकरणों/मशीनों को बनाने के लिए समय–समय पर प्रयास होते रहे हैं और आगे भी विकसित उत्पादों की मांग के आधार पर इसके लिए प्रयास होते रहेंगे। मशीनों द्वारा दूध–उत्पादों के उत्पादन से कम कठिन परिश्रम लगता है और स्वच्छ उत्पाद बनाने में मदद मिलती है। सामान्यतः मशीनों द्वारा बने उत्पादों की गुणवत्ता एकसमान होती है।

खोआ, दूध के सांद्रण द्वारा तैयार एक स्वदेशी दूध उत्पाद है जिसका भारत और पड़ोसी देशों में कई मिठाईयों जैसे पेड़ा, बर्फी, गुलाबजामुन, कलाकन्द आदि को बनाने के लिए व्यापक रूप से एक आधार सामग्री के रूप में उपयोग किया जाता है। आम तौर पर, खोआ बनाने के लिए, एक खुले कड़ाही (पैन) में दूध को गर्म करते (खौलाते) हुए दूध के प्रारंभिक आयतन के चौथाई या पांचवे भाग की मात्रा तक कम करते हैं। भैंस के मानकीकृत दूध (5 प्रतिशत वसा) और गाय के दूध (4 प्रतिशत वसा) से औसतन खोआ क्रमशः 21.6 प्रतिशत और 13.5 प्रतिशत तैयार होता है। एक लघु स्तर की अर्द्ध–सतत खोआ बनाने की मशीन विकसित की गई और इसे संशोधित करके 50 लीटर दूध की क्षमता का एक अर्द्ध–सतत

खोआ बनाने की मशीन बनाई गई है जिसमें एक स्क्रेपेड सतह हीट एक्सचेंजर (एसएसएचई) और स्प्रिंग आधारित आगे–पीछे चलने (घूमने) वाले स्क्रेपर्स दो खुले अर्द्ध जैकेटेड (तख्ताबंदीवाला) पैन (बर्तन) से लगाये गए हैं। शोधकर्ताओं द्वारा तख्ताबंदीवाला भाप (जैकेटेड स्टीम) गरम स्टेनलेस स्टील केतली, जिसमें उत्पाद को हिलाने के लिए प्रयोजन होता है, का उपयोग कर खोआ बनाने की अर्द्ध वाणिज्यिक प्रक्रिया विकसित की गई है। खोआ बनाने की पारंपरिक विधि में पेश आ रही समस्याओं में से कुछ पर काबू पाने के लिए, ग्रामीण–स्तर पर संचालन हेतु खोआ बनाने की उपयुक्त इकाई एनडीआरआई, करनाल में विकसित की गई है। स्क्रेपेड सतह हीट एक्सचेंजर (एसएसएचई) के सिद्धांत पर काम करने वाले खोआ बनाने की मशीन का प्रोटोटाइप विकसित किया गया (fp=&1) और पाया गया कि यह छोटे और मध्यम स्तर पर उत्पादन के लिए संतोषजनक परिणाम देता है। खोआ बनाने के लिए, एक शंक्वाकार प्रक्रिया वैट विकसित किया गया है (fp=&2) जिसमें 60 डिग्री के शंकु कोण के साथ एक भाप तख्ताबंदीवाला (स्टीम जैकेटेड) स्टेनलेस स्टील शंक्वाकार वैट होता है।

चित्र–1: तीन चरण पतली फिल्म स्क्रैप सतह ऊष्मा एक्सचेंजर

चित्र–2: शंक्वाकार प्रक्रिया वैट

तीन चरण सतत खोआ बनाने की मशीन, जिसमें तीन तख्ताबंदीवाला (जैकेटेड) सिलेंडरों को कुछ ढ़लान के साथ झरना (कास्केड) व्यवस्था में रखा जाता है, विकसित किया गया है । ढ़लान (स्लोप), प्रसंस्करण के समय, सामग्री की अनुदैर्ध्य दिशा में आवाजाही को सुनिश्चित करता है। राष्ट्रीय डेरी विकास बोर्ड, आनंद ने खोआ के सतत निर्माण के लिए एक झुके हुए स्क्रेपेड सतह हीट एक्सचेंजर (आई–एसएसएचई) को विकसित किया है। इस हीट एक्सचेंजर में भीतरी सिलेंडर, रोटर ड्राइव और बाहरी भाप जैकेट होते हैं। इस प्रणाली में, स्क्रेपर (खुरचनी), ऊष्मा–स्थानांतरण सतह से जमा हुए कणों को हटाने तथा उन्हें वापस द्रव (तरल) के पूल (कुंड) में मिश्रण करने की प्रक्रिया को दोहराता है। आई–एसएसएचई के झुकाव की कोण, उबलते दूध की पूल (कुंड) के गठन (बनने) में सहयोग करता है जो कि खोआ के निर्माण के लिए बहुत ही महत्वपूर्ण है। अल्फा–लावल कम्पनी द्वारा विकसित कोनथर्म कोनवैप स्क्रेपेड सतह हीट एक्सचेंजर प्रणाली को भी खोआ के निर्माण के लिए उपयोग किया गया है।

बर्फी निर्माण के मशीनीकरण के लिए, मौजूदा इकाइयों स्क्रेपेड सतह हीट एक्सचेंजर और स्टीफन प्रसंस्करण केतली को अपना कर, एक मशीनीकृत विधि को विकसित किया गया। इसमें बर्फी के सतत निर्माण के लिए दो चरणों का उपयोग होता है, पतली फिल्म स्क्रेपेड सतह हीट एक्सचेंजर (टीएफ–एसएसएचई) द्वारा खोआ बनाना, 30 प्रतिशत के दर से चीनी का उचित सम्मिश्रण और स्टीफन प्रसंस्करण केतली में चीनी के साथ खोआ को गूंथना। स्टीफन केतली से सीधे,

बर्फी को 250 ग्राम क्षमता के (पहले से साफ और कीटाणुरहित पोलीस्टाइरीन के) कंटेनरों में लगभग 60 डिग्री सेल्सियस पर भरकर प्लास्टिक ढ़क्कनों (लिड्स) से ढ़का जा सकता है । सागर डेयरी, बड़ौदा द्वारा बड़े–स्तर पर मशीनीकृत प्रक्रिया का उपयोग करके केसर पेड़ा बनाया जाता है जिसमें सतत मशीन के द्वारा खोआ का निर्माण, खोआ–चीनी के मिश्रण को प्लैनेटरी मिक्सर में गर्म करना, केसर पेड़ा का यांत्रिक गठन (मैकेनिकल फॉर्मिंग) और पैकेजिंग शामिल है। सुगम डेयरी, बड़ौदा ने खोआ से गुलाबजामुन के निर्माण के लिए, एक मशीनीकृत अर्द्ध सतत प्रणाली को अपनाया है जिसमें खोआ के टुकड़े (पोर्शनिंग) और गोले (बॉल) बनाने की मशीन का उपयोग करना, वसा द्वारा तलना और चाशनी में भिगोने की लाइनों का उपयोग करना शामिल है।

सेठ मंसूखलाल छगनलाल (एसएमसी) डेरी विज्ञान महाविद्यालय, आनंद कृषि विश्वविद्यालय, आनंद द्वारा विकसित एक बैच प्रकार के बहुउद्देशीय स्क्रेपेड सतह हीट एक्सचेंजर का उपयोग "लौकी हलवा " और "गाजर का हलवा " बनाने में किया गया है। रबड़ी–निर्माण के लिए एक वाणिज्यिक विधि विकसित करने का भी प्रयास किया गया है जिसमें स्क्रेपेड सतह हीट एक्सचेंजर द्वारा भैंस के दूध का सांद्रण, और पके क्रीम की जगह कटे हुए छैना या कटे हुए पनीर को, अंतिम उत्पाद की आकर्षक बनावट प्रदान करने के लिए, मिलाया गया है। कुछ शोधकर्ताओं ने पतली फिल्म स्क्रेपेड सतह हीट एक्सचेंजर (टीएफ–एसएसएचई) का उपयोग करते हुए रबड़ी के बड़े–स्तर पर उत्पादन हेतु एक प्रौद्योगिकी विकसित की है।इस विधि में, भैंस के दूध का 6 प्रतिशत वसा पर मानकीकरण करना, पहले से ही गर्म दूध (85 से 90 डिग्री सेल्सियस) में 6 प्रतिशत के दर से चीनी मिलाना, पतली फिल्म स्क्रेपेड सतह हीट एक्सचेंजर (टीएफ–एसएसएचई) में 50 प्रतिशत कुल ठोस पदार्थ तक सांद्रित करना, कटे हुए पनीर को मिलाना, गर्म (80 डिग्री सेल्सियस) स्थिति में ही पैकेजिंग करना और तुरन्त ठंडा करना शामिल है। शेठ एसएमसी डेरी विज्ञान महाविद्यालय, आनंद कृषि विश्वविद्यालय, आनंद द्वारा विकसित बैच प्रकार के स्क्रेपेड सतह हीट एक्सचेंजर (स्टेनलेस स्टील संस्करण) को बासुंदी के निर्माण के मशीनीकरण के लिए कोशिश की गई थी। एनडीआरआई, करनाल में, शंक्वाकार प्रक्रिया वैट और दो चरण पतली फिल्म स्क्रेपेड सतह हीट एक्सचेंजर का उपयोग करके भैंस के मानकीकृत दूध से बासुंदी निर्माण की कोशिश की गई थी। शंक्वाकार प्रक्रिया वैट में 80 से 100 मिनट के प्रसंस्करण समय पर तैयार किये हुए बासुंदी की बनावट (बॉडी), गठन (टेक्सचर), दिखावट और समग्र स्वीकार्यता अच्छी पाई गई है। एक बैच टाइप हलवासन मेकिंग मशीन (बीएचएम) को शेठ एसएमसी डेरी विज्ञान महाविद्यालय,, आनंद कृषि विश्वविद्यालय, आनंद द्वारा बनाया गया है। द्रव (तरल) फिल्म स्क्रेपेड सतह हीट एक्सचेंजर (एलएफ–एसएसएचई) एवं बैच प्रकार के बहुउद्देशीय एसएसएचई के उपयोग से खीर निर्मित किया गया है। एनडीआरआई, करनाल में, तीन चरण स्क्रेपेड सतह हीट एक्सचेंजर (एसएसएचई) से खोआ ,कलाकंद, गाजर पाक, रबड़ी , बासुंदी तथा बर्फी , आदि दूध उत्पादों के सतत निर्माण की विधि विकसित की गई है। इन–लाइन प्रणाली से खोआ, खीर, घी (क्रीम या मलाई से), घी (बटर या मक्खन से), बर्फी, रबड़ी ,बासुंदी एवं खीर आदि दूध उत्पादों को बनाने की विधि विकसित की गई है। बहुउद्देशीय शंक्वाकार प्रक्रिया वैट (कोनिकल प्रोसेस वैट) का विकास किया गया है।

पनीर और छैना, भारत के दो प्रमुख परंपरागत ऊष्मा (गर्मी) और अम्ल (एसिड) द्वारा जमने वाले दूध उत्पाद हैं। पनीर के निर्माण के लिए प्रक्रिया–अनुकूलन (प्रोसेस–ऑप्टिमाइजेशन) के लिए काफी अनुसंधान कार्य किये गए हैं। चलती हुई रबर वाहक (कन्वेयर) पर सटीक पीएच नियंत्रण द्वारा दूध को वांछित रूप से जमाया (कर्डलिंग किया) जा सकता है। यह प्रणाली दूध और एसिडुलेंट (वह पदार्थ जो किसी अन्य पदार्थ के साथ मिलकर उसकी अम्लता को बढ़ा देता है) के प्रवाह विनियमन (रेगुलेशन), मिश्रण और जमने में सहायता करता है। एक ड्रम छानने की इकाई (यूनिट) पर थक्के को छाना (फिल्टर किया) जाता है। मट्ठा और निर्जलीकृत (डीवाटर्ड) दही को बर्तनों (हॉपर्स) में एकत्रित किया जाता है। एक धीमी गति से घूमने वाले दबाव माध्यम (प्रणाली) से आंशिक रूप से निर्जलीकृत (डीवाटर्ड) दही को अलग से दबाव प्रदान करते हैं।

छैना को बड़े–स्तर पर विभिन्न भारतीय व्यंजनों जैसे रसगुल्ला, सन्देश, चम–चम, रसमलाई, राजभोग, छैना–मुर्की और कई इस तरह के उत्पादों को बनाने के लिए एक आधार और पूरक पदार्थ के रूप में उपयोग किया जाता है। छैना बनाने के लिए एक प्रोटोटाइप मशीन (क्षमता : 40 किलो छैना

प्रतिघंटा) विकसित किया गया है। यह मशीन विभिन्न मशीन पुरजों (घटकों) से मिलकर बना है जैसे एक संतुलन टैंक, इंजेक्शन कक्ष, कुंडली धारक (होल्डिंग क्वायल), प्रशीतन –कक्ष और छननी (स्ट्रेनर)। इस प्रणाली में, गाय के मानकीकृत दूध को पंप द्वारा एक संतुलन टैंक (250 लीटर प्रति घंटा की दर) से एक इंजेक्शन कक्ष में भेजते हैं जहाँ पाक लाइव भाप (भाप–दर : 65 किलो प्रतिघंटा ; भाप दबाव : 1 किग्रा प्रतिवर्गसेमी) को सीधे (प्रत्यक्ष रूप से) दूध में इंजेक्ट किया जाता है। भाप पूरी तरह से दूध में संघनित हो जाता है और तापमान को 90 से 95 डिग्री सेल्सियस तक बढ़ा देता है। इसके बाद, दूध को खट्टा मट्ठा के साथ संपर्क में लाया जाता है जिसकी मात्रा को दूध के प्रवाह की दर के अनुपात में हाथ से (मैनुअली) नियंत्रित किया जाता है। दूध की पूरी जमावट की सुविधा के लिए, दूध और मट्ठे के मिश्रण को एक कुंडल–धारक या होल्डिंग क्वायल (8 मी. × 10 मिमी.) में से होकर परिचालित करते हैं। मट्ठा के साथ जमे हुए उत्पाद को एक डबल तख्ताबंदीवाला ठंडा टैंक में पंप की सहायता से भेजते हैं जहां यह कमरे के तापमान तक ठंडा हो जाता है। अंत में, उत्पाद को एक यांत्रिक झरनी/छननी (मेकेनिकल स्ट्रेनर) अर्थात् एक डबल तख्ताबंदीवाला झुके हुए छलनी में से होकर गुजारते हैं जहां अच्छी तरह पानी निकल जाता है और यह शुष्क हो जाता है। छैना (55 से 65 प्रतिशत नमी के साथ) को बाह्य–द्वार (आउटलेट) से निकालकर टोकरी (बास्केट) में एकत्र किया जाता है। निष्कासित मट्ठा को, बाद के उपयोग के लिए, एक अलग टैंक में स्थानांतरित कर देते हैं। कृषि और खाद्य इंजीनियरिंग विभाग, भारतीय प्रोद्योगिकी संस्थान (आईआईटी), खड़गपुर में, इसी समरूप सिद्धांत पर छैना के मशीनीकृत उत्पादन के लिए एक प्रक्रिया को विकसित किया गया है। इसमें, एक पाइपनुमा ऊष्मा (ट्यूबलर हीट) एक्सचेंजर में दूध को 95 डिग्री सेल्सियस तापमान तक अप्रत्यक्ष रूप से गर्म करना, 70 डिग्री सेल्सियस तक ठंडा करना, एक ऊर्ध्वाधर ट्यूब में गर्म साइट्रिक एसिड (70 डिग्री सेल्सियस) के साथ सतत जमावट, दूध–एसिड मिश्रण को पूरी तरह जमने तक रखे रखना, दोहरे खोल वाली टोकरी सेंट्रीफ्यूज से मट्ठा को लगातार बहाव के रूप में अलग करना और 4 डिग्री सेल्सियस की शीतलन के लिए छैना की परतों पर ठंडे पानी का प्रत्यक्ष छिड़काव करना, शामिल है। रसगुल्ला के उत्पादन की प्रक्रिया के मशीनीकरण के लिए विभिन्न कार्यकर्ताओं ने सफल प्रयास किया है। एनडीआरआई, करनाल में, सतत रूप में छैना को गूंथना (नीडिंग) और छैना गेंद (बॉल) बनाने के लिए एक प्रोटोटाइप मशीनीकृत इकाई को विकसित किया गया है जिसमें पेंचनुमा वाहक (स्क्रू-कन्वेयर) का उपयोग कर छैना को गूंथना, एक काटने के उपकरण से 10 ग्राम की गांठ (लम्प) में काटना और एक परिक्रामी (घूमनेवाली) सिलेंडर में गेंद (बॉल) का गठन (बनना) शामिल है। इस मशीन को बेहतर बनाने के लिए प्रयास किये जा रहें हैं ।

सन्देश के सतत–उत्पादन के लिए एक एकल पेंच निकाल बहिर्वेधक (स्क्रू वेंटेड एक्स्ट्रूडर) को विकसित किया गया है। सन्देश के मशीनीकृत उत्पादन के लिए, शोधकर्ताओं ने विभिन्न प्रसंस्करण मानकों को अनुकूलित (ऑप्टिमाइज) किया है जैसे मिश्रित करना, गूंथना तथा छैना और चीनी के मिश्रण को पकाना। मट्ठा की जल निकासी के लिए टोकरी सेंट्रीफ्यूज का उपयोग किया गया था। छैना और चीनी को मिश्रित करने के लिए, 60 चक्कर/मिनट (आरपीएम) की चाल पर प्लेनेटरी मिक्सर को 5 मिनट के लिए चलाया गया। छैना–चीनी मिश्रण को गूंथने (मिलाने) के लिए, एक स्टेनलेस स्टील स्क्रू नीडर (गूंथने का उपकरण) का उपयोग किया गया था। छैना–चीनी मिश्रण को मिलाने के बाद, नीडर (गूंथने का उपकरण) के हॉपर में डाला गया था। पेंच के सिरे और सिरे के ढ़क्कन के बीच की दूरी (गैप) को सिरे के ढ़क्कन को घुमाकर समायोजित (एडजस्ट) कर सकते हैं। छैना–चीनी के मिश्रण को इस बीच की दूरी (गैप) में से ले जाकर गूंथने (मिलाने) का काम किया गया। नीडर (गूंथने का उपकरण) स्क्रू (पेंच) को 75 चक्कर/मिनट (आरपीएम) पर घुमाया गया। सन्देश को सतत बनाने की विधि में, उत्पाद की अंतिम गुणवत्ता को तीन महत्वपूर्ण पैरामीटर (छैना की प्रारंभिक नमी, पकाने का तापमान और पकाने का समय) निर्धारित करते हैं। रिस्पांस सतह पद्धति (आरएसएम) का उपयोग कर, प्रक्रिया मापदंडों के अनुकूलित (ऑप्टिमाइज) मान, 75 डिग्री सेल्सियस (पकाने का तापमान), 4.6 मिनट (पकाने का समय) और 48 प्रतिशत प्रारंभिक नमी; प्राप्त किये गए हैं। इसके बाद, छैना और चीनी के मिश्रण को पकाने के लिए, एक एकल पेंच निकाल बहिर्वेधक (स्क्रू वेंटेड एक्स्ट्रूडर) को विकसित किया गया था जिसको गाय के दूध से सन्देश के सतत–उत्पादन के लिए यंत्रीकृत विधि के साथ एकीकृत किया जा सकता था।

किण्वित दूध दुनिया के कई क्षेत्रों में मानव आहार का एक महत्वपूर्ण हिस्सा है। भारतीय उप महाद्वीप में भी, किण्वित दूध उत्पादों जैसे दही, लस्सी और मक्खन–दूध का लोगों के आहार में एक महत्वपूर्ण स्थान है। अब कई संगठित डेरियां, यंत्रीकृत और मानकीकृत विधियों को अपनाकर दही को तैयार कर रहीं हैं। दही के निर्माण के लिए रिवर्स ऑस्मोसिस (आरओ) की उपयुक्तता का अध्ययन करने पर, 1.5 गुना रिवर्स ऑस्मोसिस (आरओ) सांद्रण द्वारा बनाई गई दही की गुणवत्ता बेहद संतोषजनक पाई गई थी। लस्सी के निर्माण के लिए यंत्रीकरण के साथ औद्योगिक प्रक्रिया विकसित हुई है। लस्सी के किण्वन और कीटाणुरहित (एसेप्टिक) पैकेजिंग के बाद अति उच्च तापमान (यूएचटी) प्रसंस्करण द्वारा लस्सी की रखरखाव–अवधि (शेल्फ लाइफ) में वृद्धि पाई गई है।

श्रीखंड के औद्योगिक उत्पादन के लिए एक पूरी तरह मशीनीकृत/सतत प्रक्रिया को भी विकसित किया गया है। इस प्रक्रिया में, मलाई निकाले हुए दूध को टोकरी सेंट्रीफ्यूज में 1100 चक्कर/मिनट (आरपीएम) पर चलाकर मट्ठा को अलग करके चक्का तैयार किया जाता है। इसके बाद, प्लेनेटरी मिक्सर में इस चक्का को चीनी और प्लास्टिक क्रीम के साथ मिलाया जाता है। श्रीखंड को चक्का में, अलग–अलग परिचालन की स्थिति जैसे तापमान, स्क्रैपर गति और कुल ठोस के स्तर पर, गर्म किया जाता है। भारतीय भोजन में घी का एक बहुत ही महत्वपूर्ण स्थान है। देश में उत्पादित घी का लगभग 90 प्रतिशत पारंपरिक विधि द्वारा बनाया जाता है। अतीत में ऊर्जा प्रबंधन के बारे में जागरूकता ने घी निर्माण के लिए कुशल और सतत तरीकों को विकसित करने के लिए शोध कार्यों को प्रेरित किया है। इसमें, सीरम और वसा अवस्था को अलग करने के लिए एक तेल पृथक्कारक (अलग करने वाला) या स्क्रेपेड सतह हीट एक्सचेंजर्स के उपयोग शामिल हैं। इन दोनों प्रक्रियाओं से ऊर्जा की बचत होती है और एक तुलनीय उत्पाद भी प्राप्त होता है। इस उपकरण/मशीन में, एनडीआरआई, करनाल में विकसित एक कुशल मक्खन पिघलाने वाले उपकरण/मशीन को एकीकृत किया गया है। एक सतत घी बनाने के संयंत्र के रूप में काम करने के लिए, एक स्क्रेपेड सतह गिरने वाली (फालिंग) फिल्म हीट एक्सचेंजर को सहायक उपकरणों, जैसे एक पिघलाने वाले वैट और मैकेनिकल विशुद्धक, के साथ विकसित किया गया है।

निष्कर्ष

पारंपरिक भारतीय डेरी उत्पादों की बड़े स्तर पर उच्च लाभ गुंजाइश (मार्जिन) और उच्च निर्यात की संभावनाएं हैं। इस डेरी प्रसंस्करण क्षेत्र के आधुनिकीकरण हेतु, लंबे या ज्यादा रखरखाव– अवधि (शेल्फ लाइफ) और उच्च गुणवत्ता वाले उत्पादों की बड़े पैमाने पर वाणिज्यिक उत्पादन के लिए, नवोन्मेषी सोच, मशीनीकरण और स्वचालन हेतु तत्काल कदम उठाने की जरूरत है। स्वदेशी डेरी उत्पादों के निर्माण करने के मशीनीकरण में किए गए कई अभिनव/नवोन्मेषी प्रयासों के बावजूद, इन नवोन्मेषी तकनीकों का डेरी उद्योगों द्वारा उपयोग बहुत ही सीमित है। इसके लिए कई कारण हो सकते है। पहले से ही चली आ रही तकनीकों को छोड़कर नवोन्मेषी तकनीकों को अपनाने में कुछ संदेह की स्थिति भी एक कारण हो सकता है। सामान्यतः ऐसा देखा गया है कि विदेश से बनी किसी भी वस्तु पर अच्छी होने की अंध–प्रशंसा व अंध–विश्वास होता है। स्थानीय स्तर पर विकसित प्रौद्योगिकियों को अपनाने की इच्छा धीरे–धीरे कम ही हो रही है। एक अन्य कारण ज्यादा समय लेने वाली प्रक्रिया भी है जिसमें भारी खर्च भी जुड़ा होता है। किसी मशीन की स्केलिंग करना (क्षमता बढ़ाना) भी एक जटिल काम होता है। इस क्षेत्र में, संस्थानों से प्रौद्योगिकियों का औद्योगिक स्तर पर हस्तांतरण में कमी, और तकनीकी ऑपरेटरों की कमी भी एक वजह हो सकती है। विभिन्न संगठित क्षेत्रों के लिए प्रौद्योगिकियों का तेजी से हस्तांतरण और उन तकनीकों को अपनाने के लिए लोगों/समाज में विश्वास के निर्माण की आवश्यकता है। उद्योग और अनुसंधान संगठनों के बीच संपर्कों/संबंधों को मजबूत करने की जरूरत है। इस क्षेत्र के सर्वांगीण विकास के लिए डेरी उद्योग, असंगठित क्षेत्र, उपकरण/मशीन निर्माता और अनुसंधान संस्थानों के सामूहिक प्रयास की आवश्यकता है। नई संरक्षण तकनीकियों को अपनाकर पारंपरिक भारतीय डेरी उत्पादों के रखरखाव– अवधि (शेल्फ लाइफ) में सुधार लाने की काफी गुंजाइश मौजूद है। विभिन्न पारंपरिक भारतीय डेरी उत्पादों के निर्माण के लिए, ऊर्जा कुशल (उच्च दक्षता के) नए उपकरणों/मशीनों को विकसित करने की आवश्यकता है। जहाँ कहीं भी संभव हो, पारंपरिक भारतीय डेरी उत्पादों के निर्माण के लिए, ऊर्जा के वैकल्पिक स्रोतों के उपयोग की संभावनाओं को खोजना और उपयोग करना चाहिए।

05 किसानों के लिए खेतीबाड़ी से सम्बंधित सामान्य एवं उपयोगी जानकारी

उत्तम कुमार, राकेश कुमार, मगन सिहं, हरदेव राम, विजेन्द्र कुमार मीना, राजेश कुमार मीणा, मालूराम यादव एवं दीपा जोशी

चारा अनुसंधान एवं प्रबंधन केन्द्र,भाकृअनुप-राष्ट्रीय डेरी अनुसंधान संस्थान, करनाल

किसानों के लिए प्रश्नोत्तरी के रूप में खेतीबाडी से सम्बंधित सामान्य एवं उपयोगी जानकारी दी जा रही है जो निम्न प्रकार है–

1– प्रश्न–धान की खेती में कौन से जैव उर्वरकों का प्रयोग उपयोगी है ?

उत्तर–पी0एस0बी0, नील हरित शैवाल तथा एजोला जैसे जैव उर्वरक अधिक उपयोगी होते है।

2– प्रश्न–जैव उर्वरक के प्रयोग में क्या करें, जिससे अधिक लाभ हो ?

उत्तर–रासायनिक उर्वरकों के साथ जैव उर्वरक का प्रयोग न करें तथा प्रयोग की एक्सपायरी तिथि के बाद अधिक लाभ नहीं मिलता है।

3– प्रश्न–खेत बंजर की स्थिति में है कई वर्षो से कुछ भी नहीं होता है क्या करें ?

उत्तर–कृषि वानिकी अपनाएं। औषधीय पौधों की खेती कर सकते है।

4– प्रश्न–ऊसर को कैसे सुधारे तथा ऊसरीली जमीन के लिए धान की प्रजाति बतायें ?

उत्तर–जिप्सम का प्रयोग सबसे उपयुक्त है। मिट्टी की जॉच के बाद औसतन 150 से 250 कुन्तल प्रति हेक्टेयर जिप्सम का प्रयोग उपयोगी है। हरी खाद का प्रयोग भी लाभकारी है।

5– प्रश्न–अधिक धान उत्पादन के लिए क्या आवश्यक है ?

उत्तर–बीज शोधन, समय से रोपाई तथा सिंचाई। खेत की निगरानी आवश्यक है। जिससे रोग एवं कीट का पता लगता रहे। आरम्भ में ही रोकथाम आवश्यक है।

6– प्रश्न–धान में जस्ते का प्रयोग कब और कैसे करें ?

उत्तर–औसतन 5 किग्रा जिंक सल्फेट 21 फीसदी का 20 किग्रा यूरिया के साथ मिलाकर लगभग 500 लीटर पानी में घोलकर प्रति हेक्टेयर छिड़काव अधिक लाभदायी है।

7– प्रश्न–उर्वरकों के प्रयोग में क्या सावधानी बरतें ?

उत्तर–किसी भी खेत या फसल में जिंक सल्फेट तथा डी.ए.पी. का प्रयोग एक साथ नहीं करना चाहिए। यूरिया का प्रयोग दो या तीन बार में लाभकारी है।

8– प्रश्न–संकर धान का बीज अगले वर्ष के लिए रख सकते हैं ?

उत्तर–नहीं, संकर धान का बीज हर साल नया खरीदें। संकर धान का बीज एक बार ही बुवाई के लिए प्रयोग किया जाता है।

9– प्रश्न–ढ़ैंचा बोना है प्रति है. बीज की मात्रा क्या होगी ?

उत्तर–हरी खाद हेतु बीज की मात्रा 45–50 कि0ग्रा0 प्रति हेक्टेयर पर्याप्त होती है। इसी प्रकार ढैंचा बीज उत्पादन हेतु 20–25 किग्रा0 प्रति हेक्टेयर की दर से बीज पर्याप्त होता है। ऊसर भूमि में बीज की मात्रा बढ़ाकर सवा गुना कर लें।

10–प्रश्न–अरहर के बीज का उपचार कैसे करें ?

उत्तर–एक किलोग्राम बीज को 2 ग्राम थीरम तथा एक ग्राम कार्बेन्डाजिम से उपचारित करें अथवा 4 ग्राम ट्राइकोडर्मा एक ग्राम कार्बेन्डाजिम से उपचारित करें लाभ होगा।

11–प्रश्न–अरहर में जैव उर्वरक का प्रयोग कैसे करें ?

उत्तर–एक पैकेट राइजोबियम कल्चर (200 ग्राम) 10 किग्रा बीज के उपचार के लिए प्रयोग करना चाहिए।

12–प्रश्न–अरहर की बुवाई कब करें ?

उत्तर–अरहर की प्रजातियों की बुवाई अलग–अलग समय पर बोई जाती है, किन्तु बहार आजाद, मालवीय की बुवाई जुलाई के प्रथम सप्ताह में करें।

13—प्रश्न—अरहर में एकीकृत कीट प्रबन्धन कैसे करें ?

उत्तर—अरहर में जब शतप्रतिशत फूल बन जाये और फली बनने लगे उस समय मोनोक्रोटोफास 0.04 प्रतिशत का घोल बनाकर छिड़काव करें। द्वितीय छिड़काव के बाद निम्बोली का 5 प्रतिशत का घोल छिड़के।

14—प्रश्न—अरहर की फसल में यदि उकठा बार—बार हो रहा है तो क्या करें ?

उत्तर—जिस खेत में उकठा रोग का प्रकोप अधिक हो, उस खेत में 3—4 साल तक अरहर की फसल नहीं लेना चाहिए।

15—प्रश्न—अरहर में फली बेधक से बचाव कैसे करें ?

उत्तर—फूल आने के बाद मोनोक्रोटोफास 36 ई0सी0 या डाइमेथियट 30 ई0सी0 का प्रयोग करें।

16—प्रश्न—अरहर की अधिक उपज प्राप्त करने में किस उर्वरक का महत्व है ?

उत्तर—अरहर के लिए सल्फर अधिक महत्वपूर्ण है अतः सिंगल सुपर फास्फेट का प्रयोग अधिक लाभदायी होता है।

17—प्रश्न—सूत्रकृमि से कैसे बचाव करें। प्रायः पूरी फसल नष्ट हो रही है ?

उत्तर—जड़ों के पास से फसलें सूखने लगती है समझो सूत्रकृमि का प्रकोप है। इसका उपाय है गर्मी में गहरी जुताई।

18—प्रश्न—अरहर में क्या सिंचाई आवश्यक है ?

उत्तर—नमी की स्थिति को देखते हुए सिंचाई की आवश्यकता पड़ती है वैसे फलियँ बनने के समय अक्टूबर माह में सिंचाई अति आवश्यक है।

19—प्रश्न—नील गाय से फसल को कैसे बचायें ?

उत्तर—गाय के ताजे गोबर में लहसुन तथा मदार के रस को मिलाकर खेत के किनारे—किनारे छिड़काव कर नीलगाय को भगाया जा सकता है।

20—प्रश्न—मूंग की फसल में पत्तियों पर पीले चकत्ते पड़ जाते है क्या करें ?

उत्तर—यह एक रोग है जिसे पीला चित्रवर्ण कहते है तथा सफेद मक्खी से फैलता है। मक्खी को मारने के लिए डायमिथोएट 30 ई0सी0 1 लीटर प्रति हेक्टेयर का छिड़काव प्रभावी होता है।

21—प्रश्न—मूंग की फसल में यूरिया का प्रयोग कब करें ?

उत्तर—बुवाई के समय उर्वरकों का प्रयोग 15 किग्रा नत्रजन के रूप में करें तथा यूरिया का प्रयोग फली बनने के समय 2 प्रतिशत घोल के रूप में अधिक लाभकारी है।

22—प्रश्न—मूंगफली के बीज उपचार हेतु किस रसायन का प्रयाग करें ?

उत्तर—बीज (गिरी) को थीरम 2.0 ग्राम और 1.0 ग्राम कार्बेन्डाजिम 50 प्रतिशत घुलन चूर्ण के मिश्रण से 2 किग्रा बीज शोधन करना चाहिए।

23—प्रश्न—मूंगफली में क्या सिंचाई की आवश्यकता पड़ती है कब करें ?

उत्तर—मूंगफली में दो सिंचाई अति आवश्यक है पहली जब पेगिंग हो तथा फली बनते समय।

24—प्रश्न—मूंगफली की खुदाई का बेहतर समय कब होता है ?

उत्तर—खुदाई फसल के पूर्ण पकने पर ही करना चाहिए, इससे दाना घटिया श्रेणी का नहीं होता है।

25—प्रश्न—मूंगफली के खेत में दीमक बहुत लगते है क्या उपाय करें ?

उत्तर—दीमक सूखे की स्थिति में जड़ों तथा फलियों को काटती है। इसके उपचार हेतु क्लोरोपायरीफॉस 4 लीटर मात्रा प्रति हेक्टेयर की दर से प्रयोग करें।

26—प्रश्न—मूंगफली का टिका रोग अक्सर खेतों में लग रहा है उपाय बतायें ?

उत्तर—खड़ी फसल पर जिंक मैंगनीज कार्बानमेट 2 किग्रा या जिनेव 75 प्रतिशत घुलनशील चूर्ण का प्रयोग करें। टिक्का रोग जो पत्तियों पर दाग के रूप में आता है, नष्ट हो जायेगा।

27—प्रश्न—संकर मक्का की खेती के लिए कितना बीज प्रयोग करें ?

उत्तर—प्रति हेक्टेयर 18 किग्रा बीज उचित होता है।

28—प्रश्न—विगत कई वर्षो से धान—गेहूँ की खेती कर रहा हूँ? अनुभव में आ रहा है कि गेहूँ की उपज कम होती जा रही है।

उत्तर–धान गेहूँ का फसल चक्र अधिक पोषक तत्व की मॉग करता है। जिससे भूमि कमजोर हो जाती है। इसलिए गेहूँ की उपज कम हो रही है। अतः गेहूँ की कटाई के बाद तथा धान की रोपाई के पहले खेतों में हरी खाद का प्रयोग तथा औसतन 10 कुन्तल गोबर की खाद का प्रयोग करें।

29–प्रश्न–धान के बुवाई के लिए एस.आर.आई. विधि क्या है ?

उत्तर–अधिक उत्पादन प्राप्त करने की विधि है जिसमें नर्सरी से कम समय (10 दिन में) के पौध की रोपाई 25x25 सेमी की दूरी पर एक ही पौधा रोपकर की जाती है।

30–प्रश्न–खेत का रकबा कम है गुजर बसर नहीं हो पाता क्या करें ?

उत्तर–कृषि उद्यमिता अपनाएं। वर्मी कम्पोस्ट या नाडेप कम्पोस्ट तैयार कर बिक्री कर सकते है बहुंत मॉग है। औद्यानिक एक सफल रास्ता है। उसे अपनाएं।

31–प्रश्न–किसी प्रदेश में आत्मा चल रही है। इससे कैसे लाभ पायें ?

उत्तर–अच्छी बात है कि आपको आत्मा की जानकारी है। आत्मा की परियोजनाओं पर प्रदेश व जनपद के सभी किसानों का हक है। आप सीधे आत्मा सचिव से मिले तथा इच्छुक परियोजना से लाभ पायें।

32–प्रश्न–खेती एक घाटे का धंधा है, इसे लाभकारी कैसे बनाएं ?

उत्तर–सरल और सस्ता उपाय है। विविधीकरण को अपनाएँ अर्थात अपने खेतों पर उद्यानिकी, मुर्गीपालन, पशुपालन, मधुमक्खीपालन तथा मशरूम की खेती आदि अपनाएं।

33–प्रश्न–खेती के लिए सबसे अच्छी मिट्टी कौन सी होती है ?

उत्तर–दोमट मिट्टी में सभी प्रकार की फसलें अच्छी उपज देती है।

34–प्रश्न–स्वस्थ मृदा क्या है ?

उत्तर–स्वस्थ मृदा का मतलब है कि उसमें फसल उगाने की ताकत के साथ साथ आवश्यक पोषक तत्वों की भरपूर मात्रा हो और नमी रोकन की क्षमता हो।

35–प्रश्न–मिट्टी में मुख्य पोषक तत्व कौन–कौन से है?

उत्तर–मुख्य तत्व तीन होते है 1. नत्रजन, 2. फास्फोरस, 3. पोटाश। इन्हीं से उत्पादन में वृद्धि होती है।

36–प्रश्न–देशी खाद के प्रयोग से मुख्य लाभ क्या है ?

उत्तर–मृदा स्वस्थ होती है तथा लम्बे समय तक उत्पादन मिलता रहता है।

37–प्रश्न–अच्छी देशी खाद कैसे बनायें ?

उत्तर–नाडेप–विधि द्वारा, कम्पोस्ट के गडढे तैयार करके तथा वर्मीकम्पोस्ट तैयार कर उत्तम गुणवत्ता की देशी खाद तैयार कर सकते हैं ।

38–प्रश्न–फसल में चूहे लग रहे है क्या करें ?

उत्तर–जिंक सल्फाइड या अल्यूमिनियम फास्फाइड की गोली बना कर खेत या मेड़ पर रखे।

39–प्रश्न–सूक्ष्म–पोषक तत्व क्या है ?

उत्तर–फसलों को जिन पोषक तत्वों की कम मात्रा (1 पीपीएम) की आवश्यकता होती है उसे सूक्ष्म पोषक तत्व कहते हैं जैसे – जिंक, लोहा, कॉपर, बोरान एवं मैग्नीज, मालीबिडनम।

40–प्रश्न–क्या देशी खाद में सूक्ष्म पोषक तत्व पाये जाते है ?

उत्तर–हाँ, देशी खाद में मुख्य पोषक तत्व के साथ–साथ सूक्ष्म पोषक तत्व भी पाये जाते हैं।

41–प्रश्न–जिंक की कमी से क्या उत्पादन घटता है ?

उत्तर–जिंक की कमी से पौधों की पत्तियों पर सफेद एवं भूरी धारियाँ दिखायी देती है। इसकी कमी से सभी फसलों का उत्पादन घट जाता है।

42–प्रश्न–जिंक की कमी को कैसे जाने ?

उत्तर–किसी भी पोषक तत्व की जानकारी के लिए मिट्टी परीक्षण कराना अति आवश्यक है। पुरानी पत्तियों पर पीले–पीले धब्बे जो बाद में भूरे रंग के हो जाते हैं।

43–प्रश्न–सल्फर व जिंक का कल का घोल रखा है वह खराब तो नहीं हुआ होगा ?

उत्तर–जी नहीं।

44–प्रश्न–मिट्टी की जॉच कहाँ से और कब करायें ?

उत्तर–प्रदेश के सभी जनपद मुख्यालयों पर मिट्टी परीक्षण प्रयोगशाला स्थापित होती है, जहाँ से जाँच करायी जा सकती है। फसल बोने के पहले खाली खेत से मिट्टी 6 इंच

गहरे (ऊपर से नीचे तक) गडढे से लेकर थैली में भरकर नाम, पता लिखकर मिट्टी परीक्षण केन्द्र पर भेजे। इसके लिए विकास खण्ड पर सम्पर्क करें।

45—प्रश्न—मिट्टी परीक्षण पर व्यय कितना आता है ?

उत्तर—मिट्टी परीक्षण में मुख्य पोषक तत्व जानने की फीस औसतन रू0 5.00—10.00 तथा सूक्ष्म पोषक तत्व सहित अधिकतम 50 रूपये का खर्च आता है तथा यदि कोई सीमान्त किसान अपने खेत की मिट्टी का नमूना प्रयोगशाला स्वयं लेकर जाता है तो उसका परीक्षण प्राथमिकता के आधार पर निःशुल्क करते हुए उर्वरक एवं खाद प्रयोग करने की संस्तुति प्रदान की जाती है।

46—प्रश्न—मिट्टी परीक्षण में क्या केवल पोषक तत्व की जानकारी ही दी जाती है ?

उत्तर—नहीं, जानकारी के साथ—साथ फसलवार उर्वरकों की संस्तुति भी की जाती है। काम एक और लाभ अनेक।

47—प्रश्न—उत्तम कोटि का बीज क्या है ?

उत्तर—अनुवाँशिक रूप से शतप्रतिशत शुद्ध बीज को उत्तम बीज कहते है।

48—प्रश्न—बुवाई के लिए कौन से बीज का प्रयोग करें ?

उत्तर—प्रमाणित बीज बुवाई के लिए उपयुक्त होता है। किसान भाई आधारीय बीज—1 एवं आधारीय बीज—2 से भी अच्छा उत्पादन प्राप्त कर सकते हैं।

49—प्रश्न—बीज शोधन कैसे करें तथा क्या लाभ है ?

उत्तर—प्रमाणित बीज शोधित बीज होता है, किन्तु जिन बीजों का शोधन नहीं हुआ हो उन्हें थीरम अथवा कार्बेन्डाजिम से शोधित करें, जिससे बीमारियों एवं रोगों से मुक्ति मिल सके।

50—प्रश्न—बीज उत्पादन में रोगिंग क्या है ?

उत्तर—बीज उत्पादन की प्रक्रिया में नियत प्रजाति के उत्पादन में अन्य प्रजाति के पौधे को उखाड़कर खेत से बाहर करना रोगिंग कहलाता है, जिससे बीज प्रजाति की शुद्धता बनी रहती है।

51—प्रश्न—क्या कई प्रकार के बीज होते हैं ?

उत्तर—जी हाँ मुख्यतया चार प्रकार के बीज होते है। 1. प्रजनक बीज, 2. आधारीय बीज, 3. प्रमाणित बीज 4. सत्यापित बीज।

52—प्रश्न—बीजों की गुणवत्ता कहाँ जाँची जाती है ?

उत्तर—प्रदेशों में लगभग हर जिले में बीज विश्लेषण केन्द्र होता है जहाँ से बीजों की गुणवत्ता की जॉच की जाती है।

53—प्रश्न—बीज खरीदते समय किस बात का ध्यान रखें ?

उत्तर—बीज क्रय करते समय रसीद जरूर प्राप्त करें तथा बीज के बैग पर टैगिंग को जरूर देखें।

54—प्रश्न—बीजोत्पादन क्या किसान कर सकता है ?

उत्तर—जी हॉ, सर्वप्रथम बीजोत्पादन हेतु पंजीकरण करायें तत्पश्चात बोये जाने वाली फसल की प्रजाति सुनिश्चित करते हुए बीज उत्पादन तकनीकी प्रक्रिया को अपनायें।

55—प्रश्न—हाइब्रिड बीज क्या है ?

उत्तर—अधिक उत्पादन प्राप्त करने हेतु शोध द्वारा बीजों के गुणो में विकास कर तैयार किये गये बीज को हाइब्रिड बीज या संकर बीज कहते है।

56—प्रश्न—हाइब्रिड बीज को अगले वर्ष के लिए प्रयोग किया जा सकता है ?

उत्तर—प्रयास करें कि हाइब्रिड का भण्डारण कृषक अपने स्तर पर न करें क्योंकि इनमें अंकुरण क्षमता बाह्य कारणों के कारण प्रभावित हो जाती है, जिससे जमाव घट जाता है। अतः किसान भाई प्रत्येक वर्ष नये हाइब्रिड बीज का उपयोग करें।

57—प्रश्न—जैविक खाद कहाँ मिल सकती है ?

उत्तर—क्षेत्रीय मृदा परीक्षण प्रयोगशाला, निकटतम सहकारी समिति और किसी अच्छे बीज विक्रेता के पास मिल जायेगी। साथ ही इफको किसान सेवा केन्द्रों से सम्पर्क कर सकते हैं।

58—प्रश्न—संस्तुत प्रजातियाँ क्या हैं ?

उत्तर—शोध के उपरान्त सरकारी तन्त्र से अनुमोदित प्रजातियाँ ही संस्तुत प्रजातियाँ कहलाती हैं।

59—प्रश्न—सत्यापित बीज (टी0एल0) का प्रयोग लाभदायी है अथवा नहीं ?

उत्तर—सत्यापित बीज अथवा टी0एल0 का उत्पादन भी प्रमाणित बीज की तरह किया जाता है तथा बीज के बैग पर संस्था का टैग लगा होता है, इसलिए सत्यापित बीज

अथवा टी0एल0 का प्रयोग लाभदायी होता है।

60—प्रश्न—प्रदेश की बीज प्रमाणीकरण संस्था कहाँ होती है ?

उत्तर—प्रदेश बीज प्रमाणीकरण संस्था ज्यादातर प्रदेश की राजधानी में स्थापित होती है।

61—प्रश्न—बीज का जमाव कम हो अथवा बीज खराब हो इसकी सूचना किसे दें ?

उत्तर—जिला कृषि अधिकारी या उप कृषि निदेशक को खराब बीज की सूचना अवश्य दें, जिससे उचित कार्यवाही की जा सके।

62—प्रश्न—जैव उर्वरक क्या है ?

उत्तर—कल्चर ही जैव उर्वरक है। यह जीवित सूक्ष्म जीवाणुओं से बना हुआ एक प्रकार का टीका है जैसे राइजोबियम, पी0एस0बी0 तथा एजैटोबैक्टर।

63—प्रश्न—पोटाश की खाद (म्यूरेट आफ पोटाश) का प्रयोग कब और कैसे करें ?

उत्तर—हल्की मृदा में (बलुई, बलुई दोमट) पोटाश का प्रयोग दो या तीन बार में लाभदायी होता है, क्योंकि हल्की मृदा में पोटाश पानी में घुलकर जड़ों के काफी नीचे चला जाता है।

64—प्रश्न—विभिन्न प्रकार की खाद एवं उर्वरक मौजूद है इन सबके प्रयोग का समय बतायें ?

उत्तर—हरी खाद बुवाई से डेढ़ माह पूर्व, कम्पोस्ट व वर्मी बुवाई से एक माह पहले खेत में भली भॉति मिला देना चाहिए। उर्वरकों (नत्रजनधारी, फास्फेटिक एवं पोटाश) का प्रयोग बुवाई के समय इस प्रकार करना चाहिए कि नत्रजनधारी की आधी मात्रा फास्फेट एवं पोटाश की पूरी मात्रा बुवाई के समय खेत में डालें तथा नत्रजन की शेष आधी मात्रा टाप ड्रेसिंग के रूप में खड़ी फसल में डालें। सूक्ष्म पोषक तत्वों वाली उर्वरक का प्रयोग मिट्टी जाँच के आधार पर बुवाई के समय खेत में डालना चाहिए।

65—प्रश्न—धान के खेतों में नील हरित शैवाल के प्रयोग से क्या लाभ है ?

उत्तर—यूरिया की आधी बचत होती है तथा खेत ऊसर होने से बचा रहता है।

66—प्रश्न—जैव उर्वरक के प्रयोग के बारे में बताएं ?

उत्तर—दलहन वाली फसलों में राइजोबियम कल्चर का प्रयोग, धान्य फसलों में एजटोबैक्टर का प्रयोग तथा सभी फसलों में फास्फेट की उपलब्धता हेतु पी0एस0बी0 का प्रयोग लाभदायी है। 10 किग्रा बीज के शोधन हेतु 1 पैकेट (200 ग्राम) तथा भूमि उपचार में प्रति एकड़ 20 पैकेट (04 किग्रा) कल्चर 40 किग्रा छनी मिट्टी में मिलाकर प्रयोग करना चाहिए।

67—प्रश्न—खेती में रासायनिक खादों के लगातार डालने से जो उर्वरा शक्ति कमजोर हुई है उसके समाधान का उपाय बताएं ?

उत्तर—मिट्टी परीक्षण के आधार पर रासायनिक खादों के साथ खेत में जैविक खाद जैसे गोबर, वर्मीकम्पोस्ट, हरीखाद, जैव उर्वरक तथा फसलों के अवशेष आदि का प्रयोग अवश्य करें।

68—प्रश्न—ऊसरीली मिट्टी बनने का कारण बताएं ?

उत्तर—ऊसर बनने के लिए मुख्य रूप से सिंचाई जल तथा मृदा प्रोफाइल में कड़ी परत के होने से सिंचाई करने पर यह समस्या आती है तथा जीवाँश की कमी भी ऊसर बनने में सहयोग देती है।

69—प्रश्न—क्या कारण है कि उर्वरकों के प्रयोग के बावजूद भी उपज नहीं बढ़ रही है ?

उत्तर—उर्वरक उपयोग द्वारा उपज में वृद्धि न होने के प्रमुख कारण है – उर्वरकों का असन्तुलित उपयोग, द्वितीयक एवं सूक्ष्म पोषक तत्वों की कमी, अनुचित जल प्रबन्धन तथा उर्वरकों की संदिग्ध गुणवत्ता है।

70—प्रश्न—उर्वरकों के प्रयोग से अधिकतम लाभ कैसे मिले?

उत्तर—1. मिट्टी परीक्षण के आधार पर संतुलित उर्वरकों का प्रयोग किया जाए। 2. फास्फोरसधारी उर्वरकों को कूँड में ही डालना चाहिए। 3. दलहनी फसलों में राइजोवियम कल्चर का प्रयोग अवश्य किया जाए। 4. गंधक की कमी वाले क्षेत्रों में सिंगल सुपर फास्फेट तथा अमोनियम सल्फेट को वरीयता के आधार पर दिया जाए। 5. नाइट्रोजनधारी उर्वरकों की टाप ड्रेसिंग में सावधानी बरती जाए अर्थात दोपहर बाद टाप ड्रेसिंग उर्वरक को यथा संभव मिट्टी में मिला देना चाहिए। 6. उन्नत खेती की संस्तुतियों का अनुपालन किया जाए।

71–प्रश्न–फसलों में मुख्य पोषक तत्वों की कमी के क्या लक्षण हैं मौटे तौर पर बतायें ?

उत्तर–नत्रजन की कमी होने पर पौधे बौने रह जाते है, पुरानी पत्तियाँ पहले पीली तथा बाद में सूखने लगती हैं तथा उत्पादन घट जाता है।

72–प्रश्न–सूक्ष्म पोषक तत्वों की कमी का उपचार कैसे करें ?

उत्तर–1. जिंक की कमी होने पर – जिंक सल्फेट 21 प्रतिशत अथवा 33 प्रतिशत का प्रयोग करें। 2. लोहा की कमी के लिए – फेरस सल्फेट 19 प्रतिशत। 3. ताँबा की कमी के लिए – कॉपर सल्फेट 25 प्रतिशत। 4. बोरान की कमी के लिए –बोरेक्स सल्फेट 11 प्रतिशत। 5. मैगनीज की कमी के लिए –मैगनीज सल्फेट 26 प्रतिशत। 6. मालिब्डेनम की कमी के लिए –अमोनियम मालिब्डेट 54 प्रतिशत का प्रयोग करें।

73–प्रश्न–डी0ए0पी0 में कितना प्रतिशत नत्रजन एवं फास्फेट होता है ?

उत्तर–डी0ए0पी0 में 18 प्रतिशत नत्रजन एवं 46 प्रतिशत फास्फेट की मात्रा उपलब्ध होती है।

74–प्रश्न–जिंक सल्फेट कई ग्रेड के हैं कौन सा उपयोगी है ?

उत्तर–जिंक मुख्य रूप से 21 प्रतिशत तथा 33 प्रतिशत के उपलब्ध हैं। 21 प्रतिशत का जिंक ज्यादा कारगर है। इसका प्रयोग आसान है क्योंकि यह रवेदार होता है, जबकि 33 प्रतिशत का जिंक पाउडर के रूप में होता है।

75–प्रश्न–कई बार उर्वरकों के प्रयोग का असर फसलों पर नहीं दिखता है। क्या करें ?

उत्तर–गुणवत्ता विहीन उर्वरक तथा प्रयोग विधि उचित न होने पर उर्वरकों का असर फसलों पर नहीं आता है। इसलिए आवश्यक है कि गुणवत्तायुक्त उर्वरक हीं खरीदें तथा दुकान से रसीद अवश्य प्राप्त करें। असर न होने पर इसकी शिकायत जिला कृषि अधिकारी को अवश्य करें।

76–प्रश्न–उर्वरकों का प्रयोग बेहतर ढंग से कैसे हो ?

उत्तर–उर्वरकों के प्रकार के अनुसार ही प्रयोग किया जाना चाहिए। ध्यान रखें कि डी0ए0पी0 एवं म्यूरेट आफ पोटाश बुवाई के समय कूँड में ही बो देना चाहिए जबकि यूरिया का प्रयोग खड़ी फसल में छिड़ककर (टाप ड्रेसिंग) के रूप में करने से बेहतर लाभ प्राप्त होता है।

77–प्रश्न–रोटावेटर चलाने के लिए कितने हार्स पावर ट्रैक्टर की आवश्यकता होती है ?

उत्तर–कम से कम 40 हार्स पावर ट्रैक्टर की आवश्यकता होती हैं।

78–प्रश्न–संस्तुत खाद की मात्रा किस उर्वरक से आपूर्ति करें ?

उत्तर–फास्फेट की पूर्ति सिंगल सुपर फास्फेट से पोटाश को म्यूरेट आफ पोटाश तथा नत्रजन को यूरिया से देना चाहिए। यदि फास्फेट की पूर्ति डी0ए0पी0 से की जा रही है तो बुवाई के समय 200–250 किग्रा0 प्रति हेक्टेयर जिप्सम देना लाभदायी होता है।

79–प्रश्न–एकीकृत पोषक तत्व प्रबन्धन क्या हैं ?

उत्तर–इसे आई0पी0एन0एम0 से भी जाना जाता है। इस विधा में संतुलित उर्वरकों का प्रयोग फसल की आवश्यकता के अनुसार किया जाता है। जिसमें जैविक खाद का प्रयोग आवश्यक होता है। जिससे मृदा का स्वास्थ्य टिकाऊ रह सके।

80–प्रश्न–खेतों में फसलों के अवशेष को जलाना हानिकारक है अथवा लाभदायी है ?

उत्तर–फसलों के अवशेषों को खेत में ही मिला देना लाभदायी है। अवशेषों को खेत में कभी भी न जलायें। यह एक हानिकारक प्रक्रिया है।

81–प्रश्न–उर्वरकों की गुणवत्ता खराब होने पर बिक्री केन्द्र या दुकान पर क्या कार्यवाही होती है ?

उत्तर–बिक्री केन्द्र का लाइसेन्स निरस्त किया जाता है तथा एफ0आई0आर0 जैसी कानूनी कार्यवाही भी सम्भावित रहती है।

82–प्रश्न–जिंक सल्फेट का प्रयोग डी0ए0पी0 के साथ या एस0एस0पी0 के साथ कर सकते है ?

उत्तर–जी नहीं, इसका प्रयोग एक साथ करने से लाभ नहीं मिल पाता है।

83–प्रश्न–नाडेप कम्पोस्ट में कितना पोषक तत्व रहता है ?

उत्तर–यह अन्य कम्पोस्ट की तुलना में जल्दी तैयार हो जाता है तथा लगभग 1.0 प्रतिशत नत्रजन, 1.5 प्रतिशत फास्फोरस तथा 1.0 प्रतिशत पोटाश के साथ अन्य आवश्यक सूक्ष्म पोषक तत्व भी पाये जाते है।

84—प्रश्न—वर्मीकम्पोस्ट की कितनी मात्रा उपयोगी होती है ?

उत्तर—सामान्य तौर पर 3 से 5 टन प्रति हेक्टेयर वर्मीकम्पोस्ट खेती के लिए उपयोगी होता है।

85—प्रश्न—सिंचाई क्यों आवश्यक है ?

उत्तर—फसलों के जीवन को पूर्ण करने के लिए तथा खेत से पोषक तत्वों को पौधों में पहुंचाने के लिए सिंचाई आवश्यक है।

86—प्रश्न—बौछारी सिंचाई क्या है ?

उत्तर—वर्षा जल की भाँति जल को छिड़ककर देने की क्रिया को बौछारी सिंचाई कहते है जिसे स्प्रिंकलर द्वारा किया जाता है।

87—प्रश्न—स्प्रिंकलर से सिंचाई करने से क्या लाभ है ?

उत्तर—पानी की कमी होने पर भी अधिक क्षेत्र में जल की उपलब्धता की जा सकती है तथा समय से सिंचाई को पूरा किया जाता है।

88—प्रश्न—सिंचाई की विधियां बतायें ?

उत्तर—मुख्य रूप से प्रदेश में सतही विधि, भूमिगत विधि, स्प्रिंकलर विधि एवं थोड़े से क्षेत्रफल में ड्रिप विधि से सिंचाई की जाती है।

89—प्रश्न—सिंचाई महंगी होती जा रही है इसे कम करने का उपाय बतायें ?

उत्तर—सिंचाई की स्प्रिंकलर विधि एवं ड्रिप विधि को अपनायें इसमें कम खर्च आता है तथा सतही विधि में नाली तथा कुलाबे की सफाई पर ध्यान रखें।

90—प्रश्न—जल निकास क्यों आवश्यक है ?

उत्तर—मृदा की रचना एवं संरचना बिगड़ने न पायें तथा जल प्लावन की स्थिति न हो इसके लिए जल निकास आवश्यक है।

91—प्रश्न—सिंचाई व्यवस्था न होने पर खेती कैसे करें ?

उत्तर—सिंचाई की व्यवस्था न होने पर वर्षा आधारित खेती जिसमें मुख्य रूप से मोटे अनाज की खेती सफलतापूर्वक की जा सकती है। वर्तमान में औषधियुक्त पौधों की खेती भी प्रचलित हो रही है।

92—प्रश्न—सिंचाई की कम व्यवस्था होने पर कब सिंचाई आवश्यक होती है ?

उत्तर—फसलों की क्रान्तिक अवस्था पर ही सिंचाई करे जैसे गेहूँ में 22 दिन पर सिंचाई आवश्यक है। यदि दो सिंचाई उपलब्ध है तो पहली सिंचाई 22 दिन पर तथा दूसरी सिंचाई फूल आने पर करें। यदि तीन सिंचाई उपलब्ध है तो कल्ले आते समय सिंचाई करें।

93—प्रश्न—सिंचाई जल बहकर नष्ट न हो इसके लिए उपाए बतायें ?

उत्तर—खेत समतल रखें तथा विभिन्न प्रकार की भूमि में ढाल की प्रतिशतता सुनिश्चित करें जैसे दोमट मिट्टी में 0.2 से 0.4 प्रतिशत तक का ही ढाल रखें।

94—प्रश्न—आई0पी0एम0 क्या हैं ?

उत्तर—एकीकृत नाशी जीव प्रबन्धन में रोगं, खरपतवार एवं कीटनाशियों के नियंत्रण हेतु समन्वित प्रयास की एक विधा है। जिसमें गर्मी की जुताई से लेकर जैव कीटनाशियों का प्रयोग किया जाता है।

95—प्रश्न—कीटनाशियों के प्रयोग पर क्या छूट अनुमन्य है ?

उत्तर—विभिन्न परिस्थिति योजना अन्तर्गत जैव रसायनों एवं इकोफ्रेन्डली रसायनों पर 50 प्रतिशत तक अनुदान अनुमन्य है।

96—प्रश्न—एल्डरिन एक प्रभावी दवा है, किन्तु उपलब्ध नहीं हो रही है ?

उत्तर—कुछ रसायनों का दुष्प्रभाव पर्यावरण पर पड़ता है, उनमें से एल्डरिन भी एक है। इसलिए इसे प्रतिबन्धित कर दिया गया हैं

97—प्रश्न—क्या फसलवार आई0एन0एम0 होता है ?

उत्तर—जी हाँ मुख्य फसलों के आई0एन0एम0 तैयार हैं। उसी क्रम में प्रयोग करना चाहिए।

98—प्रश्न—कीटनाशी रसायनों के प्रयोग को कैसे प्रभावी बनायें ?

उत्तर—कीटनाशी रसायनों की प्रयोग मात्रा एवं प्रयोग विधि पर विशेष ध्यान देकर प्रभावी बनाया जा सकता है।

99—प्रश्न—कीटनाशी रसायनों के दुष्प्रभाव से कैसे बचें ?

उत्तर—खास तौर से सब्जियों, फलों तथा अनाजों की कटाई के समय कीटनाशी रसायनों का प्रयोग सावधानीपूर्वक किया जाना चाहिए। सब्जियों की तुड़ाई के

एक सप्ताह पहले प्रयोग बन्द कर देना चाहिए।

100–प्रश्न–कीटनाशी रसायनों के नये नये मिश्रण बाजार में उपलब्ध हैं। क्या यह लाभदायी है ?

उत्तर–जी हाँ कीटनाशी रसायनों के मिश्रण ज्यादा प्रभावी होते है। इनके प्रयोग से कई प्रकार के रोगों की एक साथ रोकथाम हो जाती है।

101–प्रश्न–कीटनाशी रसायनों की गुणवत्ता जाँच कैसे करें ?

उत्तर–सरकार द्वारा कीटनाशी रसायनों की गुणवत्ता की जाँच हेतु किसानों को सीधे अधिकृत किया है कि वे नमूने लेकर गुणनियंत्रण प्रयोगशाला को सीधे प्रेषित कर सकते हैं तथा परिणाम के आधार पर जिला कृषि रक्षा अधिकारी को सूचित करें। इसमें दण्ड का भी प्राविधान है।

102–प्रश्न–कीटनाशी रसायनों का प्रयाग किस उपकरण द्वारा ज्यादा प्रभावी है ?

उत्तर–फ्लैट फैन नाजिल स्प्रेयर का प्रयोग अत्यधिक प्रभावी होता है।

103–प्रश्न–कीटनाशियों का प्रयोग कब नहीं करना चाहिए ?

उत्तर–तेज धूप में तथा हवा चलते समय, बारिश की सम्भावना होने के समय कीटनाशियों का प्रयोग नहीं करना चाहिए।

104–प्रश्न–बीज शोधन में किस रसायन का प्रयोग उचित होता है ?

उत्तर–थीरम तथा कार्बेन्डाजिम रसायन का प्रयोग उपयुक्त होता है तथा जैव रसायन के रूप में ट्राइकोडर्मा का प्रयोग बीज शोधन के लिए उपयुक्त है।

105–प्रश्न–दीमक को नियंत्रित करने हेतु क्या करें ?

उत्तर–बवेरिया बेसियाना बायो पेस्टीसाइड का पयोग सबसे अधिक प्रभावी है। इसके अतिरिक्त क्लोरोपायरीफास के प्रयोग से दीमक को नियंत्रित किया जा सकता है।

106–प्रश्न–ट्राइकोडर्मा एवं बवेरिया बेसियाना कहाँ से प्राप्त करें ?

उत्तर–राजकीय कृषि बिक्री केन्द्रों एवं कृषि रक्षा केन्द्रों पर ट्राइकोडर्मा एवं बवेरिया बेसियाना 90 प्रतिशत अनुदान पर उपलब्ध है।

107–प्रश्न–रोटावेटर किस कार्य में प्रयोग किया जाता है ?

उत्तर–रोटावेटर द्वारा एक ही बार में खेत की तैयारी अच्छी प्रकार हो जाती है।

108–प्रश्न–लेजर लेवलर क्या है। क्या प्रदेश में उपलब्ध है ?

उत्तर–खेत को समतल करने हेतु आधुनिक कृषि यन्त्र है। जो प्रदेश की समस्त भूमि संरक्षण इकाईयों पर उपलब्ध है।

109–प्रश्न–कोनोवीडर क्या है ?

उत्तर–एस0आर0आई0 पद्धति से धान की खेती में खरपतवार नियंत्रण हेतु प्रयोग किया जाने वाला यह कृषि यन्त्र है।

110–प्रश्न–सीड कम फर्टीड्रिल से क्या क्या कर सकते है ?

उत्तर–सीड कम फर्टीड्रिल से एक साथ खाद एवं बीज की बुवाई निश्चित गहराई पर कर सकते है।

06 पशु पालन एवं जैव प्रौद्योगिकी

सुनीता मीणा[1], चंदन कुमार[2], राज कुमार[3]

- [1]वैज्ञानिक, भाकृअनुप - राष्ट्रीय डेरी अनुसंधान संस्थान, करनाल
- [2] सहायक प्राध्यापक, माधव विश्वविद्यालय, आबु रोड, राजस्थान
- [3]शोध सहयोगी, भाकृअनुप - राष्ट्रीय डेरी अनुसंधान संस्थान, करनाल

कृषि आदिकाल से भारतीयों की जीवन रेखा रही है। यह हमारी अर्थव्यवस्था का एक महत्वपूर्ण अंग है जो राष्ट्रीय आय में 18.5 प्रतिशत हिस्सेदारी रखती है। कृषि की राष्ट्रीय निर्यात में 15 प्रतिशत की हिस्सेदारी है तथा सकल घरेलु उत्पाद में एक चौथाई का योगदान है। देश का दो तिहाई रोजगार कृषि पर निर्भर करता है। हमारे देश में पशुओं की संख्या 18.5 करोड. गाय, 9.8 करोड. सूअर तथा 48.9 करोड. मुर्गी हैं जो विश्व में पशुओ की संख्या में क्रमश.प्रथम, प्रथम व पंचम स्थान पर हैं।

भारत में जहां मिश्रित खेती सामान्य है, पशुपालन और डेरी व्यवसाय, कृषकों की जीविका के लिए प्रमुख है एवं कृषि एक अरब से अधिक जनसंख्या का पोषण, खाद्य सुरक्षा और आजीविका निर्वाह में महत्वपूर्ण भूमिका निभा रही है। आज भारत 11.7करोड. टन दूध प्रति वर्ष उत्पादित कर के विश्व मे सबसे बडे दूध उत्पादक देश के रूप में उभर कर सामने आया है। भारत में भैंस एक प्रमुख दूध उत्पादक पशु है जो कि देश के कुल दूध उत्पादन में लगभग 50 प्रतिशत से अधिक का योगदान कर रही है। गायों की तुलना में यह अच्छा डेरी पशु है जो कि कम पोषकमान वाले अनाजों (मोटा चारा) में भी अच्छा दूध उत्पादन करता है। यह रोग प्रतिरोधक क्षमता वाला तथा उच्चतर दूध वसा प्रतिशत वाला पशु है। यद्धपि इस जाति के साथ इसकी निम्न प्रजनन क्षमता, देर से परिपक्वता, लम्बे पश्च प्रसव अवधि, तथा निम्न मदचक्र अभिव्यजकंता एक प्रमुख समस्या है। इन सारी समस्याओं के निवारण के लिए मानवजाति प्रयासरत है एंव जैव प्रौद्योगिकी, जो कि विगत दशकों में विकसित जीव विज्ञान की एक नवीन लेकिन उत्पादन की दृष्टि से महत्वपूर्ण शाखा है, का प्रमुख योगदान है। मानव जाति के उत्थान में जैव तकनीकों का उपयोग स्वास्थ, भोजन, कृषि उद्योगों, पशु विज्ञान, कृषि विज्ञान, जैव उर्जा,रसायनिक उद्योगों में किया जा रहा है।

भैसों एंव गायों में अन्य समस्याओ के अलावा निम्न प्रजनन क्षमता का होना एक प्रमुख चिंता का विषय है। इन समस्याओं से निपटने के लिए सहायक प्रजनन तकनीक जो की जैव प्रौद्योगीकी की देन है, का होना एक वरदान के समान है। सहायता प्रजनन पशुओं में मुख्यतः दो तरह से किया जा सकता है।

1.कृत्रिम गर्भाधान तकनीक हिमिकृत शुक्राणुओ द्वारा

2.कृत्रिम गर्भाधान तकनीक निषेचित अंडों (डिम्ब) द्वारा

प्रथम तकनीक में शुक्राणओं को मादा के जननागों में मदकाल के समय कृत्रिम गर्भाधान बंदूक (ए0 प्इ0 गन0)द्वारा डालते हैं जिससे मादा गर्भ को प्राप्त करती है। इसके लिये नर पशु जो कि मानित होते हैं का वीर्य निकाल कर विशेष वीर्य विस्तारक में विस्तारित करते हैं एवं भिन्न–भिन्न प्रक्रियाओ से गुजरने के बाद तरल नाइट्रोजन में–196 डिग्री सेल्सियस तापमान में संरक्षित रखते हैं। यह संरक्षित शुक्राणु सुप्त अवस्था में तरल नाइट्रोजन की उपस्थिति में सालों तक रखे जा सकते हैं। इन हिमिकृत शुक्राणुओं को गुनगुने पानी में हिमद्रवित कर तुरंत ही मादा के जननांगो में मदकाल के दौरान छोड़ दिया जाता है। निश्चित अवधि के बाद मादा गर्भवती हो जाती है एवं एक स्वस्थय बछड़े को जन्म देती है।

अन्य जैव प्रोद्यौगीकी तकनीक में मादा पशुओं के अंडाशय से अंडे को निकाल लेते है। यह अंडे जीवित अथवा मृत मादा से प्राप्त किये जा सकते है। जीवित मादा से प्रेरित कर अंडाशय से एक से ज्यादा अंडे का निर्माण किया जाता है जिसकी प्राप्ति मदकाल के दौरान मादा के जननांगो की धुलाई विशेष बफर से कर के किया जाता है। मृत पशुओं के ओवरी को बुचरखाना से प्राप्त किया जा सकता है। इन अंडाशय को बुचर से प्रयोगशाला में विशेष बफर में रखकर लाया जाता है। फिर इन अंडाशयो से सुई के द्वारा अंडे को खोज कर निकाला

जाता है एवं सूक्ष्मदर्शी में विभिन्न प्रकार के अंडे व उसके गुणवत्ता का निर्धारण किया जाता है। इन अंडो को विशेष वातावरण में विशेष बफर जिसमें रक्त के जैसी गुणवत्ता होती है, में रखा जाता है। ऐसा करने से अंडे परिपक्व हो जाते है एवं निषेचन के लिए तैयार हो जाते हैं। निषेचन के लिए हिमीकृत शुक्राणुओं का उपयोग किया जाता है। हिमीकृत शुक्रणु, तुरंत स्खलित शुक्रणओं की तुलना में इन अंडो को निषेचित करने की ज्यादा क्षमता रखते हैं। निषेचन के लिए शुक्राणुओं को अंडे के साथ विशेष वातावरण मे रखा जाता है। दो दिनों पश्चात निषेचित अंडे में विभाजन शुरू हो जाता है एवं क्रमशः सोलह कोशिकाओं का निर्माण करता है। फलस्वरूप यह भ्रूण का निर्माण करता है। इस भ्रूण को मादा के गर्भाशय में मदकाल के दौरान विशेष जैव तकनीक द्वारा छोड़ देते है फलस्वरूप मादा गर्भवती हो जाती है एवं मादा एक विशेष अवधि के पश्चात बच्चे के जन्म देती है।

जैव प्रौद्योगिकी की मदद से मादा एवं नर के प्रजनन कोशिका की अनुपस्थति में भी समान प्रकार के नर एवं मादा का निर्माण किया जा सकता है। इस प्रक्रिया को क्लोनिंग कहते है। इसी प्रकिया से राष्ट्रीय डेरी अनुसंधान संस्थान के वैज्ञानिको ने हेंडगाइडेड तकनीक द्वारा भैस का क्लोन तैयार किया है। इस तकनीक में हाथ के मार्गदर्शन से एक सुक्ष्म ब्लेड की सहायता से सूक्ष्मदर्शी में देखते हुए अंडाणु का एक हिस्सा जिसमें केंद्रक होता है, काट देते हैं और एक दूसरी कोशिका जो किसी भी अंग से लिया गया हो का केंद्रक निकाल देते है। इस कोशिका के केंद्रक को अंडाणु (केंद्रक रहित्) में डाल देते है। एक जटिल जैव प्रोधौगीकी प्रक्रिया के दौरान निषेचित अण्डाणु को प्रेरित कर विभाजन शुरू किया जाता है। विभाजन के पश्चात भ्रूण का निर्माण होता है एवं परिपक्व भ्रूण का स्थानांतरण मादा के गर्भाशय में मदकाल के दौरान कर देते है। इस प्रक्रिया से क्लोन्ड पशु का निर्माण होता है।

जैव प्रोद्योगीकी द्वारा अन्य पशु फायदे

1) जैव प्रोद्योगीकी द्वारा उच्च कोटि के आनुवांशिक गुणों वाले पशुओं का तेजी से उत्पादन किया जा सकता है।
2) जैव प्रोद्योगीकी द्वारा भेड़ उद्योग में बहुप्रज जीनों का समावेश गुणसूत्र में किया जा सकता है जिससे की अच्छे गुणवत्ता वाले उनों का निमार्ण हो।
3) जैव प्रोद्योगीकी द्वारा आनुवंशिक रूप से कमजोर या आनुवांशिक दोष युक्त पशुओं की जॉच की जा सकती है एवं ये प्रजन्न नीतियों के लिए महत्वपूर्ण होंगे।
4) जैव प्रोद्योगीकी द्वारा रोगों से बचने के लिए नए टीको का विकास किया जा सकता है। इन टीको को सस्ते, प्रभावी, ताप असंवेदी, बनाया जा सकता हैं।
5) जैव प्रोद्योगीकी के द्वारा पशुओं के रोग की पहचान समय से पूर्व की जा सकती है। इसके लिए बहुलक श्रृंखला अभिक्रिया(पी0 सी0 आर0) तकनीक काफी सवेंदनशील है।

जैव प्रोद्योगीकी के ये फायदे निम्न मात्र है। इन फायदो के अलावा काफी फायदे स्थापित किये जा चुके हैं। अतः जैव प्रोद्योगीकी भारत एवं विश्व के पशु कृषकों के लिए एक वरदान साबित हुआ है। जो कृषकों की आमदनी को सार्थक रूप से बढ़ा सकते है। पर इसके लिए कृषकों का जागरूक होना बहुत ही अनिवार्य है ताकि वैज्ञानिकों द्वारा स्थापित की गई तकनीकियों को कृषक अपना सकें एवं इसका फायदा अपने विकास में ही नहीं अपितु देश के विकास में हो।

07 दानेदार खोआ का तीन चरण स्क्रैप सतह ऊष्मा एक्सचेंजर द्वारा यंत्रीकृत उत्पादन

अंकित दीप, पी. बर्नवाल, ए.के. डुडेजा
डेरी अभियांत्रिकी विभाग, भाकृअनुप-रा.डे.अनु.सं., करनाल

परिचय

भारत का दूध उत्पादन में विश्व के लगभग 18.5 प्रतिशत उत्पादन के साथ, प्रथम स्थान है। भारत में दूध का वार्षिक उत्पादन, वर्ष 2013–14 में 137.69 मिलियन टन की तुलना में वर्ष 2014–15 में 6.26 प्रतिशत की वृद्धि के साथ 146.3 मिलियन टन दर्ज किया गया। तरल–दुध की रखरखाव अवधि (षेल्फ लाइफ) दिनों तक ही सीमित है और सम्पूर्ण उत्पादित दूध का इस सीमित अवधि मे तरल दूध के रूप में सेवन नही किया जा सकता, इसलिए दूध को विभिन्न दुग्ध उत्पादों और उप–उत्पादों में परिवर्तित किया जाता है। डेरी उद्योग की बढ़ोत्तरी के बावजूद, दूध की बड़ी मात्रा को असंगठित डेरी क्षेत्रों और ग्रामीण घरेलू स्तर पर उपयोग किया जाता है। संगठित क्षेत्र द्वारा कुल दूध उपयोग में से, स्वदेशी डेरी उत्पादों को, तरल दूध के बाद, भारत की सबसे अधिक बिकने वाली और सबसे लाभदायक प्रक्रम के रूप में पाया गया है। ये स्वदेशी डेरी उत्पाद, 55 प्रतिशत दूध के उपयोग को दर्शाते हैं जिसमें दही, मक्खन, घी, खोआ, छेना, राबड़ी, पनीर और मिठाई की किस्में आदि उल्लेखनीय हैं। कई पारंपरिक डेरी उत्पादों विशेष रूप से खोआ आधारित मिठाई (बर्फी, पेड़ा, पन्तूआ/पंटूआ, गुलाबजामुन आदि), छेना और छेना आधारित मिठाई (रसगुल्ला, रसमलाई आदि), पनीर, खीर और दही आदि का भारत में विशाल बाजार मौजूद है और इसके उपभोक्ता बड़ी मात्रा में भारत और विदेशों में भी हैं। अन्य लोकप्रिय स्वदेशी डेरी/दुग्ध उत्पादों जैसे राबड़ी, बासुन्दी, श्रीखण्ड, कुंदा और पालदा पायसम आदि मुख्यतः विशेष क्षेत्रों तक सीमित रहे हैं।

स्वदेशी दूध उत्पादों का निर्माण या बनना, ज्यादातर परंपरागत आदतों, पसंद और विषिष्ट क्षेत्र या राज्य की संस्कृति द्वारा शुरू किया गया था। यद्यपि ये उत्पाद बहुत ही स्वादिष्ट और प्रसिद्ध हैं लेकिन इनके निर्माण की प्रक्रिया जटिल है। इन उत्पादों को ज्यादातर असंगठित रूप में छोटे पैमाने पर हलवाइयों (स्थानीय मिठाई निर्माताओं) द्वारा तैयार किया जाता था। हलवाई के स्तर पर दूध के उत्पाद की गुण्वत्ता बहुत ज्यादा अच्छी नहीं होती क्योकि वे खुले वातावरण (ज्यादातर दूषित या अस्वच्छ माहौल) में इसे तैयार करते हैं, और बिना पैक किये ही खुले तौर पर दुकान में रखते हैं जो उत्पाद की गुणवत्ता में कमी करता है। वे स्वच्छ संचालन (हैंडलिंग), भंडारण और वितरण के बारे में ज्यादा परवाह नहीं करते हैं। उत्पाद के रासायनिक संघटन (संरचना), बनावट (टेक्सचर) और स्वाद में भी, दुकान से दुकान, जगह से जगह और यहां तक की बैच से बैच में भी व्यापक रूप से भिन्नता पाई जाती है। असंगठित उत्पादन, उत्पाद की सूक्ष्म–जैविक (माइक्रोबियल) और रासायनिक गुणवत्ता को बुरी तरह प्रभावित करता है। इन उत्पादों का संचालन (हैंडलिगं) और भंडारण भी मुश्किल होता है। अब जनसँख्या (आबादी) बड़ी संख्या में शहरी क्षेत्र की ओर जा रही है जिसकी वजह से शहरी क्षेत्र में दूध उत्पादों की मांग में वृद्धि हो रही है, जबकि उत्पादन ग्रामीण या दूरदराज के क्षेत्रों तक ही सीमित है। इन उत्पादों के बड़े पैमाने (स्तर) पर निर्माण हेतु, इनके उत्पादन (बनाने के लिए), भरने ओर पैकेजिंग के लिउ उचित मशीनीकरण की आवश्यकता है। खोआ की गुणवत्ता को बाजार में अलग–अलग पाया जाता है और इसकी तीन प्रमुख किस्में (प्रकार) हैं: पिंडी, धाप और दानेदार। इन किस्मों के रासायनिक संघटन (संरचना), संवेदी विशेषताओं और अंतिम–उपयोग में भी भिन्नता पाई जाती है। खोआ की ये किस्में दिल्ली के बाजार में पहुँचती (प्राप्त होती) हैं, जो आज देश में सबसे बड़ी खोआ का विपणन (मार्केटिंग) केंद्र है। इस प्रकार के खोआ की गुणवत्ता और कीमत (मूल्य) भी अलग–अलग (भिन्न) होती है। इन सभी किस्मों के खोआ की मांग रहती है जो कि विशिष्ट

प्रकार के मिठाई (स्वीट्स) को बनाने के लिए आवश्यक हैं (तालिका:1)।

तालिका 1: विभिन्न प्रकार के खोआ की सकल संरचना और इनसे बनने वाली मिठाई

खोआ–प्रकार	सकल संरचना		तैयार होने वाले विशिष्ट स्वीट्स (मिठाई)
	वसा, %	नमी, %	
पिंडी	21–26	31–33	बर्फी, पेड़ा
धाप	20–23	37–44	गुलाब जामुन, पन्तूआ / पंटूआ
दानेदार	20–25	35–40	कलाकंद, बर्फी, मिल्क केक

दानेदार खोआ की प्रमुख विषेषता इसकी दानेदार बनावट और असमान आकार है। दानेदार खोआ के दानों का आकार, स्कन्दक (कौयगुलांट) की मात्रा और उपयोग में लिए गए दूध की गुणवत्ता पर निर्भर करता है। साइट्रिक एसिड की मात्रा, उत्पाद के 0.1 से अधिक नहीं होनी चाहिए। इस प्रकार के खोआ का उपयोग, कलाकंद, केक और पेस्ट्री बनाने हेतु एक आधार के रूप में किया जाता है, जहां दानों का आकार या दानेदारपन बहुत महत्वपूर्ण माना जाता है।

यंत्रीकृत (मैकेनाइज्ड) विधियों द्वारा डेरी उत्पादों को बनाने से पारंपरिक विधियों की स्वाभविक कमियों का निवारण किया जा सकता है और कुछ स्वाभाविक कमियां निम्नवत है.:

1. कम ऊष्मा स्थानांतरण गुणांक के कारण उपकरणों का भारी (बड़ा) होना।
2. खुले वातावरण के कारण अस्वास्थ्यकर प्रक्रिया (विधि) होना।
3. उष्मीय सतह पर दूध अवशेषों की दृढ़ पतली परत का बनना, उपकरण के खराब प्रदर्शन को बढ़ावा देता है तथा साफ सफाई और स्वच्छता को कठिनतम बना देता है।
4. बड़ी मात्रा में उत्पादन के लिए उपकरणों का अनुपयुक्त होना।
5. उपकरणों में उत्पाद का ज्यादा समय में बनाये जाना और रहना, उत्पाद के थोक (बड़ी मात्रा में) नुक़सान के लिए अधिक खतरा होना।
6. परिचालक (ऑपरेटर) पर अत्यधिक तनाव और थकान।
7. बैच दर बैच उत्पाद की गुणवत्ता में भिन्नता।
8. उत्पाद की झाग बनाने की प्रवृत्ति के कारण कार्यक्षमता से

चित्र–1: तीन चरण पतली फिल्म स्क्रैप सतह ऊष्मा एक्सचेंजर (टी.एफ.एस.एस.एच.इ.)

कम क्षमता में उपयोग होना।

इन सभी समस्याओं को, पतली फिल्म स्क्रैप सतह ऊष्मा एक्सचेंजर (टी.एफ.एस.एस.एच.इ.) की अनूठी (अनोखी) प्रदर्शन विशेषताओं के कारण, इसका उपयोग करके दूर किया जा सकता है (चित्र–1)। इस उपकरण या यन्त्र में, गर्म सतह को लगातार स्क्रैप करते (खुरचते) हैं। इस तकनीक में, गर्म (हीटिंग) सतह पर उत्पाद के धीमी गति से प्रवाहन (चलने) के कारण ऊष्मा हस्तांतरण की दर प्रतिबंधित (रूकती या कम) होती है, अतः इस उत्पाद को जल्दी से हटा दिया जाता है और तरल के थोक (बल्क या भंडार) के साथ मिलाया जाता है। इसके साथ ही, ताजे (नए) उत्पाद को सतह के साथ संपर्क में लाते हैं। स्क्रैप करने के लिए, धूर्णन (घुमती हुई) ब्लेड के एक सेट उपयोग करते हैं। ब्लेड की कार्रवाई से, तरल (द्रव) में काफी अशांति या हलचल (टरबूलेंस) और पम्पिंग कार्रवाई होने के कारण, ऊष्मा और मात्रा (द्रव्यमान) स्थानांतरण बड़े पैमाने पर त्वरित (ज्यादा गति से) होता है भाप संघनन से ऊष्मा स्थानान्तरण की दरों में वृद्धि करने के लिए, क्षैतिज विन्यास (होरिजोंटल) कॉन्फ़िगरेशन को चुना जा सकता है।

पतली फिल्म स्क्रैप सतह ऊष्मा एक्सचेंजर (टी,एफ,एस.एस.एच.इ.) की कुछ अनूठी (अनोखी) प्रदर्शन विशेषतायें निम्नवत है:

1. उत्पाद, ऊष्मा (गर्मी) के क्षेत्र में, कम समय (सेकेन्डो) के लिए रहता है। इसलिए, यह ऊष्मा (गर्मी) – संवेदनशील उत्पादों के संचालन (हैंडलिंग) और प्रसंस्करण के लिए एक तार्किक एवं उचित माध्यम है।
2. उत्पाद की पतली परत और रोटर द्वारा होने वाले विक्षोभ (टरबुलेंस) के कारण उच्च ऊष्मा (गर्मी) स्थानांतरण और ऊष्मा दर मिलती है। इसलिए अत्यधिक चिपचिपे पदार्थों को, जिनकी पपड़ी (स्केल) बन सकती हों, को आसानी से प्रसंस्करित किया जा सकता है।
3. उत्पाद के कम ठहराव (रेजिडेंस) समय के कारण, उत्पाद में कम दुष्प्रभाव (साइड रिएक्शन), अपघटन और इसका ज्यादा उत्पादन होता है।
4. उत्पाद गर्म करने वाली (हीटिंग) सतह पर एक पतली फिल्म के रूप में ही सीमित है; फलस्वरूप उपकरण के अंदर उत्पाद कम मात्रा (आयतन) में रहता है अतः हीट एक्सचेंजर के अंदर उत्पाद की कम से कम हानि या नुकसान (स्पोईलेज) होती है जबकि इसके विपरीत बैच प्रक्रिया में लगभग पूरा (कुल) नुकसान होता है।
5. उपकरण के अंदर उत्पाद की बेहतर प्रवाह विशेषताओं के कारण, इस प्रणाली से अर्द्ध–ठोस रूप में उत्पादों को ऊष्मा (गर्मी) से होने वाली क्षति के बिना भी संभाल सकते हैं। बाह्य द्वार (आउटलेट) और प्रवेश द्वार (इनलेट) के उत्पादों का चिपचिपाहट अनुपात (विस्कोसिटी रेशियो) 1000 या अधिक हो सकता है।
6. स्वचालन (ऑटोमेशन) ओर जगह में सफाई (सी आई पी) के लिए अनुकूलनीय।
7. यह एक स्वच्छ प्रक्रिया है क्योंकि पूरी तरह से बंद वातावरण में होती है।
8. ऑपरेटरों पर कम शारीरिक तनाव होता है क्योंकि उनके द्वारा केवल छोटे वाल्वों को बंद करना या खोलना है।
9. उत्पाद की एकसमान गुणवत्ता मिलती है क्योंकि यह प्रक्रिया सतत या लगातार (कोंटीनुवस) होती है।
10. प्रक्रिया क्षेत्र (जोन) में कम उत्पाद–मात्रा (इन्वेंटरी) होना।
11. ऊपर से तली तक के भाग के 1 से 99 तक विभाजित हिस्सों में एक पारगामी (वन्स–थ्रू) प्रसंस्करण।
12. दबाव में नगण्य गिरावट (ड्रॉप) होना।
13. कम क्षमता पर चलाने की योग्यता।
14. व्यर्थ होने वाली ऊष्मा का पुनः प्रयोग संभव – ऊर्जा संरक्षण।
15. कच्चे एवं सांद्रित दूध का उपयोग करना संभव है जिससे कि क्षमता काफी बढ़ सकती है।
16. ठहराव (रेजिडेंस) के समय का संकुचित वितरण।
17. सतह का न्यूनतम दूषण या गंदा होना।
18. ऐसे तरल पदार्थ को, जिनमें झाग बनने की प्रवृत्ति या रूझान हों, आसानी से नियंत्रित किया जा सकता है।
19. बेहतर नियंत्रण और प्रक्रिया का अनुकूलन करने के लिए।

एस.एस.एच.ई. का उपयोग कर दानेदार खोआ बनाने में तकनीकी समस्यायें:

भारत में उत्पादित दूध का एक महत्वपूर्ण भाग, विभिन्न प्रकार की स्वदेशी मिठाईयों का निर्माण करने के लिए प्रयोग किया जाता है। अधिकांश दूध आधारित स्वीट्स

(मिठाईयों) में खोआ एक बुनियादी घटक है। फिर भी उपकरणों या यंत्रो के प्रदर्शन को जानने (भविष्यवाणी) के लिए वैज्ञानिक तरीकों के विकास के लिए कोई अनुकूल व्यवस्थित प्रयास नहीं किया गया है, जो स्वदेशी डेरी उत्पादों के वांछनीय बनावट के गठन में उपयुक्त हों। दानेदार खोआ की बनावट (टेक्सचर) से संबंधित बुनियादी अनुसंधान आंकड़ों की अल्प (कम) उपलब्धता के कारण, वांछनीय बनावट के साथ इसके उत्पादन की प्रक्रिया का मशीनीकरण (यंत्रीकरण) का उन्नतिशील प्रयास करना मुश्किल हो गया है। यह उपकरण भैंस के दूध का उपयोग कर खोआ के निर्माण के लिए बहुत सफल पाया गया है और दानेदार खोआ के निर्माण हेतु इसकी उपयुक्तता का परीक्षण करने की आवश्यकता है।

दानेदार खोआ बनाने की विधिः

तीन चरण स्क्रैप सतह ऊष्मा एक्सचेंजर (टी.एफ.एस.एस.एच.इ.) में दानेदार खोआ बनाने की विधि को चित्र–2 में प्रदर्शित किया गया है। इसमें सबसे पहले भाप–शीर्षक (स्टीम हेडर) और तीन पतली सतह स्क्रैप सतह ऊष्मा एक्सचेंजर (टी.एफ. एस.एस.एच.इ.) की भाप वाल्व, जो तीन चरण टी.एफ.एस.एस. एच.इ. के पीछे की तरफ स्थित थे, को हाथों से (मैन्युअली) खोला गया था। फिर कुछ पानी को संतुलन टेंक में भरा और फ़ीड पंप पूरी गति से शुरू कर दिया। फिर सभी टी,एफ,एस. एस.एच.इ. की हवा निकास नली को खोला गया और भाप–दबाव सभी टी.एफ.एस.एस.एच.इ. में 0.8 किग्रा./सेमी^{2} पर तय किया और सभी खुरचनियों (स्क्रेप्पर्स) को सयंत्र फलश करने के लिए चला दिया गया। सभी भाव तख्ता बंदों (स्टीम–जैकेट) में से हवा के निकास के बाद, हवा निकास नलियों को बंद कर दिया गया।

भैंस का ताजा दूध

↓

छानना

↓

मानकीकरण

(वसाः 6:; एस.एन.एफ.: 9:; अम्लताः 0.18: एल.ए.)

↓

संतुलन टेंक

↓

टी.एफ.एस.एस.एच.इ. में सांद्रण

↓

स्वच्छ स्टेनलेस स्टील थाली (ट्रे) में इकठ्ठा करना

↓

एकसमान मोटी परत में फेलाना

↓

कमरे के तापमान पर ठंडा करना

↓

एल्युमीनियम पत्ती (फॉयल) से ढकना

चित्र–2: तीन चरण स्क्रैप सतह ऊष्मा एक्सचेंजर में दानेदार खोआ बनाने की विधि

जब पानी समाप्त हो गया तो मानकीकृत भैंस के दूध को छाननी के माध्यम से (किसी भी बाहरी पादर्थ को फिल्टर करने के लिए) संतुलन टैंक में डाल दिया गया। फिर नियंत्रण पैनल के द्वारा फीड पंप की गति (चक्कर/मिनट) को नियंत्रित करके दूध के प्रवाह को विद्युत–चुम्बकीय प्रवाह मीटर की मदद से 170–210 किग्रा.घंटा के बीच किया गया था। नियंत्रण पैनल के द्वारा सभी टी.एफ.एस.एस.एच.इ. की खुरचनी (स्क्रेपर) समूहों को अपने पूर्व–निश्चित गति (चक्कर/मिनट) पर निर्धारित किया गया। पहले और दूसरे चरण में भाप–दबाव को क्रमशः 4 किग्र./सेमी2 और 2 किग्र./सेमी2 पर तय किया गया। दूसरे चरण से तीसरे चरण में आते समय, उत्पाद के गठन के अवलोकन के आधार पर, तीसरे चरण में भाप–दबाव को 1.5 किग्र./सेमी2 से 2.0 किग्र./सेमी2 के बीच समायोजित किया गया। दूध प्रवाह की दर को लगभग इस तरह समायोजित किया गया कि आवश्यक या अपेक्षित घनेपन (कंसिस्टेंसी) का उत्पाद प्राप्त हो सके। तीसरे चरण से जो समरूप मिश्रण का अंतिम उत्पाद प्राप्त हुआ उसे एकसमान मोटी परत में फैलाते हुए ट्रे (बर्तन या तश्तरी) में एकत्रित किया गया। फिर उत्पाद को एल्यूमीनियम पन्नी (फॉयल) से ढंक करके कमरे के तापमान पर ठंडा किया गया। जब उत्पाद ठंडा

हो गया तब टुकड़ों में काट कर विश्लेषण किया गया।

परिणाम :–

मानकीकृत दूध को विभिन्न अम्लता के स्तर (0.16, 0.17, 0.18, 0.19 प्रतिशत लैक्टिक अम्ल या एल.ए.) पर टी.एफ.एस.एस. एच.इ. का उपयोग करते हुए प्रारंभिक परीक्षण किया गया और पाया गया कि अंतिम उत्पाद में बने दानों के आकार और गठन के प्रकार के लिए 0.18ः एल.ए. का दूध सबसे उपयुक्त था। दूध की अम्लता को पूर्व निर्धारित मान पर समायोजन करने हेतु, या तो प्राकृतिक रूप से खट्टा (सॉवरिंग) करने के लिए कुछ समय बिना प्रशीतलित (अन–रेफ्रिजेरेटेड) स्थिति में रखा (यदि अम्लता को थोड़ा सा बढ़ाना हो) या फिर कम मात्रा में 10 प्रतिशत साइट्रिक एसिड द्रव को मिलाया गया (यदि अम्लता को अधिक बढ़ाना हो), तत्पश्चात अम्लता के स्तर को मापा गया। किसी भी परिस्थिति में दूध की अम्लता को कम करने की आवश्यकता नहीं पड़ी क्योंकि प्राप्त किये गए दूध की अम्लता 0.16 प्रतिशत एल.ए. से अधिक नहीं मिली। 0.16 प्रतिशत एल.ए. अम्लता वाले दूध से बने उत्पाद में दाने नहीं थे एवं बनावट ढीली और गठन लेई (पेस्टी) जैसा था। जब अम्लता को 0.17 प्रतिशत एल.ए. तक बढ़ाया गया तो छोटे दाने बने पर गठन लेई (पेस्टी) जैसा ही था। 0.18 प्रतिशत एल.ए. अम्लता के स्तर पर अच्छी मात्रा में दाने बने जो कि दानेदार खोआ में वांछित हैं और उत्पाद लेई (पेस्टी) जैसे गठन का नहीं था। जब अम्लता को 0.19 प्रतिशत एल.ए. तक बढ़ाया गया तो दाने कठोर एवं बड़े आकार के बने। उत्पाद का स्वाद अम्लीय हो गया एवं निश्चित रूप से पानी छोड़ा जाना (व्हेयिंग ऑफ) देखा गया तथा दूध का जमना शुरू हो गया हो, ऐसा प्रतीत होने लगा। अतः 0.18 प्रतिशत एल.ए. वाला दूध प्रक्रिया–अनुकूलन हेतु आगे के अध्ययन के लिए चुना गया। उत्पाद की सभी संवेदी विशेषताओं सहित समग्र स्वीकार्यता के आधार पर वांछनीय संरचना विशेषताओं के साथ दानेदार खोआ के उत्पादन हेतु परिचालन मानकों के युक्ततम संयोजन का चयन किया गया है। टी.एफ.एस.एस.एच.इ. का उपयोग कर दानेदार खोआ के उत्पादन के लिए युक्ततम परिचालन मानक निम्नवत हैः

मानकीकृत दूध की प्रारंभिक अम्लताः

0.18 प्रतिशत लैक्टिक अम्ल (एल.ए.)

फीड पंप के माध्यम से दूध के बहाव की दरः

190 किग्रा. / घंटा

पहले चरण एस.एस.एच.इ. की गति (चाल) :

175 चक्कर / मिनट

दूसरे चरण एस.एस.एच.इ. की गति (चाल) :

150 चक्कर / मिनट

तीसरे चरण एस.एस.एच.इ. की गति (चाल):

15 चक्कर / मिनट

पहले चरण एस.एस.एच.इ. में भाप का दबावः

4 किग्रा. / सेमी^{2}

दूसरे चरण एस.एस.एच.इ. में भाप का दबाव :

2 किग्रा. / सेमी^{2}

तीसरे चरण एस.एस.एच.इ. में भाप का दबावः

1.5 किग्रा. / सेमी^{2}

दानेदार खोआ को तीन चरण पतली सतह स्क्रैप सतह ऊष्मा एक्सचेंजर (टी.एफ.एस.एस.एच.इ.) में बनाया गया और इसके नमूनों (सैंपल) का बाजार से प्राप्त नमूनों (सैंपल) के साथ तुलनात्मक अध्ययन किया गया। उत्पाद की कठोरता और चिपचिपाहट को छोड़कर, एकसमान कुल ठोस सामग्री के टी.एफ.एस.एस.एच.इ. से बने दानेदार खोआ और बाजार से प्राप्त नमूनों (सैंपल) में संरचना (टेक्सचरल) गुणों में सान्ख्यीकीय रूप से कोई भिन्नता नहीं पाई गई। इस तरह टी.एफ.एस.एस. एच.इ. से निर्मित दानेदार खोआ, बाजार के नमूनों के साथ तुलनीय था तथा यह नरम और अधिक चिपकने वाला था।

इस तरह यह निष्कर्ष निकलता है कि पतली सतह स्क्रैप सतह ऊष्मा एक्सचेंजर से निर्मित दानेदार खोआ बाजार के नमूनों (सैंपल) के तुलनीय हैं तथा ये उत्पाद नरम और चिपकने वाले थे। इस तरह तीन चरण स्क्रैप सतह ऊष्मा एक्सचेंजर का उपयोग करके दानेदार खोआ का निर्माण किया जा सकता है।

08

दुग्ध उत्पादकों के लिए डेरी विकास की सरकारी योजनाएं

[1]बुलबुल.जी.नगराले, [2]ए.के.चौहान, [3]परविंदर मलिक और [1]डेन्नी फ्रान्को

- [1]पी.एच.डी. शोध छात्र, भाकृअनुप - राष्ट्रीय डेरी अनुसंधान, करनाल, हरियाणा
- [2]प्रधान वैज्ञानिक, भाकृअनुप - राष्ट्रीय डेरी अनुसंधान, करनाल, हरियाणा
- [3]सहायक प्राध्यापक, सीसीएस एच एयू, केवीके, कुरूक्षेत्र, हरियाणा

डेयरी के क्षेत्र मे भारत ने पिछले दशकों में उल्लेखनीय उन्नति की है। भारत दुनिया का न.1 दुग्ध उत्पादक देश है, 2012–13 में इसका उत्पादन 132.43 मीट्रिक टन था और प्रति व्यक्ति दुग्ध उपलब्धता 296.5 ग्राम् थी, जो कि विश्व औसत (294.5 ग्राम्) से अधिक है। भारत को इस स्थान पर स्थापित करने में सबसे बड़ा श्रेय केंद्र सरकार द्वारा चलाई गई योजनाओ को जाता है। इन योजनाओ के लिए प्रत्येक पंच वार्षिक योजना में आर्थिक सहायता प्रदान की जाती है। प्रथम पंच वर्षीय योजना में डेयरी विकास के लिए 7.78 करोड़ दिए गए, जो बढाकर बारहवीं पंचवर्षीय योजना में 270.26 करोड़ किए गए (तालिका 1)।

तालिका 1: भारत में डेयरी विकास के तहत आवंटित और व्यय राशि

	आवंटित राशि	व्यय राशि
प्रथम पंच वार्षिक योजना (1950–55)	7.81	7.78
छठी पंच वार्षिक योजना (1980–85)	336.1	298.34
बारहवीं पंच वार्षिक योजना (2012–17)		
2012–13	392	270.26

तालिका 2 के अध्ययन से पता चलता है कि भारत में दुग्ध उत्पादन की वृद्धि क्या रही। भारत के विवेकशील नीतिगत हस्तक्षेपो के परिणाम स्वरूप हमारे दुग्ध उत्पादन का वृद्धि दर 1.64 से बढाकर 4.22 हो गया है पूरे विश्व मे दुग्ध उत्पादन मे यह वृद्धि केवल 1 प्रतिषत है।

तालिका 2: भारत में दूध उत्पादन का वार्षिक वृद्धि दर

वर्ष	वार्षिक वृद्धि दर (प्रतिशत)
1950-51 से 1960-61	1.64
1960-61 से 1973-74	1.15
1973-74 से 1980-81	4.51
1980-81 से 1990-91	5.48
1990-91 से 2000-01	4.11
2000-01 से 2010-11	4.22

भारत ने न केवल दुग्ध उत्पादन में अग्रणीय स्थान प्राप्त किया बल्कि दुग्ध संकलन में भी काफी प्रगति की है। वर्ष 1980–81 में दुग्ध संकलन 2562(000) से बढाकर, वर्ष 2012–13 में 34362 हुआ। सरकार के निरंतर प्रयासों से सरकरी डेयरी संस्थाओं द्वारा दुग्ध संकलन में बढ़ोतरी हुई है। 2002–03 में 174 लाख लीटर से यह बढ़कर 2011–12 में यह

287 लाख लीटर हो गया है। परंतु आज भी संगठित क्षेत्र कुल उत्पादन का केवल 18 से 20 प्रतिशत ही इकट्ठा कर पाते हैं और बाकी का दुग्ध असंघटित क्षेत्रों द्वारा इकट्ठा किया जाता है। असंगठित क्षेत्र में मुख्य रूप से दूधिया (मिल्क वेंडर) सबसे ज्यादा दुग्ध इकट्ठा करते है।

तालिका 3ः भारत में दूध संकलन (000 किलोग्राम/दिन)

वर्ष	वार्षिक वृद्धि दर (प्रतिशत)
1980-81	2562
1990-91	9702
2000-01	16504
2010-11	26202
2011-12	28705
2012-13	33507
2013-14 (P)	34362

भारत को इस मजबूत स्थिति में लाने में सहकारी डेरी संस्थाएं एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं। देश में अधिकांश दुग्ध उत्पादन छोटे और सीमांत किसानों द्वारा किया जाता है और इन संसाधनरहित गरीब डेरी किसानो को संघटित करने का काम करता है डेरी संस्थाएं जो न केवल उन्हें उनके उत्पाद के लिए बाजार उपलब्ध कराते हैं साथ ही साथ उन्हें आर्थिक व अन्य सेवाएं भी प्रदान करते है। वर्ष 2012–13 में 144246 डेरी संस्थाओं द्वारा 26.18 मिलियन टन दुग्ध संकलन किया गया जिसमे से 21.9 एमटी तरल दुग्ध की बिक्री की गई जो कि 2011–12 के मुकाबले अधिक है (तालिका 3)

तालिका 4ः भारत में डेरी विकास के कुछ प्रमुख घटकों की उपलब्धि

	2004–05	2010–11	2012–13
आयोजित सोसायटी (संख्या)	109729	140227	144246
किसान सदस्य (000)	12194	14071	14461
औसत ग्रामीण दूध खरीद (प्रतिदिन 000 किग्रा)	17420	25865	26188
तरल दूध विपणन (प्रतिदिन 000 लीटर)	14902	18614	21989

तालिका 5ः भारत के पंजीकृत डेरी संयंत्रों की संख्या

वर्ष	सहयोगी संख्या	क्षमता	निजी संख्या	सरकारी संख्या	क्षमता	कुल संख्या	क्षमता
2010	243	37239.5	562	57063	36	841	98315.5
2011	263	43250.5	765	73251.5	37	1065	120548

डेरी विकास से हम न केवल उत्पादन व संकलन पर बल्कि प्रसंस्करण में भी प्रगति कर रहे हैं जो की बढ़ती हुई डेरी संयंत्रों की संख्या से स्पष्ट होता है (तालिका 5)

और इस प्रगति को निरंतर बनाए रखने के लिए भारत सरकार कई योजनाएं चला रही है। भारत में सबसे पहले दुग्ध क्रांति 1970 में शुरू हुई जिसके परिणाम स्वरूप हमने अमेरिका को

पीछे छोड़ दुग्ध उत्पादन में सर्वोच्च स्थान प्राप्त किया। भारत के लक्ष्य के अनुसार वर्ष 2021–22 में दुग्ध उत्पादकता 270 मिलियन टन होगी और इस लक्ष्य को पाने के लिए सरकार कई योजनाएं चला रही है। इनमें से कुछ प्रमुख योजनाएं :

तालिका 6: भारत के विभिन्न राज्यों को डेयरी विकास के लिए दिया गया सहायता अनुदान (लाख रू.)

राज्य	2009–10		2010–11		2011–12	
	यूनिट	व्यय	यूनिट	व्यय	यूनिट	व्यय
आंध्रप्रदेश	5	92.79	8	125.485	8	150.655
असम	3	72.65	4	144.35	1	22.65
बिहार	1	10.59	2	50	2	15.72
गोआ	–	–	1	25	1	25
गुजरात	2	60.81	4	76.295	3	57.14
हरियाणा	1	10.99	4	86.585	1	25
हिमाचल प्रदेश	1	37.5	1	33.25	2	75
जम्मू कश्मीर	–	–	1	24.66	–	–
झारखंड	1	23	–	–	–	–
कर्नाटक	–	–	–	–	3	42.58
केरल	2	19.615	–	–	–	–
मध्य प्रदेश	3	60.265	3	75	1	25
महराष्ट्र	9	140.48	8	129.57875	12	224.646
मेघालय	–	–	1	13.26	–	–
उड़ीसा	–	–	2	50	–	–
पंजाब	1	23.315	5	83.805	6	112.062
राजस्थान	3	53.09	5	84.06	3	71
तामिलनाडु	5	100.605	4	71.495	3	58.13265
उत्तर प्रदेश	3	75	13	349.485	7	136.493
उत्तराखंड	1	1.9	1	1.9	–	–
पश्चिम बंगाल	1	11.01	–	–	2	50
भारत	42	793.605	67	1424.21	55	1091.07865

गहन डेयरी विकास कार्यक्रम, डेयरी सहकारी संस्थाओ का सहायता, गुणवत्ता और स्वच्छ दूध उत्पादन के लिए बुनियादी सुविधाओं के ढांचे को सढ़ढ़ करना, राष्ट्रीय डेयरी योजना इत्यादि।

गहन डेरी विकास कार्यक्रम (Integrated Dairy Development Scheme)

- गहन डेरी विकास कार्यक्रम (IDDP) नामक योजना को ऑपरेशन फ्लड, पर्वतीय एवं पिछड़े क्षेत्रो में 100 प्रतिशत अनुदान सहायता के आधार पर 1993–94 में आरम्भ किया गया था।
- यह योजना पर्वतीय, पिछड़े क्षेत्रों के उन जिलों में कार्यान्वित है, जहा ऑपरेशन फलड प्रोग्राम के अन्तर्गत डेरी विकास कार्यकलापों के लिए 50 लाख रूपये से कम धनराशि मिली थी।
- इस योजना को, मार्च 2005 में संशोधित किया गया और इसे सघन डेरी विकास कार्यक्रम का नाम दिया गया।

इस योजना के लिए वित्तीय मदद केंद्र सरकार द्वारा

उपलब्ध कराई जाती है। इस योजना का मुख्य उद्देश्य दुग्ध उत्पादन, संकलन, प्रसंस्करण और विपणन में वृद्धि लाना है। अपेक्षाकृत अधिक उपेक्षित क्षेत्रों मे रहने वाले लोगों के सामाजिक, पौषणिक तथा आर्थिक दर्जे में सुधार लाना है।

- केंद्र सरकार से मौजूदा डेयरी/द्रुतषीतन संयंत्र के विस्तार, एएमसीयू/बीएमसी की खरीद के लिए, पशु खाद्य गोदाम के निर्माण के लिए, ऑडियो विजुअल किट की खरीद के लिए सहायता मिलती है। सहकारी डेरी संस्था के संगठन को भी इस योजना के अतर्गत सहायता मिलती है। जिसमे दुग्ध परीक्षण यन्त्र, उपकरण, प्रबंधकीय सब्सिडी, हेड लोड सब्सिडी, हरा चारा मिनिकिट, कार्यशील पूंजी, टीकाकरण, प्राथमिक चिकित्सा, दुधारू पशु, प्रशिक्षण और पशु की खरीद शामिल है।
- मार्च 2014 तक कुल 716.40 करोड़ रूपये की लगत से 27 राज्यों एवं एक संघ राज्य क्षेत्र में 261 जिलों को शामिल किया गया है। योजना से प्रतिदिन 39.91 लाख किलोग्राम दुग्ध की अधिप्राप्ति तथा 28.12 लाख लीटर दुग्ध प्रतिदिन के विपणन द्वारा विभिन्न राज्यों के 38817 गावो के कृषको को लाभ हुआ है। इस योजना के तहत 34.38 लाख लीटर दुग्ध की प्रतिदिन शीतकरण क्षमता और 42.90 लाख लीटर प्रतिदिन की प्रसंस्करण क्षमता सृजित की गई है।

डेयरी सहकारी संस्थाओ को सहायता (Assistance to dairy Cooperative)–

- डेयरी सहकारिता को पुनर्जीवन देने के उद्देष्य से जनवरी 2000 में इस योजना का आरम्भ हुआ।
- इस योजना के तहत भारी सब्सिडी प्रदान की जाती है उन डेरी संस्थानों को जो लगातार नुकसान में चल रहे हों और आर्थिक रूप से कमजोर है यह योजना उन्हें आर्थिक रूप से व्यवहारिक बनाती है। जिन दुग्ध संघों का इस पुनर्वसन के लिए चयन होता है, उन्हें आर्थिक मदद दी जाती है।
- इस योजना के अंतर्गत घाटे मे चल रहे दुग्ध संघो को क्रेंद्र व् राज्य सरकार द्वारा 50:50 साझीदारी के आधार पर अनुदान सहायता प्रदान की जाती है।
- इस योजना को नाबार्ड द्वारा कार्यान्वित किया जा रहा है और बीमार दुग्ध संघो के साथ विचार विमर्श करके नाबार्ड द्वारा ही तैयार किया जाता है।
- प्रत्येक पुनर्वास योजना को इस तरह से तैयार किया जाता है कि बीमार सहकारिता का निवल मूल्य इस योजना के अनुमोदित होने की तिथि से 7 वर्षो की अवधि के अंदर सकारात्मक हो जाएगा।
- मार्च 2013, की स्थिति के अनुसार 27 दुग्ध संघो के सम्बन्धी में 7 वर्षो की पुनर्वास अवधि समाप्ति हो चुकी है। इनमे से 8 दुग्ध संघो में सकारात्मक निवल मूल्य प्राप्ति कर लिया है जबकि 6 दुग्ध संघ लाभ कमा रहे है, परन्तु अभी तक उन्होने सकारात्मक निवल मूल्य प्राप्ति नही किया है। 13 संघ अभी भी हानि उठा रहे है और सबका निवल मूल्य नकारात्मक है। शेष 15 दुग्ध संघो में से 11 अन्य 7 वर्षो की पुनर्वास अवधि के पूरा होने से पहले सकारात्मक निवल मूल्य प्राप्ति कर लेने की सम्भावना है।

गुणवत्ता और स्वच्छ दूध उत्पादन के लिए बुनियादी सुविधाओं के ढ़ांचे को सढढ़ करना (Strengthening of infrastructure for quality & clean milk production)–

- घरेलू बाजार में दुग्ध और दुग्ध उत्पाद की गुणवत्ता में सुधार लाने और अंतर्राष्ट्रीय बाजार में दुग्ध उत्पादों के निर्यात में वृद्धि करने के उद्देश्यों के साथ अक्टुबर, 2003 में इस योजना की शुरूआत की गई।
- इस योजना के तहत दुग्ध उत्पादकों को स्वच्छ दुग्ध उत्पादन की शैली सिखाई जाती है। इस के तहत प्रशिक्षण, डिटर्जेंट का उपयोग, एंटीसेप्टिक द्रव्य, मलमल का कपड़ा, बर्तन आदि का उपयोग सिखाया जाता है। परीक्षण प्रयोगशालाओं को बल्क मिल्क कूलर की खरीद पर 75 प्रतिषत सब्सिडी दी जाती है।
- इस योजना की वित्तपोषण सहायता पद्धति इस प्रकार है की लाभ अर्जन कर रहे दुग्ध संघो को (जिन्होने पिछले साल 1 करोड़ से अधिक लाभ कमाया हो) 75 प्रतिशत सहायता अनुदान तथा सभी अन्य दुग्ध संघो को 100 प्रतिशत सहायता अनुदान प्रदान किया जाता है।
- यह योजना राज्य सरकारों के माध्यम से जिला स्तरीय सहकारी दुग्ध संघो/राज्य स्तरीय सहकारी दुग्ध परिसंघ द्वारा कार्यान्वित की जाती है।
- मार्च 2014 तक 22 राज्यों तथा एक संघ राज्य क्षेत्र को शामिल करते हुए 176 परियोजनाओं को अनुमोदित किया

है। इन में से 111 परियोजनाएं पूरी हो चुकी हैं और शेष 65 परियोजनाएं कार्यान्वित होने की विभिन्न अवस्थाओ में है। लगभग 7.24 लाख किसान सदस्यो को प्रशिक्षित किया जा चुका है और 47.47 लाख लीटर की कुल शीतकरण क्षमता वाले 2271 बल्क मिल्क कूलर लगाए गए है और 1796 मौजूदा प्रयोगशालाओ को सुदृढ़ किया गया है।

डेरी उदयमिता विकास योजना (Dairy Entrepreneurship Development Scheme)–

- असंगठिन क्षेत्र में संरचनात्मक बदलाव लाने के उद्देश्य से दसवीं पंचवर्षीय योजना के दौरान, 2004 में वेंचर कैपिटल फण्ड फॉर डेरी एंड पोल्ट्री के शुरूआत की गई थी।
- इस योजना का मुख्य उद्देश्य–स्वच्छ दूध के उत्पादन के लिए आधुनिक डेयरी फार्मो की स्थापना, अच्छे प्रजनन स्टॉक का विकास और संरक्षण जिससे बछड़े पालन को प्रोत्साहन मिले, असंगठित क्षेत्र में संरचनात्मक परिवर्तन लाना ताकि दूध का प्रारंभिक प्रसंस्करण गांव स्तर पर किया जा सके, पारंपरिक प्रौद्योगिकी का उन्नयन व्यावसायिक पैमाने में करना, असंगठित डेयरी क्षेत्र में स्व रोजगार के अवसर पैदा करना और बुनियादी ढ़ांचे प्रदान करना है।
- हालाँकि ग्यारहवीं पंचवर्षीय योजना के दौरान इसे दो नई योजनाओं में विभाजित किया गया – डेरी वेंचर कैपिटल फण्ड और पोल्ट्री वेंचर कैपिटल फण्ड। इस योजना के तहत ग्रामीण/शहरी लाभर्थियों को वित्तीय सहायता ऋण के रूप में विनियोजनीय परियोजनाओं के माध्यम से एक योजनाबद्ध प्रस्ताव के तहत प्रदान किया जाता है। सामान्य वर्गों के लाभार्थियों को परियोजना लागत के 25 प्रतिशत तक और अनुसूचित जाति एवं अनुसूचित जनजाति के लाभर्थियों को परियोजना लगत के 33.33 प्रतिशत तक की सब्सिडी दी जाती है। किसी भी परियोजना मे 10 प्रतिशत योगदान उद्यमी का 50 प्रतिशत ब्याज मुक्त ऋण केंद्र सरकार द्वारा व् बाकि 40 प्रतिशत बैंको (वाणिज्यिक बैंकों, सहकारी बैंकों और क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों) द्वारा उपलब्ध कराया जाता है। यदि लाभार्थी समय पर/नियमित रूप से ऋण का भुगतान करते है, उन्हें ब्याज दर मे 50 प्रतिशत सब्सिडी प्राप्त होती है।
- इस योजना के प्रारंभ से लेकर मार्च, 2004 तक 724.70 करोड़ रूपये की कुल राशि जारी की गई है, जिससे 1,86,325 डेयरी यूनिट्स के लिए लाभार्थी को 677.05 करोड़ रूपये बैंक एंडिंग सब्सिडी के रूपये में वितरित कर दिए गए है।

राष्ट्रीय बोवाइन प्रजनन तथा डेयरी विकास कार्यक्रम (एनपीबीबी एंड डीडी)

ऊपर बताई गई चार योजनाओ, नामतः : सघन डेयरी विकास कार्यक्रम (आय डी डी पी), गुणवत्ता और स्वच्छ दूध उत्पादन के लिए बुनियादी सुविधाओं ढ़ांचे को सदृढ़ करना, डेयरी सहकारी संस्थाओ को सहायता तथा राष्ट्रीय गोपशु और भैंस प्रजनन परियोजना (एनपीबीबी एंड डीडी) का विलय करके एक नयी पुनर्घटित योजना, नामतः : राष्ट्रीय बोवाइन प्रजनन तथा डेरी विकास कार्यक्रम (एनपीबीबी एंड डीडी) 27.02.2017 को प्रारम्भ की गई है।

अब इस योजना के दो घटक होंगे – 1) राष्ट्रीय बोवाइन प्रजनन कार्यक्रम (एनपीबीबी) और 2) राष्ट्रीय डेरी विकास कार्यक्रम

राष्ट्रीय बोवाइन प्रजनन कार्यक्रम (National Bovine Breeding Programme)

इस योजना का मुख्य उद्देश्य : किसानो के द्वार तक गुणवत्तापूर्ण कृत्रिम गर्भाधान सेवाओ की व्यवस्था प्रदान करना, उच्च अनुवांशिक गुणवत्ता वाले जर्मप्लाज्म का प्रयोग करके कृत्रिम गर्भधारण अथवा प्राकृतिक सेवा के माध्यम से सभी प्रजनन योग्य मादाओं को संघटित प्रजनन के अंतर्गत लाना, उच्च सामाजिक – आर्थिक महत्ता वाली चयनित स्वदेशी बोवाइन नसलों का संरक्षण, विकास तथा प्रसार, नसलों को लुप्त होने से बचने के लिए महत्वपूर्ण स्वदेशी नसलों के प्रजनन ट्रस्टो में गुणवत्तापूर्ण प्रजनन आदान प्रदान करना है।

राष्ट्रीय डेरी योजना (National Dairy Plan)

भारत की बढ़ती क्रय शक्ति और वैश्वीकरण से , अच्छी गुणवत्ता और दुग्ध उत्पादों की मांग बढ़ रही है। भविष्य की मांग को पूरा करने के लिए केंद्र सरकार ने राष्ट्रीय डेरी योजना की शुरूआत की है।

इस योजना के तहत सरकार, प्रमुख दुग्ध उत्पादक क्षेत्रों में दूध

उत्पादन बढ़ाने को मजबूत और मौजूदा बुनियादी ढांचे को मजबूत बनाने, नए संस्थागत ढांचों के माध्यम से प्रक्रिया और बाजार दूध का विस्तार करने पर विचार कर रही है।

इसमें A.I और नैसर्गिक पद्धति के नस्ल में सुधर, नए कारखाने की स्थापना जिसमे पशु खाद्य, बाइ पास प्रोटीन और खनिज मिश्रण का उत्पादन हो। इस योजना का उद्देश्य संगठित क्षेत्र

एनडीपी–1 के अंतर्गत वित्तपोषित की जारी प्रमुख गतिविधियों में निम्नलिखित शामिल हैं :

गतिविधियाँ	प्रमुख आउटपुट
उच्च अनुवांशिक गुणता (एचजीएम) वाले गोपशु तथा नर भैंसों का उत्पादन	•2500 एचजीएम सांडो का उत्पादन •400 बी विदेशी सांडो/समकक्ष भ्रूणों का अयनांत
'अ' और 'ख' श्रेणी के वीर्य केंद्र का सदृढ़ीकरण	अंतिम वर्ष में 100 मिलियन वार्षिक वीर्य खुराकों का उत्पादन
द्वार पर व्यवहार कृत्रिम गर्भाधान सेवाओं के लिए प्रायोगिक मॉडल	अंतिम वर्षा तक 3000 एमएआयटी द्वारा द्वार पर 4 मिलियन वार्षिक कृत्रिम गर्भादान किये गए।
खाद्य संतुलन कार्यक्रम	40000 गावों में 2.7 मिलियन दुधारू पशुओं की कवरेज
चारा विकास कार्यक्रम	7500 टन प्रमाणित/सत्यतापूर्ण लेबल किये गए चारा बीजों का उत्पादन 1350 सेलगे बनाना/चारा संरक्षण सम्बन्धी प्रदर्शन
ग्राम स्तर पर दुग्ध प्रापण प्रणाली का सहढ़ीकरण और विस्तार	23800 अतिरिक्त गावों तथा 1.2 मिलियन अतिरिक्त दुग्ध उत्पादन शामिल किये जाऐंगे।
परियोजना प्रबंधन तथा जानकारी	अखंड एकत्र करने सम्बन्धी मॉनिटरिंग, जानकारी तथा मूल्यांकन प्रणाली, उसका विश्लेषण तथा निर्वशित

के संकलन को मौजूदा 30 प्रतिशत से बढ़कर 65 प्रतिशत करना है।

इस प्रकार सरकार डेयरी विकास योजनाओ के मध्यम से डेयरी क्षेत्र का विकास कर रही है जो हमारी बढ़ती हुई आबादी व दुग्ध व दुग्ध उत्पाद की बढ़ती माँग के लिए बहुत जरूरी है। पर आज भी कई किसान विषेष रूप से सीमांत छोटे किसान जो दूध के मुख्य निर्माता हैं अभी भी सरकार द्वारा चलाई जाने वाली कई योजनाओ के बारे मे अनजान है। इस स्थिति में सरकार को चाहिए की वो उन्हे जागरूक बनाने के लिए विशेष प्रयास करे जिससे डेयरी विकास को अधिक लोकप्रिय और कम संसाधन वाले गरीब किसानो द्वारा यह अतिरिक्त आय और रोजगार के साधन के रूप मे अपनाए जाए।

09

बकरी पालन व्यवसाय

[1]भोपाल सिंह, [2]नीलम रानी, [3]प्रतिभा कुमारी, [4]रेखा रानी, [5]अनंदिता देबनाथ, [6]सी. एन. धारइया

- [1]शोध विद्यार्थी, डेरी प्रौद्योगिकी प्रभाग, भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद - भाकृअनुप - राष्ट्रीय डेरी अनुसंधान संस्थान, करनाल
- [2]हिन्दी व्याख्याता, विदेय कौर महाविद्यालय, भरतपुर, राजस्थान विश्वविद्यालय, जयपुर (राजस्थान)
- [3]शोध विद्यार्थी, वनस्पति शास्त्र प्रभाग, राजस्थान विश्वविद्यालय, जयपुर (राजस्थान)
- [4]सहायक प्रोफ़ेसर, वॉर्नर डेरी एवं खाद्य प्रौद्योगिकी विद्यालय, सेम हिग्गिंबोटोम कृषि, प्रौद्योगिकी एवं विज्ञान विश्वविद्यालय, इलाहाबाद (उ.प्र.)
- [5]सहायक प्रोफ़ेसर, डेरी प्रौद्योगिकी प्रभाग, पश्चिमी बंगाल पशु एवं मछली प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, मोहनपुर, कोलकाता (प.ब.)
- [6]सहायक प्रोफ़ेसर, डेरी प्रौद्योगिकी प्रभाग, सेठ मगनलाल छगनलल डेयरी विज्ञान महाविद्यालय, आनन्द कृषि विश्वविद्यालय, आनन्द (गुज.)

परिचयः

भारत एक कृषि प्रधान देश है और यहाँ पर लोग कृषि के साथ–साथ पशुपालन भी करते हैं। हमारे देश के अलग–अलग स्थानो पर अलग–अलग नस्ल की बकरियाँ पायी जाती हैं। दूध और माँस दोनों की प्राप्ति के लिए लोग इनको पालते हैं क्योंकि इन पर खर्च कम होता है और छोटे किसान भी इनको आसानी से पाल सकते हैं। बकरी के माँस की माँग पूरे विश्व में है और लगातार बढ़ती ही जा रही है। एक अनुमान के अनुसार बकरी पालन का व्यवसाय 9% की रफ्तार से बढ़ रहा है। चीन का बकरी पालन में विश्व में पहला स्थान है और वहाँ पर 20 करोड़ बकरियाँ पाली जाती है और भारत 13 करोड़ बकरी पालन के साथ दूसरे स्थान पर है।

बकरी पालन के लाभः

1. बकरी का आकार छोटा होने के कारण पालन के लिए जगह भी कम चाहिए।
2. यह शांत स्वभाव की होती है और रख–रखाव का खर्चा भी कम होता है।
3. इसकी उम्र 14–15 वर्ष और सही पालन–पोषण किया जाए तो 16–17 वर्ष तक होती है।
4. 12–14 महीने मे बकरी बच्चे देने लायक हो जाती है हर साल 2–5 बच्चे देती है और लगभग 8 सालों तक बच्चे देती है।
5. इसका गर्भकाल भी लगभग 150 दिनों का ही होता है।
6. एक बार बच्चे देने के बाद बकरी लगभग 2 साल तक दूध देती है।
7. इसके दूध मे केल्सियम पाया जाता है और हड्डियों के विकास के लिए जरूरी है।
8. अस्थमा और डेंगू के रोगियों के लिए बकरी का दूध वरदान साबित होता है।
9. बकरी के गोबर को खेतों मे उर्वरकता बढ़ाने के लिए उपयोग किया जाता है।

बकरी पालन के व्यवसाय को बढ़ाने के लिए सरकार कर्ज़ देती है ताकि रोजगार के अवसर बढ़ सके। सबसे ज्यादा बकरियाँ हिंदुस्तान के पश्चिमी बंगाल (2 करोड़), उत्तर प्रदेश (1.5 करोड़) और कर्नाटक (0.5 करोड़) राज्यो मे पायी जाती है।

बकरी पालन से संबन्धित आवश्यक जानकारियाँः

बकरी पालन करने से पहले बकरियों के लिए आवश्यक जगह, खाने–पीने का प्रबंध और बीमारियों की जानकारी तथा प्राथमिक उपचार के बारे मे पता करना जरूरी है। जैसे किः

1. बकरी के पैरो मे गीले रहने की समस्या है इसलिए उसे सूखे स्थान पर रखना चाहिए।
2. बकरियों का टीकाकरण समय–समय पर करवा लेना चाहिए।
3. सर्दियों में ठंड से बचाने का प्रबंध भी होना जरूरी है और बकरी के बैठने के लिए स्थान थोड़ा ऊँचा होना चाहिए।
4. पीने का पानी हमेशा उपलब्ध होना चाहिए और वो भी साफ होना चाहिए।
5. हरी घास और सूखे पत्तों के अलावा बबूल और शीशम के पत्ते भी बकरियों का भोजन है।
6. जल्दी वृद्धि करने के लिए उनको मक्का, खली, चोकर, गुड़ और नमक के मिश्रण से बना हुआ खाना दिन मे एक बार जरूर खिलाना चाहिए।

इन बातों का ध्यान रखते हुए आसानी से बकरी पालन किया जा सकता है।

बकरी की नस्लें:

भारत मे बकरी की बहुत सारी प्रजातियाँ पाई जाती है। लेकिन बरबरी, सिरोही, काली बंगाल और मारवाड़ी नस्ल की बकरियों का पालन सबसे ज्यादा किया जाता है क्योंकि ये अधिक दूध और माँस देती हैं। भारत मे पाई जाने वाली विभिन्न प्रजातियों का विवरण इस प्रकार है:

1. सिरोही: यह मध्यम आकार की हल्के भूरे से भूरे रंग की बकरी राजस्थान के सिरोही जिले और गुजरात के पालनपुर जिले में पाई जाती है। इसका पालन दूध और माँस दोनों के लिए किया जाता है।
2. जमुनापरी: यह धब्बेनुमा सफ़ेद रंग की बकरी 90–120 किलो तक की होती है।
3. सोजत: ये जमुनापरी बकरी का ही प्रकार है और सफ़ेद रंग की होती है। बिना सींग की इस बकरी को माँस के लिए पाला जाता है।
4. बीतल: यह बकरी लाल–भूरे रंग की होती है और शरीर पर सफ़ेद चक्कते होते है। ज्यादातर हरियाणा मे पाई जाती है और अमृतसरी बकरी के नाम से जानी जाती है। ये जमुनापरी से छोटी होती है लेकिन अधिक दूध देती है।
5. झकराना: ये बीतल बकरी से थोड़ी लंबी होती है तथा कानों पर सफ़ेद धब्बे होते है और इसे दूध के लिए पाला जाता है।
6. बरबरी: माँस प्राप्ति के लिए पाली जाने वाली यह बकरी मथुरा (उत्तर प्रदेश) मे पाई जाती है। सीधे सींगो वाली ये बकरियाँ मुख्यतः सुनहरे और सफ़ेद रंग मे पाई जाती है।
7. सुरती: महाराष्ट्र मे ही लेकिन बहुत कम पाई जाने वाली यह बकरी सफ़ेद रंग की होती है जिसके शरीर पर छोटे–छोटे चमकीले बाल होते है। इसका वजन 25–30 किलो होता है और यह रोज़ 2 किलो दूध देती है।
8. नाची: ये बकरियाँ चलती है तो ऐसा प्रतीत होता है जैसे कि नाच रही हो इसलिए इन्हे नाची के नाम से जाना जाता है जो कि पंजाब मे पाई जाती है। मध्यम आकार की इस लाल–भूरे रंग की बकरी का पालन माँस के लिए किया जाता है।
9. जलावादि: ये काले रंग की बकरियाँ गुजरात मे पाई जाती है। इनके कानों पर सफ़ेद धब्बे और शरीर पर चमकीले लंबे बाल होते है इसलिए इन्हें तारा बकरी भी कहा जाता है। इस प्रजाति को दूध, माँस और रेशे प्राप्ति के लिए पाला जाता है।
10. चिगु: सफ़ेद रंग की मूड़े हुए सींग वाली यह प्रजाति उत्तर प्रदेश और उत्तराखंड मे पाई जाती है। इसे दूध, माँस और कश्मीरी ऊन प्राप्ति के लिए पाला जाता है।

बकरी के दूध की विशेषताएँ:

बकरी के दूध मे गाय के दूध से कम मात्रा में दुग्ध शर्करा पाई जाती है इसलिए इसका उपयोग बच्चों के लिए भी लाभदायक होता है। बकरी के दूध का स्वाद और खुशबू इसमे उपस्थित बेहनिक वसीय अम्ल के कारण होती है जोकि इसे अन्य दूध से अलग करता है। तालिका 1 और तालिका 2 मे बकरी के दूध का संयोजन और भौतिक गुणों को दर्शाया गया है।

तालिका 1: बकरी के दूध का सामान्य संयोजन

संघटक	मान (प्रतिशत)
पानी	87–89
वसा	4.25
दुग्ध शर्करा	4.27
प्रोटीन	3.52
खनिज	0.86

बकरी के दूध से विभिन्न डेयरी एवं खाद्य उत्पाद बनाए जा चुके है। इसका उपयोग दही, पनीर, घी, चीज, मिठाइयाँ आदि बनाने मे किया जाता है।

तालिका 2: बकरी के दूध के भौतिक गुण

भौतिक गुण	मान (प्रतिशत)
अम्लीयता (प्रतिशत दुग्धिक अम्ल)	0.14 से 0.23
पी.एच.	6.5 से 6.8
विशिष्ट गुरूत्व	1.029 से 1.039
चिपचिपाहट (सेंटी पोइज)	2.12
सतह तनाव (डाइन प्रति सेंटीमीटर)	52
अपवर्तक सूचकांक	1.450+–0.39
हिमांक बिंदु (डिग्री सेल्सियस)	–0.540 से –0.573
विद्युत चालकता (मिली मोह)	0.0043 से 0.0139

बकरी के दूध मे मानव के दूध के समान ही बी–केसीन होता है। इसमे गाय के दूध से 20–40% अधिक टौरीन अमीनो अम्ल पाया जाता है जो कि केल्सियम के आवागमन, परासरण नियंत्रण, खूनदवाब नियंत्रण और पित्त लवण बनाने मे मदद करता है। बकरी का दूध जीवाणुरोधी, अज्वलनशील, कर्करोग निरोधी आदि गुणों से भरपूर होता है।

निष्कर्ष : इस दूध में उपलब्ध घटकों की गुणवत्ता और चिकित्साकीय अनुप्रयोगों के कारण इसका उपयोग डेयरी खाद्य पदार्थ बनाने में किया जाता है। देश में दूध की बढ़ती मांग को पूरा करने के लिए बकरी का दूध एक बेहतर विकल्प है क्योंकि इसके पालन में लागत कम लगती है और यह लोगों को रोजगार के नये अवसर देने में भी सहायक है।

यदि आप निष्पक्ष एवं ईमानदार हैं, तो आपको किसी से डरने की ज़रूरत नहीं है।

10 किण्वित डेरी खाद्य पदार्थों में प्रोबायोटिक्स और प्रीबायोटिक्स की उपयोगिता एवं महत्ता

जगरानी मिंज, शिल्पा विज, बृजपाल सिंह, अरूण बेनीवाल, प्रियंका सैनी, शार्यंति मिंज एवं श्रीया मेहता

प्रोबायोटिक्स अवधारणा :–

एक शताब्दी पहले, ऐली मेटक्नेकॉफ (पेरिस के पाश्चर संस्थान में एक रुसी वैज्ञानिक, नोबेल पुरस्कार विजेता और प्रोफेसर) ने यह दावा किया, कि लैक्टिक एसिड बैक्टीरिया (एल.ए.बी.) दीर्घायु को बढ़ावा देने के लिए एवं स्वास्थ्य लाभ प्रदान करने में सक्षम होते हैं। उन्होंने यह अध्ययन किया, कि कैसे लैक्टिक एसिड बैक्टीरिया स्वास्थ्य में सुधार को बढ़ावा देते हैं। उन्होंने लैक्टिक एसिड बैक्टीरिया के स्वास्थ्य लाभ के लिए वैज्ञानिक तर्क एवं सुझाव दिया जो कि 1907 में प्रकाशित अपनी पुस्तक जीवन की लम्बी उम्र में वर्णित है। उन्होंने सुझाव दिया कि आंतों के स्वास्थ्य वर्धक जीवाणुओं के फेरबदल के द्वारा आंत के हानिकारक एवं जहरीले पदार्थ तथा उम्र के बढ़ाव में बदलाव किया जा सकता है। प्रोटियोलिटिक बैक्टीरिया जैसे कि क्लोस्ट्रीडियम द्वारा उत्पन्न जहरीले पदार्थ फीनोल, इन्डोल और अमोनिया इत्यादि स्वास्थ्य वर्धक लैक्टिक बैक्टीरिया के द्वारा अपचयित किये जाते हैं। उन्होंने एक बैक्टीरिया की मदद से किण्वित आहार विकसित किया जो कि ''बल्गेराई बैसीलस'' कहलाता है।

सन् 1917 में सर अलेक्जेण्डर फ्लेमिंग की पेनिसिलीन की खोज के पहले, जर्मनी के प्रोफेसर अल्फ्रेड निस्सल ने प्रथम विश्वयुद्ध के दौरान एक सैनिक के मल से एक हानिरहित उपभेद ''इस्केरिशिया कोलाई'' को अलग किया जो कि आंत्रशोध से पीड़ित नहीं था जबकि उस दौरान पेचिश का गंभीर प्रकोप था। उस समय आंत्रपथ के विकार का इलाज करने के लिए अक्सर जीवित हानिरहित बैक्टीरिया का उपयोग किया जाता था या आंतों के बैक्टीरिया का बदलाव किया जाता था। 1917 में उपभेद ''इस्केरिशिया कोलाई'' गैर–लैक्टिक एसिड बैक्टीरिया के उदाहरणों में से एक था।

पाश्चर संस्थान के हेनरी टिस्सिएर ने स्तनपायी शिशुओं से एक पहला उपभेद बिफिडो बैक्टीरियम अलग किया और उसका नामांकन जीवाणु बैसीलस बिफिडस कम्युनिस किया गया। टिस्सिएर ने यह दावा किया कि उपभेद बिफिडो बैक्टीरियम, दस्त के कारक प्रोटियोलिटिक बैक्टीरिया को विस्थापित करने में सक्षम होते हैं। उन्होंने यह सलाह दी कि जो भी शिशु दस्त से पीड़ित होते हैं उन्हें बिफिडो बैक्टीरिया खिलाना चाहिए।

प्रोबायोटिक्स की परिभाषा :–

शब्द प्रोबायोटिक (मूल लैटिन शब्द ''प्रो'' = के लिए'' और ग्रीक शब्द ''बायोस'' =''जीवन'') सबसे पहली बार 1954 में स्वास्थ्य जीवन को इंगित करने के लिए इस्तेमाल किया गया था। एंटीबायोटिक दवाओं के विपरीत, प्रोबायोटिक को इस तरह से परिभाषित किया गया कि, वह कारक जो सूक्ष्म जीवों द्वारा व्युत्पन्न होता है और अन्य जीवों के विकास को प्रोत्साहित करता है। 1989 रॉय फुलर ने प्रोबायोटिक्स की जरूरतों पर बल दिया और कहा कि इनको ग्रहण करने पर ये मेजबान पर लाभदायक प्रभाव डालते हैं। आजकल बहुत सारी परिभाषाएँ उपलब्ध हैं जो कि प्रोबायोटिक के विशिष्ट गुण को वर्णित करती है। जिनमें से कुछ यहाँ दिए गए हैं –

1. जीव एवं उनके यौगिक, जो आंत के सूक्ष्म जैविक संतुलन में योगदान देते हैं। **– 1974, पार्कर**
2. जीवित जैविक खाद्य पदार्थ/खाद्य पूरक जो आंत का जैविक संतुलन करके मेजबान पर लाभदायक प्रभाव दिखाते हैं। **– 1989, फुलर**
3. प्रोबायोटिक्स वे सूक्ष्मजीव हैं, जो पर्याप्त मात्रा में ग्रहण करने पर मेजबान को स्वास्थ्य लाभ प्रदान करते हैं। – **(एफ. ए. ओ./डब्ल्यू. एच. ओ., 2002)**

प्रोबायोटिक उपभेदों के चयन के लिए प्रवाह चार्ट :–

चरण–1

- **भौतिकी एवं अनुवांशिकी विधियों से उपभेदों की पहचान करना**
  - ✓ जाति, उपजाति और उपभेद

उपभेद को मान्यता प्राप्त अंतर्राष्ट्रीय स्तर के संग्रहालय में जमा करना

⬇

चरण–2

उत्पादन और भंडारण के दौरान जीवन क्षमता

⬇

चरण–3

- **संभावित प्रोबायोटिक उपभेदों की स्क्रीनिंग**
  - ✓ इन विट्रो परीक्षण (लघु पी.एच. पर प्रतिरोध, पित्त अम्ल और अग्नाशय रस की उपस्थिति में प्रतिरोध)
  - ✓ हानिकारक बैक्टीरिया का दमन/कटौती (रोगाणुरोधी, गतिविधि)
  - ✓ प्रतिरक्षा प्रतिक्रिया में बदलाव

आंतों की उपकला पर ठहराव करना

⬇

चरण–4

- **मान्य पशु मॉडल में इन विवो अध्ययन**
  - ✓ स्थिति 1 – सुरक्षा
  - ✓ स्थिति 2 – प्रभावकारिता (गुण–कारिता)

स्थिति 3 – प्रभावशाली

⬇

चरण–5

- **प्रोबायोटिक खाद्य पदार्थों का उत्पादन**
  - ✓ नामांकन की आवश्यकता
  - ✓ जाति, प्रजाति एवं उपभेद
  - ✓ प्रोबायोटिक्स की न्यूनतम जीवित संख्या जिस पर अचल जीवन के अंत तक प्रभावकारिता का दावा किया जा सके
  - ✓ स्वास्थ्य का दावा
  - ✓ हिस्सा परिमाप
  - ✓ संग्रहण

इन सभी परिभाषाओं में से एफ. ए. ओ./डब्ल्यू. एच. ओ. पैनल (2002) द्वारा संयुक्त रूप से प्रस्तावित परिभाषा को व्यापक रूप से इस्तेमाल और स्वीकृत किया गया है। भारत में प्रोबायोटिक्स के अनुसन्धान के लिए, विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी मंत्रालय के जैव प्रौद्योगिकी विभाग के साथ–साथ ''भारतीय चिकित्सा अनुसन्धान परिषद (आई. सी. एम. आर.)'' एक शीर्ष निकाय की तरह प्रोबायोटिक्स के निर्माण, समन्वयन एवं जैव चिकित्सा अनुसन्धान को बढ़ावा देने के लिए एवं भारतीय खाद्य पदार्थों में प्रोबायोटिक्स के मूल्यांकन के लिए दिशा–निर्देश प्रस्तावित करता है तथा प्रोबायोटिक्स से संबंधित नियम कानून को नियंत्रित करता है। भारत में प्रायः प्रोबायोटिक्स एवं प्रोबायोटिक से संबंधित पदार्थों के लिए स्वीकृत आई. सी. एम. आर. के दिशा–निर्देशों का पालन किया जाता है और जिसका उल्लेख प्रवाह चार्ट में किया गया है।

व्यावसायिक रूप में उपलब्ध प्रोबायोटिक उपभेद एवं उनके उत्पाद :–

उपभेद	स्त्रोत
लैक्टोबैसिलस एसिडोफिलस एन.सी.एफ.एम.	रोडिया इंक (मैडिसन विस्कॉन्सिन)
लैक्टोबैसिलस एसिडोफिलस डी.डी.एस. 1	नेब्रास्का जामन, इंक (लिंकन, नेब्रास्का)
लैक्टोबैसिलस एसिडोफिलस एल.ए. 1	क्रिस हैनसेन, इंक (मिलवॉकी, विस्कॉन्सिन)
लैक्टोबैसिलस पाराकेसाई सी.आर.एल. 431	
बिफिडोबैक्टीरियम लैक्टिस बी.बी. 12	
लैक्टोबैसिलस केसाई इम्यूनिटास 8	डैनॉन (पेरिस, फ्रांस)
लैक्टोबैसिलस केसाई शिरोटा	याकुल्तयाकुल्त (टोक्यो, जापान)
बिफिडोबैक्टीरियम ब्रेवी उपभेद याकुल्त	
लैक्टोबैसिलस फरमेन्टम आर. सी. 14	यूरेक्स बायोटेक (लंदन, ओंटारियो, कनाडा)
लैक्टोबैसिलस रहामनोसस जी. आर. 1	
लैक्टोबैसिलस प्लान्टारम 299 व्ही.	प्रोबि ए.बी. (लुंद, स्वीडन)
लैक्टोबैसिलस रहामनोसस 271	
लैक्टोबैसिलस जोहनसॉनाई एल. ए. 1	नेस्ले (लॉजेन, स्विट्जरलैंड)
लैक्टोबैसिलस रयूटेराई ए. डी. 2112	बायोजिया (रैले)
लैक्टोबैसिलस रहामनोसस जी. जी.	वालियो डेयरी (हेलसिंकी, फिनलैंड)

प्रोबायोटिक्स का विनियमन करने के लिए भारत में मौजूदा कानून ढांचे :–

भारतीय प्रोबायोटिक बाजार लगभग 1.2 अरब रूपये के लगभग है और सलाना लगभग 40 प्रतिशत की दर से बढ़ रहा है। हालांकि वर्तमान समय में खाद्य पदार्थों का विनिमयन के लिए खाद्य कानून मौजूद है, जो इन्हें नियंत्रित करते हैं, वे इस प्रकार हैं :–

- खाद्य अपमिश्रण की रोकथाम अधिनियम, 1952 (पी. एफ.ए. अधिनियम) और जो कि नियम 1955 के जैसे

ही है। (पी.एफ.ए. नियम)

- विशिष्ट खाद्य उत्पाद अधिनियम, जो आवश्यक वस्तु अधिनियम 1955 के अंतर्गत आता है।
- वजन और मापन का मानक अधिनियम, 1976 और इसी तरह नियम 1977

विभिन्न संबंधित कार्यालय भी शामिल हैं :–

- स्वास्थ्य और परिवार कल्याण मंत्रालय
- खाद्य प्रसंस्करण उद्योग मंत्रालय
- उपभोक्ता मामले, खाद्य और सार्वजनिक वितरण मंत्रालय
- कृषि मंत्रालय
- खाद्य सुरक्षा और मानक अधिनियम, 2006

भारतीय खाद्य सुरक्षा और मानक प्राधिकरण (एफ.एस.एस.ए.आई.) एक एकल नियामक संस्था है, जो खाद्य कानून के समेकित है। यह अधिनियम जब पूर्णतः कार्यान्वित किया गया, तो इसने खाद्य अपमिश्रण निवारण अधिनियम और उपरोक्त खाद्य विशिष्ट कानूनों की जगह ले लिया। इस तरह भारतीय खाद्य पदार्थों की सुरक्षा एवं खाद्य पदार्थों से संबंधित मुद्दों को विनियमित करने के लिए एक शीर्ष नियामक प्राधिकरण की स्थापना की गई जो अन्य अधीनस्थ संस्थाओं की तरह कार्य को संचालित करती है।

खाद्य उत्पादों की न्यूनतम गुणवत्ता और मात्राओं की सूची बनाने के लिए वर्तमान में पी.एफ.ए. नियम सक्रिय है। पी.एफ.ए. नियम खाद्य उत्पादों के अंकन और पैकेजिंग के लिए भी आदेश जारी करता है और खाद्य उत्पादों के बारे में अधिक से अधिक जानकारी उपलब्ध कराता है। अन्य शब्दों में, मूल तथा आयातक की सामग्री, पोषण संबंधी जानकारी, समाप्ति, निर्माता और विनिर्माण इकाई का विवरण और आयातक देश (आयातित खाद्य पदार्थ के लिए) से संबंधित सभी जानकारी उपभोक्ता तक पहुंचाने का कार्य करता है।

प्रोबायोटिक को विनियमित करने की आवश्यकता :–

खाद्य उत्पादों को भोजन के रूप में बेचा जाता है, लेकिन इनके उपचारात्मक प्रभाव साधारण खाद्य वस्तुओं के दायरे से परे होते हैं। खाद्य कानून के तहत वे परिकल्पित या दावा करने का इरादा करते हैं पर वे आमतौर पर दवाओं के विकल्प के रूप में नहीं माने जाते हैं। कई देशों में खाद्य और औषधि प्रशासन प्रोबायोटिक्स के रोगों का इलाज करने की क्षमता के बारे में निश्चित मानक और दिशा–निर्देशों के अनुसार गुणवत्ता का दावा करता है। वहीं प्रोबायोटिक्स की यह क्षमता के बारे में विभिन्न निर्माताओं के द्वारा भी दावा किया जाता है। भारत में भी कभी–कभी डॉक्टरों द्वारा उपचार के लिए सलाह के तौर पर प्रोबायोटिक खाद्य पदार्थ दिया जाता है। हाल ही में, भारत में प्रोबायोटिक्स खाद्य बाजार को बढ़ाने और खाद्य उत्पादों में प्रोबायोटिक्स के उपयोग को सम्बोधित करने के लिए अलग–अलग नियमों के अभाव के कारण अब संयुक्त रूप से नियामकों को दिशा–निर्देश देने के लिए एवं नियमों का पालन करने के लिए पूर्ण रूप से संचालन और नियंत्रण कार्य किये जा रहे हैं।

प्रोबायोटिक बैक्टीरिया के संभावित स्वास्थ्य लाभ एवं उनकी कार्यात्मक विधि :–

अतीत में चिकित्सीय अध्ययन करके यह पाया गया है कि आंतों में संक्रमण और सूजन, पेट के कैंसर, स्त्री रोग संक्रमण और एलर्जी जैसे रोगों में प्रोबायोटिक्स के लाभों का प्रदर्शन बेहद सराहनीय रहा है। जैसे कि हम जानते हैं, प्रोबायोटिक बैक्टीरिया और प्रोबायोटिक खाद्य पदार्थ स्वस्थ आंत के लिए बहुत उपयोगी होते हैं। कई बीमारियों के खिलाफ कार्यात्मक कार्रवाई करने के कारण प्रोबायोटिक का महत्व बढ़ जाता है। विशेष स्वास्थ्य लाभ एवं उनकी कार्यात्मक कार्रवाई अलग–अलग उपभेदों में अलग अलग होती है। प्रोबायोटिक्स की कार्यात्मक कार्रवाई एवं प्रभावकारिता उनकी पेट की अम्लीय वातावरण और ग्रहणी की क्षारीय वातावरण में जीवित रहने से संबंधित होती है। जैसे कि हम जानते हैं, उनकी क्षमता आंत के आंत म्युकस से चिपक जाने और उपनिवेश करने की होती है। प्रोबायोटिक्स की विशिष्ट खुराक एक से दस अरब कॉलोनी बनाने की इकाई (सी.एफ.यू.) होती है। उनके प्रभाव सूक्ष्म एवं जटिल वातावरण में बने रहते हैं, और वो भी कई बार एक सप्ताह तक दिखाई देते हैं। यह बहुत जरूरी है, कि बैक्टीरिया ग्रहण करते समय जीवित अवस्था में होना चाहिए इसलिए उनका भण्डारण और परिवहन उपयुक्त परिस्थितियों में होना चाहिए। सामान्यतः प्रोबायोटिक बैक्टीरिया विपरीत परिस्थितियां सहन कर लेते हैं। पेट फूलना और कब्ज को छोड़कर उनके कोई भी विपरीत प्रभाव नहीं होते हैं।

स्वास्थ्य लाभ	प्रतिपादित कार्यात्मक कार्रवाई
लैक्टोस के पाचन में सहायता	जीवाणु के लैक्टेस एंजाइम द्वारा जलीय–विशलेषण के कारण
आंत के रोगजनकों का प्रतिरोध	➢ स्त्रावी प्रतिरक्षा प्रभाव ➢ औपनिवेशीकरण का प्रतिरोध ➢ रोगजनकों के लिए अनुकूल वातावरण में बदलाव (कम पी.एच., लघु श्रृंखला वसीय अम्ल, बैक्टीरियोसिन्स) ➢ विष बाध्यकारी जगहों का बदलाव ➢ आंत के लाभदायक जीवाणुओं की संख्याओं को बढ़ाना और संतुलन स्थापित करना ➢ रोगजनकों के आतों की उपकला के ठहराव पर दखल ➢ आंत म्यूकस को बढ़ावा देना ➢ रोगजनक बैक्टीरिया की वृद्धि या उपकला बंधन/आक्रमण का दबाव करना
पेट के कैंसर का विरोधात्मक प्रभाव	➢ उत्परिवर्तजन को बांध कर रखना या बाध्यकारी प्रभाव ➢ कैसरजन को निष्क्रिय करना ➢ आंत के लाभदायक जीवाणुओं द्वारा उत्प्रेरक उत्पादन करके कैसरजन को रोकना ➢ अतिरिक्त पित्त नमक की मात्रा में प्रभाव डालना ➢ रसायनों द्वारा उत्पन्न ट्यूमर के शुरूआत और बढ़ावा को कैसरजन के बंधक प्रभाव द्वारा रोकना
छोटी आंत के लाभदायक जीवाणुओं की अतिवृद्धि पर प्रभाव	➢ जीवाणुओं के अतिवृद्धि पर प्रभाव डालते हैं और विषाक्त उपापचयी के उत्पादन को कम करते हैं। ➢ जीवाणुओं की अति वृद्धि को रोकने के लिए अनुकूल वातारण में बदलाव करते हैं, ताकि कम वृद्धि हो सके।
प्रतिरक्षा प्रणाली में उतार–चढ़ाव/बदलाव	➢ संक्रमण और ट्यूमर के खिलाफ गैर विशिष्ट रक्षा का सुदृढ़ीकरण करना ➢ विशिष्ट प्रतिरक्षा प्रतिक्रिया में प्रतिजन पर प्रभाव डालना ➢ रोटावायरस पीड़ित शिशु में विशेष स्रावी इम्म्युनोग्लोब्युलिन "ए" के परिसंचरण को बढ़ावा देते हैं। ➢ रक्त में प्रवाहित ग्रैनुोलॉसाइट्स, अविशिष्ट इम्मुनोफैगोसाइट्स की गतिविधि में वृद्धि करते हैं। ➢ वायरल संक्रमण के दौरान आंतों की प्रतिरक्षा प्रतिक्रिया को शक्ति प्रदान करना ➢ इंटरफेरॉन और परिधीय रक्त मोनोसाइट्स की आवृत्ति में वृद्धि करना ➢ प्रतिरक्षा में सुधार और रोगों से प्रतिरोधकता बढ़ाना ➢ सुरक्षात्मक साइटोकाइन्स के अंतर्गत इंटरल्यूकिन (आई. एल. – १०) और परिवर्तित वृद्धि कारक (टी.जी.एफ.) को प्रोत्साहित करना और समर्थक भड़काऊ साइटोकाइन्स का दमन करना
एलर्जी	➢ रक्त प्रवाह में प्रतिजन स्थानांतरण की रोकथाम करना ➢ प्रतिजनों का आंत म्यूकोसा में ठहराव, उपनिवेशन और कार्य में बाधा उत्पन्न कर आंत्र संक्रमण एवं खाद्य एलर्जी के प्रबंधन में मदद करना

चर्बी युक्त रक्त/कोलेस्ट्रॉल और हृदय रोग	➢ जीवाणु कोशिका के अंदर ही कोलेस्ट्रॉल को आत्मसात करना ➢ पित्त नमक हाइड्रोलेस द्वारा डीकॉन्जुगेशन के कारण पित्त लवण के उत्सर्जन में वृद्धि करना ➢ एंटीऑक्सीडेंट प्रभाव
उच्च रक्तचाप का विरोधात्मक प्रभाव	➢ दूध के प्रोटीन पर पेप्टाइडेस कार्रवाई के द्वारा उत्पन्न ट्राईपेप्टाइड जो कि एंजियोटेंसिन – १ परिवर्तित एंजाइम को बाधित करता है। ➢ जीवाणु कोशिका झिल्ली के घटक एंजियोटेंसिन – परिवर्तित एंजाइम की तरह कार्य करते हैं। ➢ तनाव के प्रभाव को कम करना।
मूत्रजननांगी संक्रमण	➢ मूत्र और योनिमार्ग कोशिकाओं पर अनसंजन ➢ औपनिवेशीकरण का प्रतिरोध ➢ अवरोधकों का उत्पादन करना (हाइड्रोजन परॉऑक्साइड, जैविक पृष्ठ सक्रिय कारक)
हेलिकोबैक्टर पाइलोरी जीवाणु की वजह से संक्रमण को रोकना	➢ हेलिकोबैक्टर पाइलोरी के अवरोधकों का उत्पादन करना (लैक्टिक अम्ल और अन्य)
यकृत मस्तिष्क विकृति विष का निष्प्रभावन करना	➢ आंत के जीवाणुओं द्वारा यूरीयेस उत्पादन का विरोध करना ➢ कुछ विशिष्ट प्रोटोबायोटिक एंजाइमों के स्त्रावण द्वारा जीवाणु जनित पदार्थों का पाचन
दस्त की रोकथाम	➢ दस्त और अन्य पाचन संबंधी परेशानियों में प्रभावकारिता दिखाना ➢ पाचन संबंधित रोगों में कमी करना जैसे कि पेट की क्रमिक वृत्तों से उत्तेजित सिकुड़न को कम करना (पाचन में सुधार करके कब्ज को कम करना) ➢ पाचक एंजाइमों की आपूर्ति (खाद्य पदाथों को तोड़ने के लिए) ➢ वायरल/ऐंटीबायोटिक से संबंधित दस्त का उन्मूलन करना**सूजन आंत्र रोग** ➢ सूजन पेट के उत्तकों मे टी–सहायक (टी. एच. –1) के प्रवास को सीमित करना

प्रीबायोटिक्स :–

सर्वप्रथम जापान में किण्वित करने योग्य ओलिगोसैकाराइड को सुअरों के बच्चों को खिलाया जाता था, और बाद में 1990 के दशक के दौरान, मानव दूध में ओलिगोसैकाराइड की पहचान की गई। हालांकि, 1995 तक प्रीबायोटिक की अवधारणा को आंत जीवाणुओं में बदलाव के लिए नहीं पेश किया गया था। यद्यपि बहुत सारी परिभाषाएं प्रीबायोटिक के लिए प्रतिपादित की गई है, लेकिन अब तक एक भी परिभाषा पर पूर्णतः समझौता नहीं हुआ है। अभी हाल ही में प्रोबायोटिक्स और प्रीबायोटिक्स की अंतर्राष्ट्रीय वैज्ञानिक एसोशिएशन की बैठक वर्ष 2010, में सहमति हुई थी कि "आहारयुक्त प्रीबायोटिक, एक चुनिंदा किण्वित घटक है, जो जठरांत्र के जीवाणुओं की संरचना और/या गतिविधि में विशिष्ट परिवर्तन करता है, इस प्रकार मेजबान को स्वास्थ्य लाभ मिलता है।"

प्रीबायोटिक यौगिक भोजन के साथ–साथ पाचन तंत्र में प्रवेश करते हैं। फिर वे पेट और छोटी आंत में जाते हैं, लेकिन वे सरल पदार्थों में नहीं टूटते हैं और न ही अवशोषित होते हैं। ये प्रीबायोटिक अधिकांशतः भोजन के पोषक तत्वों की तरह, आंत में

रहने वाले लाभदायक प्रोबायोटिक जीवाणुओं के ऊर्जा के स्त्रोत के रूप में उपयोग आते हैं। क्योंकि लाभदायक प्रोबायोटिक जीवाणु इन अपच यौगिकों को खाते हैं और वे आंतों में लंबे समय तक जीवित रहने में सक्षम होते हैं। इस प्रकार प्रीबायोटिक्स, प्रोबायोटिक जीवाणुओं की वृद्धि का समर्थन करता है, और इनका यह संयोजन "सिनबायोटिक" कहलाता है।

प्रीबायोटिक्स मल की आवृत्ति और वजन को बढ़ाने में मदद करता है। लघु श्रृंखला वसीय अम्ल (एस.सी.एफ.ए.) के उत्पादन को बढ़ावा देता है, और जीवाणु लैक्टोबैसिलाई एवं बिफिडोबैक्टीरिया के स्वास्थ्य और वृद्धि को उत्साहित करता है। इस प्रकार प्रीबायोटिक्स एंटीबायोटिक चिकित्सा के दौरान या उसके बाद आंत के अव्यवस्थित लाभदायक जीवाणुओं को पुनः व्यवस्थित एवं सुधार करने का कार्य करते हैं। प्रीबायोटिक इनुलिन हमारे शरीर के रक्त शर्करा और ट्राइग्लिसराइड्स के स्तर को कम करता है तथा कैल्शियम के अवशोषण को बढ़ाता है। अधिकांशतः अध्ययन किये गए प्रीबयोटिक्स निम्नलिखित हैं :–

- इनुलिन
- फ्रुक्टो–ऑलिगोसैकाराइड्स (एफ.ओ.एस.)
- गैलाक्टो–ऑलिगोसैकाराइड्स (जी.ओ.एस.)
- लैक्टुलोस

निष्कर्ष :–

प्रोबायोटिक्स और प्रीबायॉटिक्स बहुत महत्वपूर्ण हैं क्योंकि इनके बहुत सारे स्वास्थ्य लाभ हैं जो कि ऊपर वर्णित किया गया है। आजकल प्रोबायोटिक विभिन्न प्रकार के खाद्य पदार्थों में और खुराक के रूप में भी उपलब्ध है। वर्तमान में बीमारियों की रोकथाम करने के लिए सभी उम्र के लोगों के स्वास्थ्य का ध्यान रखते हुए प्रोबायोटिक बाजार भरा हुआ है। प्रोबायोटिक्स के उचित रोगनिरोधी एवं चिकित्सीय उपयोगों और उनके वांछित स्वास्थ्य संबंधित लाभदायक प्रभावों को उपभोकताओं तक पहुँचाने और मार्गदर्शन करने के लिए संबंधित पेशेवर मौजूद हैं।

हाल के वर्षों में, प्रोबायोटिक्स एवं प्रीबायॉटिक्स की खाद्य अवधारणाओं में अनुसन्धान के रूप में वाणिज्यिक तौर पर वृद्धि हुई है। इस तरह अनुसन्धान में वृद्धि, हमारी समझ और खाद्य युक्त प्रोबायोटिक की खपत स्वास्थ्य लाभ के संकेत का सबूत है जो कि एक विशिष्ट प्रोबायोटिक के आदर्श गुण को सिद्ध करने में सफल हुआ है। फिर भी कई परीक्षणों के द्वारा अधिक से अधिक और अच्छी तरह से नियंत्रित चिकित्सीय परीक्षणों का विस्तृत रूप से अध्ययन करना आवश्यक है ताकि जठरांत्र पारिस्थितिकी तंत्र की कार्यप्रणाली और प्रोबायोटिक दोनों के काम को सटीक और सरल रूप से समझा जा सके।

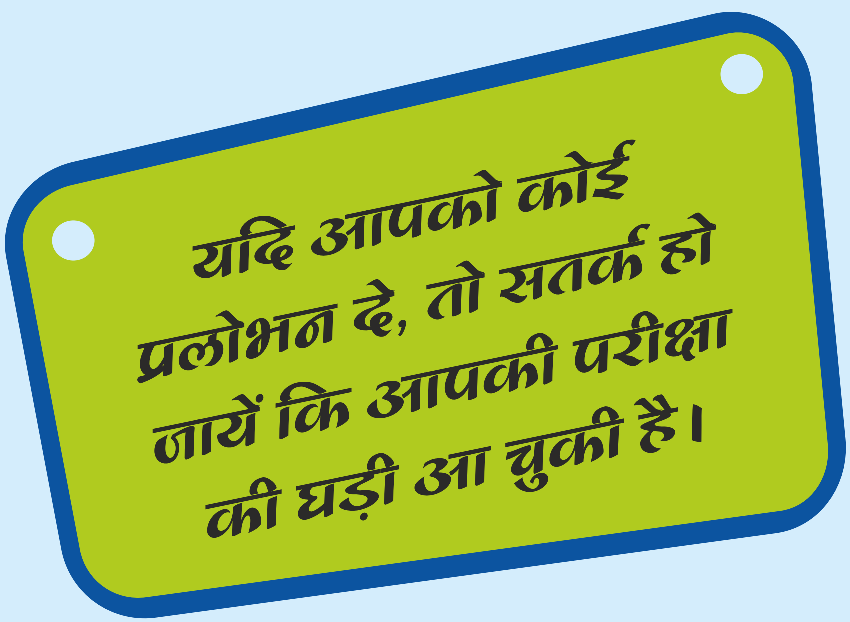

11 दुग्ध जगत में ऊँट प्रजाति का महत्व

[1]भोपाल सिंह, [2]रेखा रानी, [3]प्रतिभा कुमारी, [1]राहुल निगम, [4]अनंदिता देबनाथ, [1]जूई लोध एवं [5]सी. एन. धारइया

- [1]शोध विद्यार्थी, डेरी प्रौद्योगिकी प्रभाग, भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद - राष्ट्रीय डेयरी अुनसंधान संस्थान, करनाल (हरियाणा)
- [2]सहायक प्रोफ्रेसर, वॉर्नर डेरी एवं खाद्य प्रौद्योगिकी विद्यालय, सेम हिग्गिंबोटोम कृषि, प्रौद्योगिकी एवं विज्ञान विश्वविद्यालय, - इलाहाबाद (उत्तर प्रदेश)
- [3]शोध विद्यार्थी, वनस्पति शास्त्र प्रभाग, राजस्थान विश्वविद्यालय, जयपुर (राजस्थान)
- [4]सहायक प्रोफ्रेसर, डेरी प्रौद्योगिकी प्रभाग, पश्चिमी बंगाल पशु एवं मछली प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, मोहनपुर, कोलकाता - (पश्चिमी बंगाल)
- [6]सहायक प्रोफ्रेसर, डेरी प्रौद्योगिकी प्रभाग, सेठ मगनलाल छगनलल डेरी विज्ञान महाविद्यालय, आनन्द कृषि विश्वविद्यालय, आनन्द (गुजरात)

1. परिचयः

प्राचीन काल से ही दूध हमारे भोजन का एक अभिन्न भाग रहा है। जानवरों को दूध, माँस और बोझा ढोने के लिए पाला जाता रहा है। पूरे विश्व के कुल पशुधन का 17% पशुधन जबकि पूरे विष्व के क्षेत्रफल का केवल 2.4% क्षेत्रफल भारत में है। दूध के उत्पादन (1377 लाख टन) और खपल में भारत पूरे संसार मे पहले स्थान पर है और पूरे विश्व का 16% दूध भारत मे उत्पादित होता है। भारत में दूध उत्पादन 3.3% जबकि खपत 5% की वार्षिक दर से बढ़ रही है जो कि मुख्यतः गोवंशीय प्रजातियों से ही पूरी की जा रही है। इसलिए हमें दूध के अन्य विकल्प ढूँढने की जरूरत है ताकि हर क्षेत्र में दूध उपलब्ध करवाया जा सके और मांग और खपत के बीच की दूरी को कम किया जा सके। मौसम में विविधता की वजह से अतिशुष्क और अतिशीतित क्षेत्रों में दूध की मांग पूरी नहीं हो पाती है इसलिए ऐसे क्षेत्रों में ऐसे दुग्ध उत्पादक जानवरों की जरूरत है जो कि मांग को पूरा कर सकें और साथ ही पौष्टिक भी हो। इसलिए ऊँट एक बेहतर विकल्प है जो कि इस प्रकार के क्षेत्रों में पाया जाता है।

एशिया और अफ्रीका मे ऊँट बहुतायत मेंपाये जाते है और इनमेंइसकी संख्या मुख्यतः चीन, मंगोलिया, सोवियत संघ रूस, भारत, पाकिस्तान, सुडान, सोमालिया, नाइजीरिया, पष्चिमी सहारा, मिस्र, लीबिया एवं अफगानिस्तान आदि क्षेत्रों में अधिक है। पूरे संसार में ऊँट प्रजाति सबसे ज्यादा सोमालिया में पायी जाती है। भारत में यह मुख्यतः राजस्थान और गुजरात के मरूस्थलीय भागों, जम्मू और कश्मीर, लद्दाख आदि क्षेत्रों में पायी जाती है। खाद्य एवं कृषि संगठन के अनुसार 2008 में पूरे विश्व में ऊँटों की संख्या लगभग 200 लाख थी और 2010 मेंड्रोमेडरी प्रजाति के ऊँटों की संख्या 150 लाख अनुमानित की गयी है।

2. ऊँट की प्रजातियाँः

विश्व के विभिन्न भागों में ऊँट की कई प्रजातियाँ पायी जाती है लेकिनभारत में ज्यादातर इसकी दो प्रजातियाँ ही पायी जाती है:

2.1. बैक्टेरियन प्रजातिः यह मुख्यतः ठंडे प्रदेशों जैसे कि जम्मू और कश्मीर, लद्दाख की नोबरा घाटी आदि जगहोंपर पायी जाती है और इसके शरीर में दो कूबड़ होते है।

2.2. ड्रोमेडरी प्रजातिः यह मुख्यतः राजस्थान और गुजरात के मरूस्थलीय भागों (बीकानेर, जैसलमेर, कच्छ) और अन्य भागों में पायी जाती है और इसके शरीर में एक ही कूबड़ होता है।

3. ऊँट प्रजाति के विशिष्ट गुणः

3.1. इसके पैर के खुरों की बनावट में हर पैर में दो अंगूठे होते हैं तथा पैर चौड़े, सपाट और गद्देदार होते हैं इसलिए जब यह चलता है तो इसके पैर फेल जाते है और रेत में धँसते नही है क्योंकि इसके चलने पर दोनो पैर शरीर की एक दिशा में मुड़ जाते हैं और दूसरे दोनों पैर शरीर की दूसरी दिषा में मुड़ जाते हैं। इस प्रकार यह जीव एक नौका की तरह गति करता है इसलिए इसे 'रेगिस्तान का जहाज़' भी कहा जाता है।

3.2 यह प्राणी बहुत कम खा के या बिना कुछ खाये हुए भी 5–7 दिन तक आसानी से रह सकता है और इस दौरान इसकी कार्यात्मक क्षमता में कोई कमी नहीं होती है क्योंकि यह अपने शरीर में उपलब्ध पोषक तत्वों का उपयोग कर लेता है। इसके लिए कोई भी हरे चारे की जरूरत नहीं होती है। यह रेगिस्तान में पाई जाने वाली कंटीली झाड़ियाँ, सूखे पत्ते, बीज आदि खा के भी जीवित रह लेता है।

3.3 प्रचीन मान्यताओं के अनुसार ऊँट के कूबड़ को उसके शरीर का जल संग्राहक माना जाता है लेकिन वास्तव में यह वसा उत्तकों का संग्राहक होता है जोकि भोजन न मिलने की स्थिति में ऊँट द्वारा ऊर्जा स्त्रोत के रूप मे उपयोग किए जाते हैं जिससे कि कूबड़ ढीला होकर सिकुड़ जाता है जोकि आवश्यक भोजन और कुछ दिन तक का आराम मिलने पर यथास्थिति हो जाता है।

3.4 यदि ऊँट को अच्छा नमीयुक्त भोजन खिलाया जाए तो यह जीव बहुत कम पानी के भी जीवित रह सकता है साथ ही साथ ऊँट बहुत कम समय मे बहुत ज्यादा पानी पी सकता है और उसे अपने शरीर में सुरक्षित रख कर जरूरत पड़ने पर इस्तेमाल भी कर लेता है।

3.5 इसका उपयोग बोझा ढोने में किया जाता है और इसका वजन ज्यादा होने से मांस भी अधिक प्राप्त होता है। इसके बालों से ऊन, ब्रुश, कपड़े आदि बनाए जाते हैं तथा यह जीव अधिक तापमान में भी आसानी से रह लेता है।

4. दूध उत्पादन एवं दूध देने की अवधिः सुप्रबंधन के द्वारा ड्रोमैडरी प्रजाति के ऊँट से प्रतिदिन 9–14 लीटर तथा 16 से 18 महीने की अवधि मे 2722–3629 लीटर तक दूध प्राप्त किया जा सकता है। मरूस्थलीय परिस्थितियों में यह प्रजाति 9 महीने की अवधि में औसतन 1134 से 1588 लीटर तक दूध दे सकती है। ऊँटनी से दिन मे 6 से 8 बार तक दूध का दोहन किया जा सकता है। बैक्टेरियन प्रजाति का ऊँट 6 से 18 महीने की अवधि में 5000 लीटर तक दूध का उत्पादन कर सकता है जबकि इसका औसत उत्पादन केवल 800 से 1200 लीटर है। सामान्यतः बैक्टेरियन प्रजाति की दूध उत्पादन क्षमता ड्रोमेडरी प्रजाति से कम होती है। आँकड़ों के अनुसार बैक्टेरियन प्रजाति से अधिकतम दूध (6–7 लीटर प्रतिदिन) कजाकिस्तान में प्राप्त किया गया था जो कि स्थानीय गाय एवं ड्रोमेडरी प्रजाति के दूध उत्पदान से अधिक था। बैक्टोरियन प्रजाति के ऊँट के दूध में वसा की मात्रा अधिक पाई जाती है क्योंकि यह ठंडे वातावरण में रहते है और इनके बछड़ों (टोलड़ा) को अधिक ऊर्जा की आवश्यकता होती है।

5. ऊँटनी के दूध की विशेषताएँः बढ़ती जनसंख्या, औद्योगीकरण, वातावरणीय प्रदूषण आदि की वजह से तापमान में लगातार वृद्धि हो रही है। मरूस्थलीय क्षेत्रों में तापमान वृद्धि अधिक है इसलिए वहाँ गोवंषीय दूध का उत्पादन कम होता है। दुधारू पशुओं में केवल ऊँट की प्रजातियाँ ही ऐसे क्षेत्रों में बेहतरीन विकल्प है। इसलिए वर्तमान में ऊँटपालन पर ज़ोर दिया जा रहा है और उस्ट्र डेयरियाँ विकसित की जा रही हैं जहाँ इसके दूध की गुणवत्ता

तालिका 1: ऊँटनी के दूध का सामान्य संयोजन

संघटक	मान (प्रतिशत)
पानी	86–88
वसा	2.9–5.4
दुग्धशर्करा	3.3–5.8
प्रोटीन	3.0–3.9
खनिज	0.6–1.0
अम्लीयता (प्रतिशत दुग्धिक अम्ल)	0.13–0.21

की जाँच करके अधिकतम उपयोग किया जा सके। ऊँटनी के दूध मे सभी आवश्यक पोषक तत्व मौजूद होते हैं इसलिए मरूस्थलीय क्षेत्रों में दूध का बेहतर विकल्प है। भारतीय खाद्य संरक्षण और मानक निर्धारण समिति के अनुसार ऊँटनी के दूध में कम से कम 3% वसा एवं 6.5% वसाविहीन कुल ठोस होना चाइये।

ऊँटनी का दूध सफेद रंग का होता है और स्वाद में थोडा खारा होता है। ऊँटनी के दूध का संयोजन गाय और बकरी के दूध जैसा ही होता है लेकिन इसमें गाय के दूध की तुलना में पानी और प्रोटीन की मात्रा अधिक लेकिन कुल ठोस और वसा की मात्रा कम होती है। विटामिन और खनिज इसमें प्रचुर मात्रा में पाये जाते हैं। प्रसवकाल के बाद वसा की मात्रा में वृद्धि एवं प्रोटीन की मात्रा में कमी हो जाती है।

तालिका 2: ऊँटनी के दूध के भौतिक गुण

भौतिक गुण	मान
विशिष्ट गुरूत्व	1.027–1.038
चिपचिपाहट (सेंटी पोइज)	1.72–2.24
सतह तनाव (डाइन प्रति सेंटीमीटर)	56.39–60.93
अपवर्तक सूचकांक	1.340–1.346
हिमांक बिंदू (डिग्री सेल्सियस)	–0.51 से –0.61
विद्युत चालकता (मिली मोह)	5.89–6.45

ऊँटनी के दूध का सामान्य संयोजन एवं भौतिक गुण क्रमशः तालिका 1 तथा तालिका 2 में दिये गए है। वसा और कुल ठोस का अनुपात लगभग 31% होता है जो कि गाय के दूध के बराबर (32%) ही है लेकिन भैंस के दूध (42%) से काफी कम होता है।

औषधीय गुणः ऊँटनी के दूध में रक्षात्कम प्रोटीन पायी जाती है जो कि रोग प्रतिरोधक क्षमता को बढ़ाती है। इसमेंजस्ता भी पाया जाता है जो कि कोशिका विभाजन के लिए आवश्यक है। मरूस्थलीय क्षेत्रों में इस दूध का उपयोग जलोदर, पीलिया, क्षयरोग, दमा, खून की कमी एवं बवासीर को दूर करने में किया जाता है। विटामिन और खनिज की प्रचुर मात्रा एवं कम वसा के अलावा यह दूध इन्सुलिन का भी अच्छा स्त्रोत है इसलिए इसका उपयोग मधुमेय के रोगियों के लिए भी किया जा सकता है। एक अध्ययन से ये भी ज्ञात हुआ है कि जो रोगी यकृतशोथ (हैपेटाइटिस) से पीड़ित था, ऊँटनी का दूध पीने के बाद उसके यकृत की कार्यक्षमता में काफी सुधार हुआ।

6. ऊँटनी के दूध के उत्पादः जिन क्षेत्रों में ऊँट पाये जाते है वहाँ पर ऊँटनी के दूध का उपयोग डेयरी खाद्य पदार्थ बनाने में किया जाता है। हमारे देश में भी ऊँट बहुतायत में पाये जाते है इसलिए राष्ट्रीय ऊँट अनुसंधानकेन्द्र, बीकानेर (राजस्थान) ऊँट के विकास के लिए कार्य करता है और वह राजस्थान की सहकारी डेयरी (सरस) के साथ मिलकर ऊँटनी के दूध के विभिन्न उत्पाद बनाने में सफलता प्राप्त कर चुका है।

जो लोग ऊँटपालन करते हैं वो इसका उपयोग पीने के लिए

या चाय बनाने के लिए करते हैं। राजस्थान के मरूस्थलीय क्षेत्रों में इसका उपयोग खीर बनाने में भी किया जाता है। सुगंधित दूध, कुल्फी, आइसक्रीम, किण्वित दुग्ध उत्पाद, चीज, चाय, कॉफी आदि उत्पाद राष्ट्रीय ऊँट अनुसंधान केन्द्र ने विकसित कर लिए हैं और सरस डेयरी के नाम से इन्हें बेचा भी जाने लगा है। पनीर, खोआ, गुलाबजामुन, पाउडर, क्रीम एवं अन्य उत्पादों के विकास पर भी कार्य किया जा रहा है।

7. निष्कर्षः राजस्थान के राष्ट्रीयपशु 'ऊँट' को रेगिस्तान का जहाज कहा जाता है। देश में दूध की बढ़ती मांग को पूरा करने के लिए ऊँटनी का दूध एक बेहतर विकल्प है लेकिन अभी भी बहुत अनुसंधान कार्यक्रम बाकी है ताकि इसके दूध का अधिकतम उपयोग किया जा सके और इसका आयुकाल बढ़ाया जा सके। इसके दूध में उपलब्ध घटकों की गुणवत्ता और चिकित्सकीय अनुप्रयोगों के कारण इसका उपयोग डेयरी खाद्य पदार्थ बनाने में किया जाता है। लोगों को जागरूक करने की जरूरत है ताकि वें इसकी अहमियत को समझ सकें और ऊँट के संरक्षण और पालन पर जोर दें।

पहला सुख निरोगी काया
अच्छे स्वास्थ्य बिना
सूनी माया।

12 साईलेज बनाई जाने वाली महत्वपूर्ण फसलों की शस्य क्रियाएं

मगन सिंह, राजेश कुमार मीना, सूमी काला, बी.के.मीना, उत्तम कुमार एवं शशांक द्विवेदी

- चारा अनुसंधान एवं प्रबंधन केन्द्र,
भाकृअनुप - राष्ट्रीय डेरी अनुसंधान संस्थान, करनाल - 132001, हरियाणा

साईलेज बनाने के लिए उपयुक्त फसलें:

साईलेज बनाने के लिए पर्याप्त फसलें उपयुक्त होती है। ऐसी फसलें जिनमें प्रोटीन की मात्रा कम हो तथा उसमे शर्करा एवं स्टार्च की मात्रा अधिक हो तो ऐसी फसलें जैसे मक्का, ज्वार, बाजरा, मकचरी, शुगरग्रेज, जई एवं जौ से अच्छी साईलेज बनाई जा सकती है। मानसून के समय घासों में अच्छी–वृद्धि के कारण चारा उत्पादन काफी फालतू होता है, तब उस समय इन बहुवर्षीय घासों जैसे–संकर नेपिअर घास, गिनीघास, पैराघास, सूडानघास एवं रोड्सघास आदि से भी साईलेज बनाई जा सकती है। अतः साईलेज बनाने हेतु प्रमुख फसलों की शस्य क्रियाएँ निम्न है:

1. मक्काः

भूमि–गहरी दोमट जीवांश युक्त उपजाऊ भूमि पी. एच. मान 5.5–8.0 तक अच्छा माना जाता है।

खेत की तैयारी– एक बार मोल्ड बोर्ड हल चलाकर उसके बाद दो बार हैरो चलाएं।

बोने का समय– मार्च से सितम्बर मध्य तक

चारे की किस्में– अफ्रीकन टाल, जे. 1006, विजय कम्पोजिट, किसान, गंगा 5, गंगा सफेद 2, गंगा 1, प्रभात आदि।

बीज दर– 25–30 किग्रा. प्रति एकड़ मिश्रित खेती में लोबिया 12 किग्रा. तथा 20 किग्रा. बीज प्रति एकड़ की दर से बोयें।

बोने की विधि– बीज को 20–30 सेमी. पंक्ति की दूरी सीड ड्रिल द्वारा बुवाई की जा सकती है।

खाद एवं उर्वरक– फार्म उर्वरक या कम्पोस्ट की मात्रा लगभग 4 टन प्रति एकड़ बुवाई के 15 दिन से पहले खेत में डालकर अच्छी तरह से मिटटी में मिलाएं। इसके अलावा 25 किग्रा. यूरिया बुवाई के समय तथा 25 किग्रा. फास्फोरस प्रति एकड़ की दर से खेत की तैयारी के समय दें। जस्ता तत्व की कमी वाले क्षेत्रों में जिंक सल्फेट 4 किग्रा. प्रति एकड़ की दर से बुवाई के समय मिटटी में मिलाना चाहिए।

कटाई– इसकी कटाई बुवाई के 60–70 दिनो के बाद करनी चाहिए। फसल की कटाई अवस्था बोई गयी किस्मों पर निर्भर करती है। साईलेज बनाने के लिए इसे दुग्ध अवस्था (बुवाई के 50–60 दिन बाद) पर काटने से अच्छी साईलेज बनती है।

उपजः बरसात वाली फसल से लगभग 150–200 कु. हरा चारा प्रति एकड़ तथा गर्मी में 100–120 कु. हरा चारा प्रति एकड़ प्राप्त किया जा सकता है।

2. ज्वारः

भूमि–इसके लिए दोमट, बलुई दोमट तथा हल्की व औसत काली मिटटी तथा जल निकास का उचित प्रबन्ध हो उत्तम मानी जाती है। भूमि का पी. एच. मान 6.5–7.0 तक अच्छा माना जाता है।

खेत की तैयारी– एक बार मोल्ड बोर्ड हल चलाकर उसके बाद दो–तीन बार हैरो चलाकर पटेला चलाने से खेत तैयार हो जाता है।

बोने का समय– मध्य जून से मध्य जुलाई तक

चारे की किस्में– एक कटान वाली फसलः पूसा चरी–1, पूसा चरी–6, एम. पी. चरी, एस. एल. 44, एच. सी. 171, पूसा चरी–23, जवाहर चरी 6, यू. पी. चरी–1, पूसा चरी–9, एम. एफ. एस. एच. यू. पी. चरी–2, एच. सी 260, पन्त चरी–4, संकर पूसा चरी–106, जे. एस. 20, एस 427, एस 452, जी 304, जे.–6, विदिशा–60–1 आदि।

दो कटान वाली फसलः कोयम्बटूर 27 जी. एफ. एस. एच 1 आदि।

बहु कटान वाली फसलः मीठी सुडानजवाहर चरी 69, पी. सी. एच. 106, पंजाब सुडेकस चरी, सफेद मोतीपन्त चरी 5, संकर पूसा चरी–109, पूसा चरी–615, पूसा चरी–6, हरियाणा ज्वार 513 आदि।

दाना एवं चारे वाली किस्में: जे. एस. 20, सी. एस. एच. 13,

सी. एस. वी. 15, के. 11 आदि।

बीज दरः एक कटान वाली फसल के लिए 16–20 किग्रा. प्रति एकड़ तथा बहु कटान वाली फसल के लिए 8–10 किग्रा. प्रति एकड़ के लिए आवश्यक है। बीज को एमिसान दवा की मात्रा 215 ग्राम प्रति किग्रा. बीज की दर से बीज को उपचारित करने के बाद बोयें।

बोने की विधि– बीज को 25–30 सेमी. पंक्ति की दूरी पर सीड ड्रिल द्वारा बुवाई की जा सकती है।

खाद एवं उर्वरक– फार्म उर्वरक या कम्पोस्ट की मात्रा लगभग 5 टन प्रति एकड़ बुवाई के 15 दिन के पहले खेत में डालकर अच्छी तरह से मिटटी में मिलाएं। बहु कटान वाली फसल में बुवाई के समय 40 किग्रा. यूरिया बुवाई के तथा 20 किग्रा. फास्फोरस प्रति एकड़ की दर से खेत की तैयारी के समय दें। तथा इतनी ही मात्रा प्रत्येक कटाई के पष्चात देने से अच्छी उपज मिलती है। जस्ता तत्व की कमी वाले क्षेत्रों में जिंक सल्फेट 4 किग्रा. प्रति एकड़ की दर से बुवाई के समय मिटटी में मिलाना चाहिए। तत्वों की पूर्ति मिटटी के परीक्षण के अनुसार देने से अच्छी उपज के साथ खाद लागत कम की जा सकती है।

सिंचाई– गर्मी वाली फसल में सिंचाई 10–15 दिन के अन्तराल पर करनी चाहिए तथा बरसात वाली फसल में पानी की आवश्यकता पड़ने पर करनी चाहिए।

कटाई– इसकी एक कटाई वाली फसल की कटाई को बुवाई के 70–90 दिनों के बाद करनी चाहिए। बहु कटान वाली फसल की कटाई बुवाई के 55–60 दिनों के बाद करके उसके बाद पुर्नवृद्धि वाली फसल को 40–50 दिनों के बाद काटा जा सकता है। साईलेज बनाने के लिए इसे पुष्पवस्था से दुग्धवस्था (बुवाई के 75–90 दिन बाद) पर काटने से अच्छी साईलेज बनती है।

उपज– एक कटाई वाली फसल से लगभग 150–200 कु. हरा चारा प्रति एकड़ तथा बहु कटान वाली फसल से 280–320 कु. हरा चारा प्रति एकड़ प्राप्त किया जा सकता है। इसकी उपज फसल की किस्मों एवं इसके प्रबन्धन पर निर्भर करती है।

3. बाजराः

भूमि–इसके लिए दोमट बलुई एवं चिकनी दोमट वाली मिटटी तथा जहाँ जल निकास का उचित प्रबन्ध हो उत्तम मानी जाती है। भूमि का पी. एच. मान 6.5–7.0 तक अच्छा माना जाता है।

खेत की तैयारी– इसके लिए गहरी जुताई नहीं करनी चाहिए। एक बार कल्टीवेटर हल चलाकर उसके बाद दो बार हैरो चलाकर मिटटी को समतल कर लें।

बोने का समय– उत्तर भारत में मध्य मार्च से मध्य अगस्त तकलृ दक्षिण भारत में फरवरी से नवम्बर तक तथा वर्षा आश्रित फसल की बुवाई जून–जुलाई में की जाती है।

चारे की किस्में– जायन्ट बाजरा पी. एच. बी. एफ. 1, एफ. बी. सी. 16, पी. सी. बी. 164, एस.–530, पी.एच. बी. 10–12–14 टाइप–55, राजाके एम बी 72, कोयम्बटूर 8, राज बाजरा चरी 2, नरेन्द्र चारा बाजरा–2 आदि।

चारे की किस्मेंः जे. एस. 20, सी. एस. एच. 13, सी. एस. वी. 15, के. 11 आदि।

बीज दरः इस फसल के लिए 3–4 किग्रा. प्रति एकड़ के लिए आवश्यक है।

बोने की विधि– बीज को 25–30 सेमी. पंक्ति की दूरी पर सीड ड्रिल द्वारा बुवाई की जा सकती है।

खाद एवं उर्वरक– फार्म उर्वरक या कम्पोस्ट की मात्रा लगभग 10 टन प्रति एकड़ बुवाई के 15 दिन के पहले खेत में डालकर अच्छी तरह से मिटटी में मिलाएं। चारे की फसल के लिए 25 किग्रा. प्रति एकड़ की दर से नाइट्रोजन बुवाई के समय दें। जहाँ पर फार्म उर्वरक या कम्पोस्ट न उपलब्ध हों वहाँ पर 110 किग्रा. प्रति एकड़ की दर से यूरिया डालें। 55 किग्रा. बुवाई के समय तथा इतनी ही मात्रा 25–30 दिनों के बाद डालें। सिंचित क्षेत्रों में 40–50 किग्रा. नाइट्रोजन प्रति हे. की दर से दो बार में दें पहली बुवाई के समय तथा दूसरी प्रथम सिंचाई के बाद दे।

कटाई– इसकी पहली कटाई झंडे निकलने की प्रारंभिक अवस्था या बूट अवस्था पर बुवाई के 50–60 दिनों के बाद करनी चाहिए। तथा बाद वाली कटाइ 40–45 दिनों के अन्तराल पर कर सकते है।

उपज– इसकी पहली कटाई जमीन की सतह से 10–12 से. मी. की ऊँचाई पर करने से फसल की एक से अधिक कटान ली जा सकती है। एक कटाई वाली फसल से लगभग 160–200 कु. हरा चारा प्रति एकड़ से प्राप्त किया जा सकता है।

13 फसल सुधार कार्यक्रम द्वारा सरसों की पैदावार में बढ़ोतरी

महेश कुमार, जितेन्द्र कुमार, नितिन कुमार गर्ग एवं अविनाश गोयल

सरसों विश्व में सोयाबीन और मूंगफली के बाद तीसरी सबसे प्रमुख तिलहनी फसल है। सरसों उपोष्ण कटिबंधीय जलवायु में उगाई जाने वाली रबी मौसम की फसल है। भारत में सरसों एक तिहाई से अधिक भाग में उगाई जाती है। भारतीय सरसों मुख्य रूप से राजस्थान, उत्तरप्रदेश, हरियाणा, मध्यप्रदेश और गुजरात के राज्यों में बोई जाती है। अब इसकी खेती दक्षिण भारतीय राज्यों के गैर परंपरागत क्षेत्रों में भी बढ़ाई जा रही है। वर्षा आश्रित और सिंचाई वाले क्षेत्रों में एकल और मिश्रित दोनों रूपों में उगाये जाने और अनुकूलन क्षमता की वजह से किसान सरसों की खेती को अपना रहे है। प्रमुख रबी की फसल होने के नाते और मानसून के दौरान संरक्षित नमी का फायदा होने के कारण सरसों की उपज को बढ़ाकर घरेलू खाद्यतेल उत्पादन बढ़ाया जा सकता है। विविध कृषि जलवायु स्थितियों के लिए अपने व्यापक अनुकूलन क्षमता की उच्च गुणवत्ता के बावजूद विभिन्न जैविक और अजैविक तनावों ने सरसों की खेती को अस्थिर कर दिया है, फिर भी फसल सुधार कार्यक्रम द्वारा सरसों की उपज को बढ़ाया जा सकता है।

फसल सुधार की विधियाँ

1. तेल और बीज उपज में सुधार
2. संकर प्रजातियों का विकास
3. प्रमुख जैविक और अजैविक तनावों के विरूद्ध सहनशील प्रजातियों का विकास
4. इरूसिक अम्ल और ग्लूकोसिनोलेट को कम करके तेल और बीज गुणवत्ता में सुधार
5. पूर्वी और पूर्वोत्तर राज्यों में गैर परंपरागत क्षेत्रों के लिए उपयुक्त किस्मों का विकास

तिलहन सरसों में फसल सुधार

तिलहन सरसों में उत्पादन को बढ़ाने के लिए फसल सुधार सबसे संभावित प्रौद्योगिकी में से एक है। वर्तमान में राई और सरसों पर अखिल भारतीय समन्वित अनुसंधान परियोजना ने देश भर में विभिन्न कृषि जलवायु क्षेत्रों के लिए 1 किस्मों की सिफारिष की है। 100 दिनों में परिपक्व होने वाली किस्में उपलब्ध हैं, जो अंतरवर्ती फसल के रूप में प्रयोग की जा सकती है।

संकर भारतीय सरसों का विकास

सरसों राष्ट्रीय अनुसंधान केंद्र ने अनुवांशिक और जैव प्रौधोगिकी प्रणाली का प्रयोग करके संकर सरसों के विकास में बड़ी प्रगति की है। देश का पहला मोरी केन्डिया सी एम एस आधारित संकर, सरसों अनुसंधान कार्यक्रम में महत्वपूर्णकदम है। उच्च तेल की मात्रा और व्यापक क्षमता वाली संकर प्रजातियाँ राजस्थान और उत्तर प्रदेश के लिए जारी की गयी है।

ब्रीडर बीज उत्पादन

बीज फार्मो ने सार्वजानिक क्षेत्रों के विकास और किसानों को उन्नत बीजों की आपूर्ति करने में प्रमुख भूमिका निभाई है। प्रजातीय प्रौद्योगिकी घटक रणनीति सरसों की उत्पादकता को बढ़ाने के लिए महत्वपूर्ण पहलू है। सरसों राष्ट्रीय अनुसंधान केन्द्र ने अपने प्रयासों से प्रजनन में सुधार के लिए बेहतर जर्मप्लाज़्म की खोज की है। सरसों के पौधों में जैविक तनावों के प्रति प्रतिरोध बढ़ाने के लिए वांछनीय दाताओं की पहचान करके प्रजनन कार्यक्रम में प्रयोग किया जा रहा है।

तनाव / स्थिति	उपयुक्त किस्में
लवणता	भारतीय सरसों, सी.एस.–52 सी.एस.–54, नरेन्द्र राय–1
उच्च तापमान सहिष्णु	कांति, पूसा अग्रणी, आर.जी.एन–13 उर्वशी
उच्च तेल प्रतिशत	नरेन्द्र, स्वर्ण राई–8
जल्द परिपक्व होने वाली	पूसा महक, नरेन्द्र, अंगेती राय–4
पाला सहिष्णु	स्वर्ण ज्योति, आर.जी.एन–13 आर.एच.–781
कम इरूसिक अम्ल	पूसा करिश्मा, पूसा सरसों–21
सफ़ेद रतुआ प्रतिरोध	बसंती, जे.एम.–1, जे.एम.2, माया

फसल अनुक्रम

जलवायु और मिटटी के प्रकार के अनुसार फसल अनुक्रम भी भिन्न होतें है। वर्ष आधारित क्षेत्रों में यह वांछनीय है कि ऐसी फसल और किस्म का चयन किया जाए जो कम नमी की स्थिति में भी अच्छी उपज दे। मिश्रित फसल प्रणाली द्वारा सरसों की उत्पादकता को बढ़ाया जा सकता है। राजस्थान के बाढ़ प्रभावित पूर्वी क्षेत्रों में बाजरा–सरसों अनुक्रम सबसे लाभकारी खेती है। इसके अलावा सरसों, गेहूँ, जौं, चना, वर्षा आधरित क्षेत्रों में तथा आलू और दाल के साथ सिंचित क्षेत्रों में बोया जा सकता है।

अंतर फसल प्रणालियाँ

भारत के विभिन्न राज्यों के लिए उपयुक्त सरसों आधारित अंतर फसल प्रणाली की पहचान की गई।

भारतीय सरसों के साथ अंतर फसल संयोजन निम्नांकित हैः

पोषक तत्व प्रबंधन

तिलहनी फसलो के विकास के लिए अधिक मात्रा में सल्फर की आवश्यकता होती है, जबकि औसतन 25 प्रतिशत जिले पूरे देश में सल्फर की कमी वाले हैं। इष्टतम कार्बनिक पदार्थ के स्तर का रखरखाव कई पोषक तत्वों की कमी से बचने के लिए जरूरी है। सूक्ष्म पोषक विकारों में मिटटी में जिंक की कमी सबसे सामान्य है। हरियाणा और राजस्थान की मिटटी में जिंक के स्तर को बढ़ाने की आवश्यकता है। जैविक खाद सरसों के उत्पादन को बढ़ाने के लिए उर्वरक उपयोगदक्षता में सुधार करने के लिए इस्तेमाल किया जा सकता है। अधिक उत्पादन के लिए नाइट्रोजन फॉस्फोरस और पोटैशियम के साथ चौथे प्रमुख तत्व के रूप में सल्फर को प्रयोग करने की आवश्यकता है। सल्फर आवश्यकअमीनो अम्ल का एक महत्वपूर्ण घटक है। एक अध्ययन अनुसार सल्फर का प्रयोग सरसों की पैदावार 30 प्रतिशत तक बढ़ा देता है। नाइट्रोजन सरसों के लिए सबसे अधिक उत्तरदायी पोषक तत्व है। आनुवंशिक रूप और पर्यावरण, खाद तथा उपज की मात्रा को निर्धारित करने वाले दो प्रमुख कारक है। कई प्रकार की मिटटी मे फॉस्फोरस तत्व की कमी पाई जाती है। फॉस्फोरस की पर्याप्त मात्रा के प्रयोग से सरसों के पौधों में अतिरिक्त शुष्क पदार्थ का अधिक अनुपात में संचय होता है।

राज्य	अंतर फसल संयोजन	अनुपात
हरियाणा	चना + सरसों	5.1
राजस्थान	चना + सरसों	3.1
	आलू + सरसों	3.1
	मसूर + सरसों	6.1
उत्तर प्रदेश	गेहूँ + सरसों	9.1
	आलू + सरसों	3.1
	जौ + सरसों	6.1
	अलसी + सरसों	5.1

फसल उत्पादन प्रौद्योगिकी रणनीतियाँ

संसाधान संरक्षण प्रौद्योगिकी, आकस्मिक योजना फसल पारिस्थितिक क्षेत्र, फसल मोड्यूलिंग आदि कुछ प्रमुख नवीन तकनीक है। पोषक तत्व और जल उपयोग दक्षता, सूक्ष्म पोषक तत्वों की भूमिका और संशोधन आत्मसात विभाजन तंत्र की सरसों अनुसंधान में आवश्यकता है। पारंपरिक और उन्नत फसल अनुसंधान क्षेत्रों में फसल सुधार के साथ–साथ कुछ गैर परंपरागत तरीकों को भी सरसों की खेती में अपनाया जा रहा है। फसल सुधार सरसों की उपज बढ़ाने के लिए अपार संभावनाएं प्रदान करता है। सरसों की फसल के लिए उपयुक्त मशीनरी जीरो टीलेज परिस्थिति में अनुकूल प्रजातियों का विकास और परीक्षण इसकी पैदावार को बढ़ाने में मददगार साबित होंगे। मौसमी परिवर्तन और विचलन सरसों की उपज को सीमित करने वाला कारक है। संसाधन संरक्षण और निवेश उपयोग दक्षता बढ़ाने पर तिलहन फसलों में सटीक कृषि की भूमिका को आँका जा सकता है। ग्लोबल पोजिशनिंग सिस्टम के रूप में नयी प्रौद्योगिकियों, सेंसरों और सूचना प्रबंधन उपकरणों के उपयोग आंकलन और बदलाव को समझने के लिए किया जा सकता है। इससे एकत्र जानकारी का प्रयोग बुवाई घनत्व, उर्वरकों और अन्य सामग्री के अधिक सटीक मूल्यांकन करने के लिए इस्तेमाल किया जा सकता है। फसल पारिस्थितिकी क्षेत्र अधिक इनपुट उपयोग दक्षता के साथ संभावित पैदावार को साकार करने में मदद करने के लिए विषिष्ठ फसलो के लिए कुशल क्षेत्रों की रूपरेखा को दर्शाता है।

फसल सुरक्षा

विभिन्न प्रकार के जैविक तनाव तिलहनी फसलों को क्षति पहुँचाते है और लगभग 18 प्रतिशत तक उत्पादन को कम कर देते है, अतः रोग प्रबंधन के लिए सही रणनीति आवश्यक है, जो निम्न प्रकार हैः

- बुवाई के समय का चयन बहुत महत्वपूर्ण है क्योकि यह रोग घटनाओ को प्रभावित करता है।
- गर्मी में खेतो की गहरी जुताई
- रोग प्रतिरोधी, सहिष्णु या जल्द परिपक्क्व होने वाली किस्मों

का चयन

- अच्छी गुणवत्ता के बीज का प्रयोग
- जैव नियंत्रकों द्वारा बीजों का उपचार
- पौधों के मध्य उचित दूरी और घनत्व
- पानी ठहराव से बचने के लिए जल निकासी की उचित व्यवस्था

एकीकृत कीट–प्रबंधन

- फसलो को क्षेत्र विशेष के लिए निर्धारित समय पर ही बोना चाहिए। उत्तर भारत में सरसों यदि 15 अक्टूबर से पहले बोई जाये तो चेपों के प्रकोप से बचाया जा सकता है।
- संतुलित उर्वरको का प्रयोग करें
- रोग प्रभावित पौधों, पत्तियों और टहनियों को निकाल देना चाहिए
- जैविक कीटनाशियों का प्रयोग करना चाहिए

निष्कर्ष

भारत में सरसों की पैदावार बढ़ाये जाने की अपार संभावनाएं है। सरसों अनुसंधान क्षेत्र में मौजूद प्रौद्योगिकियों के प्रसार की आवश्यकता है। उत्पादकता के मौजूद निम्न स्तर के शोध के निष्कर्षो के आवेदन के माध्यम से फसल सुधार के क्षेत्र में प्रगति के लिए अथाह क्षमता प्रदान करता है।

हरित स्वच्छ श्यामला धरती,
सबमें शान्ति और
स्फूर्ति भरती।

14

बकरी का दूध - एक स्वस्थ्यवर्धक विकल्प

अश्विनी कुमार रॉय एवं महेन्द्र सिंह

- पशु शरीर क्रिया विज्ञान विभाग,
भाकृअनुप - राष्ट्रीय डेरी अनुसंधान संस्थान, करनाल -

आजकल बकरियों का दूध एक स्वास्थ्यवर्धक पेय के रूप में लोकप्रिय हो रहा है। भारतवर्ष में बकरियों की आबादी 13.5 करोड़ के लगभग होगी। इनसे प्रतिवर्ष 50 लाख टन दूध मिलता है जो दूध की सकल पैदावार का लगभग 2.7% है तथा इसमें प्रतिवर्ष 6% की दर से सुधार भी हो रहा है। अगर देख जाए तो एक गाय के स्थान पर तीन बकरियों को पालना आसान है जिससे यह पर्यावरण के अधिक अनुकूल है। बकरी का दूध अम्लीय नहीं होता तथा इसका आपेक्षित घनत्व 1.026 है। बकरी के दूध का जैविक मूल्यंकान 87.5% पाया गया है तथा इसमें कई ऐसे खनिज भी मिलते है जो अन्य डेयरी पशुओं से प्राप्त दूध में नही होते।

बकरी का दूध पीने से बहुत लाभ है–

- जर्नल ऑफ अमेरिकन मेडिसिन के अनुसार बकरी का दूध एक सर्वोत्तम आहार है। इस दूध की संरचना माँ के दूध से बहुत मिलती–जुलती है जिसके कारण यह आसानी से हजम हो जाता है।
- बकरी के दूध में पाए जाने वाले बीटा केसीन की संरचना गाय के दूध में मिलने वाले केसीन से भिन्न होती है। यही कारण है कि यह दूध आधे घंटे में ही हज़म हो जाता है। जबकि गाय का दूध हज़म करने में लगभग आठ घंटे तक लग जाते है।
- गाय के दूध की तुलना में बकरी का दूध प्राकृतिक दृष्टि से अधिक समय तक समरूप अथवा 'होमोजनाइज्ड' रहता है। गाय के दूध में अग्लुटिनीन होने के कारण यह कुछ समय बाद ऊपरी वसायुक्त सतह व निचली वसा–रहित परत में विभक्त हो जाता है। दूध को समरूप बनाने के लिए इसे अत्यंत संकरे छेद में से अधिक दाब द्वारा निकाला जाता है ताकि वसा के बड़े कण टूट कर महीन हो जाएँ। इस क्रिया में दूध तो समरूप हो जाता है परन्तु कुछ अत्यंत क्रियाशील पदार्थ जैसे 'जेंथीन ऑक्सीडेज़' भी निकलते हैं जो स्वास्थ्य के लिए अत्यंत हानिकारक है। बकरी के दूध में कोई अग्लुटिनीन नहीं होने से यह समरूप रहता है।
- कोई एलर्जी न करने तथा गाय के दूध से अधिक पाचनशील होने के कारण भी बकरी के दूध की स्वीकार्यता अधिक पाई गई है। गाय के दूध में एलर्जी करने वाली बहुत से पदार्थ होते है जो बकरी के दूध में नही मिलते। इसलिए बकरी का दूध बच्चों के लिए सुरक्षित माना गया है।
- गाय और भैंस के दूध की तुलना में बकरी का दूध श्वास–रोगियों हेतु बहुत ही लाभदायक पाया गया है।
- इसमें प्रोटीन व अमीनो–अम्ल तो प्रचुर मात्रा में होते हैं जबकि कोलेस्टीरोल की मात्रा अपेक्षाकृत कम होती है। अतः इसे मोटापा कम करने के लिए भी उपयुक्त माना गया है। बकरी के ताजा दूध में ऐसे एन्जाइम होते हैं जो कैल्शियम के बेहतर अवशोषण में सहायक है।
- गाय के दूध के मुकाबले बकरी के दूध में अनिवार्य वसीय अम्ल जैसे लीनोलिक एवं एराकिडोनिक अम्ल अधिक मात्रा में मिलते है। यह कैल्शियम, फॉस्फोरस तथा विटामिन ए व बी से भरपूर है।
- गाय के दूध में वसीय अम्लों की मात्रा लगभग सत्रह प्रतिशत तथा बकरी के दूध में ये पैंतीस प्रतिशत तक हो सकते है। इसके अतिरिक्त बकरी के दूध में वसा के कण अपेक्षाकृत बहुत छोटे होते हैं तथा इसमें छोटी एवं मध्यम आकार की श्रृंखला के वसीय अम्ल गाय के दूध की तुलना में कहीं अधिक होते है। अतः पाचनशीलता एवं पोषण की

दृष्टि से यह अधिक बेहतर होता है।

- बकरी के दूध में प्री–बायोटिक पदार्थ होते है। जो आँतों में पाए जाने वाले लाभदायक जीवाणुओं जैसे बाइफिडो–बैक्टिरिया की संख्या में वृद्धि करने में सहायक है। इसमे ए.टी.पी. अथवा ऊर्जायुक्त अणु भी अधिक मात्रा में मिलते हैं जो कोशिकाओं की बहुत–सी उपचय क्रियाओं में प्रयुक्त होता है।
- आँतों के रोग मे पीड़ित व्यक्तियों हेतु यह अधिक फायदेमंद है क्योंकि इसके सेवन से आँतो की सूजन व जलन नहीं होती है। यह दूध ताजा ही पीना चाहिए क्योंकि उबालने पर इसके एन्जाइम एवं अन्य पोषक तत्वों पर दुष्प्रभाव पड़ता है तथा इसका वसा दुर्गन्ध–युक्त होने लगता है।
- बकरी का दूध शरीर में तेजाब नहीं बनने देता क्योंकि इसकी एसिड के प्रति प्रतिरोध क्षमता गाय के दूध से बेहतर होती है।
- जो लोग लैक्टोज़ के कारण गाय का दूध नही पचा सकते, उनके लिए बकरी का दूध एक सर्वोत्तम आहार है क्योंकि इसमें अपेक्षाकृत कम लैक्टोज होता है। यह गाय के दूध की तुलना में अधिक कैल्शियम, फॉस्फोरस, ताम्बा, मेंगनीज, रायबोफ्लेविन, नियासिन विटामिन ए तथा बी–12 होने के कारण कहीं अधिक स्वस्थ्यवर्धक है।
- बकरी के दूध में सेलेनियम नामक सूक्ष्म–मात्रिक खनिज पाया जाता है जो ऑक्सीकरण–विरोधी गुणों के कारण रोग–प्रतिरोध क्षमता को बेहतर बनाता है। अनुसंधान द्वारा ज्ञात हुआ है कि इसके दूध से लोहे व ताम्बे का चयापचय शीघ्रता से होता है।

नवजात शिशु प्रथम तीन महीने तक पूर्ण रूप से दूध पर ही आश्रित होते है। बकरी के दूध में मिलने वाले प्रोटीन में अनिवार्य अमीनो–अम्ल पाए जाते हैं जो अनाजों से प्राप्त बेबी–फूड्स में भी नहीं होते। बकरी के दूध की केसीन से बनने वाले पेप्टाइड का स्वाद गौ–दुग्ध केसीन से प्राप्त पेप्टाइड की तुलना में कम कड़वा होता है। इसमें पाए जाने वाले खनिजों की मात्रा भी गौ–दूध से अधिक होती है। इसीलिए बकरी का दूध बच्चों के लिए स्वास्थ्यवर्धक पाया गया है। बकरी के दूध में अपेक्षाकृत अधिक मात्रा में बहु–असंतृप्त वसेय अम्ल पाए जाते हैं, जो मानव स्वास्थ्य के लिए अत्यंत लाभकारी हैं। इसके दूध से बनने वाले उत्पाद भी सुपाच्य एवं स्वादिष्ट होते है हालांकि इनके विशेष गुणों का अभी तक विशेष प्रचार नहीं हो पाया है। आजकल बकरी का दूध सभी स्थानों पर आसानी से उपलब्ध नहीं होता है इसलिए अधिकतर लोग इसके लाभ प्राप्त करने से वंचित रह जाते है।

विदेशों में बकरी के दूध से तैयार बहुत से ऐसे उत्पाद बेचे जाते हैं जिनमें बकरी के दूध के श्रेष्ठ गुणों को समाहित किया गया है। कुछ लोग इसके दूध की व्हे बना कर बेचते हैं जिसमें दुग्ध–प्रोटीन व प्रचुर मात्रा में खनिज मिलते है। इसके दूध को शून्य डिग्री सेल्सियस से कम तापमान पर सुखाया जाता है ताकि इसे दीर्घावधि के लिए रखा जा सके। इस प्रक्रिया में इसके संघटकों को कोई क्षति नहीं होती तथा यह ताजे दूध के सामान ही फायदेमंद होता है। बकरी के दूध में पाए जाने वाले प्रोटीनों को अलग करके भी डिब्बा बंद उत्पाद के रूप में बेचा जाता है। इसके अतिरिक्त इसके दूध से निर्मित प्रोबायोटिक पदार्थ भी मिलते हैं जो न केवल शरीर की पाचन–क्रिया बढ़ाते हैं बल्कि रोग–प्रतिरोध क्षमता को भी बेहतर बनाते है। यदि बकरी के दूध से मिलने वाले फायदों पर नजर डालें तो यह गाय के दूध से कहीं अधिक बेहतर पाया गया है।

बकरी के दूध से सर्वोत्तम 'इन्फेंट' दुग्ध–उत्पाद तैयार किए जा सकते है। इससे तैयार किया गया चीज़ नर्म तथा मुलायम होता है। आजकल यूरोपीय बाज़ारों में विभिन्न स्वाद एवं सुगंध से युक्त बकरी के दूध से निर्मित चीज़ उपलब्ध है। इसके दूध से पनीर एवं दही भी तैयार की जा सकती है। भारत में बकरी का दूध अधिक लोकप्रिय नहीं है तथा इसे साधारणतया गाय व भैंस के दूध के साथ ही मिला कर बेचा जाता है। पिछले दिनों डेंगू की बीमारी फैलने के कारण बहुत से लोगों ने इसका उपयोग किया ताकि उनकी रोग–प्रतिरोध क्षमता बेहतर हो सके। कुछ शहरों में तो यह दूध बहुत ही ऊंचे दामों पर बेचा गया। परन्तु यह सब कुछ अल्प–कालिक ही था।

आज आवश्यकता इस बात की है कि बकरी के दूध के विपणन पर और अधिक ध्यान दिया जाए ताकि इसकी स्वीकार्यता बढ़ सके। इस उद्देश्य की प्राप्ति के लिए हमें उपभोक्ताओं को अधिक शिक्षित व जागरूक बनाने की आवश्यकता है, जो परम्परागत दृष्टि से केवल गाय या भैंस के दूध का ही सेवन करते आ रहे है। विश्व के अनेक देशों में बकरी के दूध को गाय के दूध से बेहतर माना जाता है। गाँवों में छोटे व मझोले किसान अपने जीवनयापन हेतु बकरियों को पालना पसंद करते हैं क्योंकि इनके पालन पर कहीं कम मात्रा में खर्च आता है। उल्लेखनीय है कि बकरी पालन हेतु न तो बहुत अधिक स्थान चाहिए और न ही इनके रख–रखाव पर अधिक खर्च करने की आवश्यकता पड़ती है। इनकी आहार आवश्यकताएं भी बड़े पशुओं से काफी कम होती है जिन्हें आसानी से पूरा किया जा सकता है।

हिन्दी विचारों के आदान प्रदान की सबसे सरल एवं मधुर भाषा है।

15 ऊर्जा संरक्षण का महत्व व ऊर्जा की दक्षता को बढ़ाने के लिए ऊर्जा प्रबंधन के प्रभावी उपाय

जितेन्द्र डबास एवं ई. सुनील कुमार

- डेरी अभियांत्रिकी प्रभाग,
भाकृअनुप - राष्ट्रीय डेरी अनुसंधान संस्थान, करनाल -

आज के आधुनिक युग में ऊर्जा का हमारे जीवन में महत्व किसी से छिपा नही है। फिर चाहे वह घरेलू स्तर पर हो या व्यवसायिक स्तर पर, ऊर्जा की, हमें लगातार आवश्यकता पडती है। घरेलू जीवन में विचार करे तो सुबह उठतें ही हम विभिन्न प्रकार की ऊर्जा का उपयोग करना आरम्भ कर देते है। सबसे पहले हमें पानी की आवश्यकता होती है, तो यह हमारे घर में पम्प घर से आता है। जो कि विद्युत ऊर्जा पर कार्य करता है। यदि नागरिक जल आपूर्ति नही है तो हम अपने घर में लगे नलकूप से विद्युत मोटर चलाकर पानी निकालते है। उसके बाद भोजन बनाने के लिए हमें गैस, कैरोसीन तेल, कोयला या लकडी जलानी पडती है। जिसकी तापिय ऊर्जा से भोजन पकता है। घर मे उपलब्ध विभिन्न उपकरण जैसे कि लाईट बल्ब, पंखे, कूलर, ए.सी., टेलीविजन, कंप्यूटर, माइक्रोवेव इत्यादि को चलाने के लिए भी विद्युत ऊर्जा की आवश्यकता होती है। जब हमें घर से बाहर जाना होता है तो हम स्कूटर व कार आदि का प्रयोग करते है जो कि तरल ईंधन, पैट्रोल व डीजल के द्वारा चलते हैं। इनमें लगा इंजन पेट्रौल/डिजल के ज्वलन पर निकलने वाली तापीय ऊर्जा को यान्त्रिकी ऊर्जा में बदलकर वाहन को चलने के लिए आवश्यकर शक्ति प्रदान करता है। वास्तव में जिस विद्युतीय ऊर्जा का हम दिनभर प्रयोग करते है वह भी अधिकतर थर्मल पावर प्लांट से आती है। जहां पर इसे कोयला व अन्य ईंधन जलाकर बनाया जाता है। इसलिए हम कह सकते है कि वायु, जल, व भोजन की तरह ऊर्जा भी जीवन के लिए अति आवश्यक है और यह हमें मुख्यतौर से विभिन्न प्रकार के ईंधन कोयला, पैट्रोल/डीजल व एल.पी.जी. गैस आदि के ज्वलन से ही मिलती है। उपरोक्त सभी तरह के ईंधन पृथ्वी के अन्दर दबे जीवाश्मों से बने है इसलिए इनको जीवाश्म ईंधन की संज्ञा दी जाती है। क्योकि इन ईंधनों की ज्वलन क्रिया एक प्रकार की रासायनिक क्रिया होती है। जिसमें इनकी रासायनिक ऊर्जा तापिय ऊर्जा में बदलती है। हम इनको रासायनिक ईंधन का नाम भी देते है। इस प्रकार हमनें इन रासायनिक ईंधनों का हमारे जीवन में महत्व व इनके प्रमुख स्त्रोत के बारे में तो जान लिया पर साथ ही इनके नकारात्मक पहलू को जान लेना भी उतना ही आवश्यक है।

रासायनिक/जीवाश्म के बारे मे एक तथ्य यह है कि इनके हमारी पृथ्वी पर सीमित संसाधन है जो कि सदा के लिए ईंधन की आपूर्ति नहीं कर सकते। वह एक न एक दिन पूरी तरह से समाप्त हो जाएंगें। एक अनुमान के अनुसार वर्तमान में ज्ञात कोयले के संसाधन आने वाले एक सौ तीस सालो में व कच्चे तेल के संसाधन 50 वर्शो में समाप्त हाने वाले है। एक अन्य अनुमान के अनुसार विकास के इस युग में जिस गति से रासायनिक ईंधन का उपयोग बढता जा रहा है। उस गति से हमें इक्कीसवीं सदी के समाप्त होते होते इतने संसाधनो वाली कई और पृथ्वी चाहिए होंगी। जो कि वास्तविकता से परे है। इसका सीधा अर्थ यह है कि हमें ऊर्जा के अन्य समाप्त न होने वाले अर्थात अक्षय संसाधन व उन्हें सरलता से उपयोग करने के उपाय तलाशने होंगे। अक्षय संसाधनो मे सबसे प्रमुख सौर ऊर्जा है परन्तु इसे सरलता से व सस्ते तरीके से उपयोग की जा सकने वाली ऊर्जा में बदलने की तकनीकियॉ अभी पूर्ण रूप से विकसित नहीं है। सौर ऊर्जा का विश्व में उपयोग की जाने वाली कुल ऊर्जा में अंश मात्र ही हिस्सा है।

रासायनिक ईंधन के सीमित संसाधनों वाले पहलू से अलग व अति आवश्यक एक और नकारात्मक पहलू है कि इनका उपयोग हमारे वातावरण को बहुत दूषित कर रहा है सभी रासायनिक ईंधनों में पाया जाने वाला मुख्य तत्व कार्बन ही प्राथमिक तौर पर ज्वलनशील होता है। यह जलने पर वायु में पाई जाने वाली ऑक्सीजन गैस के साथ मिलकर रासायनिक क्रिया द्वारा कार्बनडाईऑक्साइड गैस बनाता है। इस रासायनिक क्रिया में बहुत सारी तापीय ऊर्जा निकलती है। जिसे हम सीधे

तौर पर या ऊर्जा के अन्य प्रकारों में बदलकर विभिन्न उपयोगों में लाते है। ईधन के जलने में कुछ और जहरीली गैस भी बनती हैं। तथा महीन कण व धुआं भी पैदा होते है जो वातावरण मे मिलकर प्रदूषण का कारण बनते हैं। यदि ईंधन शुद्ध न हो या ज्वलन की परिस्थितियाँ सही न होने से पूर्ण ज्वलन न हो तो यह जहरीले पदार्थ और भी अधिक मात्रा मे पैदा होते हैं। ईंधन के ज्वलन मे पैदा होने वाली प्रदूषण से अब कोई भी अपरिचित नहीं है। ईधन के ज्वलन में पैदा होने वाली प्रमुख गैस कार्बनडाईऑक्साईड यद्यपि जहरीली नही होती तथा सीधे तौर पर कोई प्रदूषण नहीं करती है तथा इसकी कुछ मात्रा प्राकृतिक तौर पर वायु में पाई जाती है, परन्तु इसकी वायु में अधिक मात्रा पृथ्वी के औसत तापमान के बढते ग्लोबल वार्मिंग का कारण बनती है। सभी जीव जन्तु भी सांस लेने की क्रिया में ऑक्सीजन को ग्रहण करके कार्बनडाईऑक्साईड को वातावरण में छोड़ते है इसके विपरीत पेड़–पौधों व वनस्पति की प्रकाश संश्लेषण क्रिया द्वारा यह कार्बनडाईऑक्साईड सूर्य की रोशनी में दोबारा से ऑक्सीजन में बदल जाती है। इस प्रकार वायु में इसकी मात्रा प्राकृतिक तौर पर स्थिर रहती है। किन्तु पिछले कुछ वर्षो में रासायनिक ईधन का ज्यादा उपयोग करने से व पृथ्वी पर पेड़ – पौधों / वनस्पति का क्षेत्र घटने से वायुमंडल में कार्बनडाईऑक्साईड की बढती हुई मात्रा जांची गई है। वातावरण में इसकी ज्यादा मात्रा होने से हमारी पृथ्वी दिन के समय सूर्य से ली गई गर्मी को सही मात्रा में वापिस आकाश में नही छोड़ पाती। इसको हम ग्रीन हाउस प्रभाव कहते है। जिसके कारण पृथ्वी का औसत तापमान समय के साथ बढ रहा है। जिसे हम ग्लोबल वार्मिंग से बर्फ के ग्लेशियर पिघलने की गति बढती है। समुद्र में जल की सतह बढ रही है। वर्षा व कृषि का संतुलन बिगड़ता है तथा प्राकृतिक संतुलन बिगड़ने से अन्य बहुत सारे नुकसान हो सकते हैं, जो कि भविष्य में मानव जाति के आस्तित्व पर संकट खड़ा कर सकते हैं।

इस प्रकार रासायनिक ईधनो के प्रयोग से होने वाले नुक्सान से बचने का एक ही उपाय है कि हम इन पर अपनी निर्भरता धीरे धीरे कम करें जैसा कि पहले बताया गया है। इसके लिए ऊर्जा के वैकल्पिक स्त्रोतों जैसे कि सौर ऊर्जा, वायु ऊर्जा आदि का उपयोग एक उपाय है किन्तु हम सब जानते है कि यह सरल तकनीक के अभाव में व अन्य बहुत सारे कारणों से निकट भविष्य में पूरी तरह सम्भव नहीं है। इसके मुख्य कारण है सौर ऊर्जा व वायु ऊर्जा का पृथ्वी पर हर समय हर स्थान पर उपलब्ध न होना। मौसम के अनुसार एक स्थान पर सूर्य की ऊर्जा की दर बदलते रहना, सूर्य ऊर्जा को उपयोग की जा कने वाली तापिय व विद्युत ऊर्जा में बदलने के सस्ते व अति सक्षम उपकरण न होना तथा दिन के समय ग्रहण की गई सौर ऊर्जा को रात में उपयोग करने हेतु ऊर्जा, भंडारण के सरल, कारगर तथा हानि रहित तकनीकों का विकसित न होना आदि है। इस प्रकार सौर ऊर्जा जैसे वैकल्पिक ऊर्जा के स्त्रोत इतनी जल्दी रासायनिक ईधन का स्थान नहीं ले सकते और अभी बहुत वर्षो तक हमें रासायनिक ईंधन पर निर्भर रहना ही होगा। अब दूसरा उपाय केवल यही बचता है कि हम ऊर्जा के सही उपयोग की महत्ता को जान व समझ लें ताकि हमें कम ईंधन का उपयोग करना पड़े और हम मानव जाति के जीवन के स्थायित्व को बनाए रखें।

इस दिशा में उठाए गए कदमों अर्थात प्रभावी ऊर्जा प्रबंधन, फिर वह चाहे घरेलू स्तर पर हो, ग्रामीण व शहरी स्तर पर हो, तथा अन्य किसी भी व्यवसायिक या औद्योगिक स्तर पर हो, को हम तीन भागो में बांट सकते है।

1. वैकल्पिक उपायों दवारा ऊर्जा की आवश्यकता को कम करना। (ऊर्जा का न्यूनतम उपयोग)
2. ऊर्जा का उपयोग करने वाले व इसके एक रूप को दूसरे में बदलने वाले सभी यंत्रो, उपकरणों व प्रक्रियाओं की ऊर्जा दक्षता को बढ़ाना; अधिक ऊर्जा दक्षता वाले उपकरण व प्रक्रियाओं का उपयोग।
3. ऊर्जा खर्च करने वाले सभी उपकरणों व क्रियाओं द्वारा पैदा की गई सुविधाओं का दुरूपयोग रोकना अर्थात बिना उपयोग के ऊर्जा के खर्च होने से होने वाली हानि से बचना।

उदाहरण के तौर पर उपरोक्त उपायों को दस तरह से समझा जा सकता है जैसे यदि हमें घर के एक कमरे मे रौशनी चाहिए जिसके लिए एक विद्युत बल्ब लगाया जा सकता है तो ऊर्जा प्रबंधन के पहले उपाय अनुसार हम यह जांच सकते है कि क्या हमारा कार्य बिना बल्ब जलाए हो सकता है जैसे कि दिन मे सूर्य की प्राकृतिक रोशनी का उपयोग करके, दूसरे उपाय अनुसार हम यह देख सकते है कि किस तरह का कौन सा बल्ब कम ऊर्जा खर्च करके आवश्यक रोशनी पैदा कर सकता है। उदाहरण के तौर पर एक एल. ई. डी. बल्ब एक सामान्य बल्ब व सी. एफ. एल. के अनुपात में सबसे कम बिजली खर्च करता है। इसलिए हम उसका उपयोग कर सकते है। तीसरे उपाय अनुसार हमें यह भी देखना होगा कि जब हम उस बल्ब का उपयोग न कर

रहे हो तो ये ऑफ रहे, तथा बिना आवश्यकता के ऊर्जा खर्च न करे। उपरोक्त उदाहरण बहुत सामान्य प्रतीत हो सकते है परंतु वास्तव में हमें हर क्षेत्र में इन तीनों उपायों को ही लागू करना होता है। हर उपय पर ध्यान देकर ही हम ऊर्जा प्रबंधन को प्रभावी बना सकते हैं।

दुग्ध प्रसंस्करण के व्यापक विषय को ध्यान मे रखते हुए इस लेख मे एक दुग्ध प्रसंस्करण संयंत्र मे प्रभावी ऊर्जा प्रबंधन के उपायो का उल्लेख किया जा रहा है। ऊर्जा प्रबंधन के पहले उपाय अनुसार एक नए डेरी संयंत्र की रूपरेखा बनाते हुए हमें यह ध्यान देना चाहिए कि दुग्ध प्रसंस्करण की किस प्रक्रिया को जिसमें ऊर्जा का खर्च हो रहा है या तो पूरी तरह से हटा सकते है या फिर कम ऊर्जा खर्च करने वाली प्रक्रिया में बदल सकते है उदाहरण के तौर पर एक संयंत्र में दूध को प्राप्त होने पर इसे जल्दी से ठण्डा कर देने की क्रिया की जगह यह देखा जा सकता है कि गुणवत्ता से समझौता किए बिना कैसे कुछ दूध को सीधे पाश्चुरीकृत किया जा सकता है या किसी अन्य प्रसंस्करण प्रक्रिया मे भेजा जा सकता है। बेहतर गुणवत्ता वाले तापरोधी टैंक का उपयोग करके ऊर्जा के व्यय को कम किया जा सकता है संयंत्र में, प्रभावी प्राकृतिक रोशनी व वायु संचार के प्रबंध द्वारा इनमें लगने वाली ऊर्जा को कम किया जा सकता है। दूध के टैंको को सही उंचाई पर रखकर दूध को पम्प करने के खर्चे को कम किया जा सकता है प्राकृतिक तौर पर पहले से गर्म व ठण्डा करने की क्रियाओ द्वारा मुख्यतौर पर गर्म करने व ठण्डा करने की क्रियाओं मे ऊर्जा की बचत की जा सकती है। यातायात के व्यय को कम से कम करने के लिए दुग्ध संयंत्र के सही स्थान का चुनाव भी ऊर्जा संरक्षण की दिशा में एक प्रभावी उपाय है इस प्रकार से एक संयंत्र में सैकडों ऐसी क्रियाएं होती हैं जिसमें ऊर्जा का व्यय आवश्यक होता है। इन सभी क्रियाओं का पहले से ही ऊर्जा व्यय के आधार पर चयन कर लेना व आवश्यक बदलाव कर लेना प्रभावी ऊर्जा प्रबंधन का एक प्रभावी उपय हो सकता है।

ऊर्जा संरक्षण का दूसरा व सबसे अधिक कारगर उपाय यह है कि हम सभी डेरी उपकरण व अन्य उपयोगिता वाले मुख्य उपकरण जैसे कि दुग्ध पम्प, प्रशीतन संयंत्र, भाप बनाने वाला बायलर, हवा का कमप्रेशर, विद्युत मोटर, ट्रांसफार्मर आदि का चयन उतम गुणवत्ता तथा कम ऊर्जा खर्च करने के आधार पर करें। उदाहरण के तौर पर एक डेरी संयंत्र में कुल विद्युत का लगभग आधा प्रशीतक संयंत्र द्वारा होता है इसलिए इसके डिजाईन तथा रूपरेखा के निर्धारण में ऊर्जा दक्षता को ध्यान में रखना अति आवश्यक हैं। इसमें सबसे महत्वपूर्ण अमोनिया कमप्रेशर का चुनाव करना है। यदि दुग्ध उत्पाद के हिसाब से किसी शीत संग्रहागार में, हिमीकरण आवश्यक है तो उसके लिए बहुचरणीय कमप्रैशर लगाने चाहिए।

एक बड़े कमप्रेशर लगाना ऊर्जा संरक्षण में सदा लाभकारी होता है। कई स्थानों पर रैसी. प्राकेटिंग कमप्रैशर को बदलकर सक्रू कमप्रैशर लगाने से काफी ऊर्जा की बचत होती है। सभी उपकरणों की क्षमता का सही चुनाव भी ऊर्जा बचत की ओर एक महत्वपूर्ण कदम है। कई बार बिना आवश्यकता के अधिक क्षमता का एयर कमप्रैशर व बॉयलर का उपयोग हो रहा होता है या फिर उनमें वायु व भाप का दबाव आवश्यकता से अधिक रखा जाता है जिससे ऊर्जा की ज्यादा खपत होती है। विद्युत मोटरो व उपकरणों के मामले मे पावर फैक्टर को सही रखना ऊर्जा बचत का एक महत्वपूर्ण उपाय है। सामान्य विद्युत मोटरो के स्थान पर परिवर्तनशील गति वाली मोटरो का उपयोग, विशेष तौर पर जिस उपकरण में परिवर्तनशील लोड रहता है भी एक कारगर उपाय है सभी उपकरणों का समयानुसार तथा उनके निर्धारित मानको के अनुसार रख – रखाव करते रहने मे भी ऊर्जा संरक्षण की काफी संभावनाए होती है। इसके लिए समय समय पर ऊर्जा खर्च का लेखा परीक्षण करवाते रहना, सभी कर्मचारियों को ऊर्जा संरक्षणके प्रति सचेत रखना तथा उपयुक्त प्रशिक्षण देते रहना चाहिए। इस प्रकार से एक डेरी संयंत्र में प्रत्येक ऊर्जा खर्च करने वाले उपकरण व प्रक्रिया के ऊर्जा सरक्षण के अपने अपने तकनीकी पहलू है। यहाँ पर सभी तकनीकी पहलुओं का विवरण करना कठिन है। इस लेख का प्राथमिक उद्देश्य पाठक को ऊर्जा संरक्षण व प्रभावी ऊर्जा प्रबंधन के प्रति सचेत करना है।

ऊर्जा प्रबंधन का तीसरा पहलू है किसी भी उपकरण का दुरूपयोग रोकना व इसके द्वारा पैदा की गई उपयोगिता को अनावश्यक हानि से बचाना। उदाहरण के तौर पर एक डेरी संयंत्र मे भाप बनाने वाला बॉयलर बहुत ही ऊर्जा सक्षम व प्रभावशाली हो सकता है, अर्थात यह कम ईधन खर्च कर ज्यादा भाप बनाता है। परन्तु यदि कहीं भाप की लाईन में रिसाव होने से काफी मात्रा में भाप बेकार जा रही है तो बेहतर ऊर्जा सक्षम बॉयलर होने पर भी ऊर्जा संरक्षण प्रभावी नही रहेगी। ठीक इसी

तरह प्रशीतन संयंत्र अति ऊर्जा सक्षम हो सकता है लेकिन यदि इसके द्वारा पैदा की गई ठंडक (प्रशीतन) का कुछ अंश ठंडे पानी का रिसाव होने से कोल्ड स्टोर का दरवाजा अधिक समय तक खुला रहने से कोल्ड स्टोर की दीवारों तथा पाईपों की ऊष्मा रोधित परत का क्षय हो जाने से या अन्य किसी कारण से बेकार चला जाता है तो बेहतर प्रशीतन संयंत्र के होने पर भी ऊर्जा संरक्षण का कम लाभ होगा। इस प्रकार से सभी उपयोगिता वाली चीजों जैसे बिजली, पानी, गर्मी, ठण्डक व उत्पाद की कोई भी हानि अर्थात बिना उपयोग के इनका व्यय हो जाना एक दम सीधा नुकसान है जिसे हर परिस्थिति मे हमें रोकना चाहिए।

अंत में यह निष्कर्ष निकलता है कि घर पर या अपने व्यवसाय में जहां भी हम ऊर्जा व्यय का कारण बनते है वहां हमें अधिक सजग रहने की आवश्यकता है। पूरी मानव जाति के भविष्य व स्थिरता के लिए प्रभावी ऊर्जा प्रबंधन को प्रत्येक क्षेत्र मे लागू करना प्रत्येक मानव का कर्तव्य है।

16 मानव स्वास्थ्य में डेरी एवं अन्य खाद्य पदार्थो के कार्यात्मक पहलुओं का अवलोकन

जगरानी मिंज एवं शिल्पा विज

- डेरी सूक्ष्म जीव विज्ञान प्रभाग,
  भाकृअनुप - राष्ट्रीय डेरी अनुसंधान संस्थान, करनाल -

कार्यात्मक खाद्य पदार्थों में मुख्य रूप से डेयरी किण्वित खाद्य पदार्थ मानव स्वास्थ्य लाभ के लिए बहुत ही उपयोगी एवं लाभदायक होते है। ये खाद्य पदार्थ कार्यात्मक कहलाते हैं क्योंकि ये मेजबाल के स्वास्थ्य पर विभिन्न रूप से सकारात्मक प्रभाव डालते है। डेयरी खाद्य पदार्थ पोषक तत्वों से भरपूर होते हैं जो कि एक स्वास्थ्य शरीर के लिए जरूरी होते हैं। डेयरी और डेयरी से संबधित खाद्य पदार्थ हरेक आयु वर्ग के लोगों को पसंद होते है। खास तौर पर किण्वित डेरी खाद्य पदार्थ जैसे कि योघर्ट, दही, लस्सी मिष्टी दही इत्यादि। 1980 के पहले जापानी लोगों ने सबसे पहले डेरी के घटकों की पहचान की एवं कार्यात्मक खाद्य पदार्थों के महत्वपूर्ण योगदान को उल्लेखित किया। उन्होंने कार्यात्मक खाद्य पदार्थों के जैव सक्रिय पेप्टाइड्स, प्रोबायोटिक, बैक्टीरिया, आक्सीकरणरोधी प्रभाव, विटामिन्स, प्रोटीन्स, ओलिगगोसैकाराइड, कार्बनिक अम्ल, कैल्शियम एवं अन्य जैविक सक्रिय अवयवों के महत्वपूर्ण योगदानों का उल्लेखन किया। और साथ ही साथ इन सभी अवयवों के पाचन एवं जठरांत्र से सम्बंधित स्वास्थ्यवर्धक पहलुओं को विस्तृत रूप से वर्णन भी किया।

कार्यात्मक खाद्य पदार्थ किसी भी भोजन या खाद्य घटक के लिए एक सामूहिक शब्द है उस के साथ जुड़े उन से परे एक स्वास्थ्य लाभ प्रदान कर सकता है खाद्य उत्पाद के परंपरागत पोषक तत्व सामग्री। (मिलनर, 1999)

प्रोबायोटिक्स और प्रीबायॉटिक्स का मिश्रण, जो कि स्वास्थ्य वर्धक जीवनों की वृद्धि करके आंत्र के जीवाणुओं एवं उनके चयापचय को बढ़ाता है और इनके मिश्रण को सिनबायोटिक की तरह वर्णन किया जाता है। प्रीबायॉटिक्स के महत्वपूर्ण उपयोग डेयरी उत्पादों मे मुख्य रूप से टेबल स्प्रेड, सेंके हुए खाद्य पदार्थ और ब्रेड, मधुशाला और नाश्ते का अनाज, सलाद ड्रेसिंग, मांस उत्पादों और कुछ मिष्टान सामग्री में किया जाता है।

निष्कर्ष

खाद्य पदार्थों एवं स्वास्थ्य के बीच तालमेल बनाये रखने के लिए बहुत सारे डेयरी उत्पाद एवं उनका विकास एक बहुत अच्छा उदाहरण है क्योंकि आजकल लोग स्वास्थ्य के साथ–साथ आहार दोनों की ही प्राथमिक रूप से मांग करते हैं। इसलिए इनकी पूर्ति के लिए बाजार में बहुत से स्वास्थ्यवर्धक डेयरी एवं खाद्य उत्पाद मौजूद हैं। एक अच्छे आहार का व्यक्ति के स्वास्थ्य से सीधा सम्बंध होता है यह कोई नयी बात नहीं है लेकिन लोगों का ध्यान दिन प्रतिदिन इस ओर बढ़ता ही जा रहा है।

कार्यात्मक खाद्य पदार्थों के घटकों की सूची

घटक	स्त्रोत	संभावित लाभ
बीटा कैरोटीन	गाजर, कद्दू, मिठाई आलू, खरबूजा, पालक, टमाटर	कोशिकाओं को नष्ट करने वाले नुकसानदायक मुक्त कणों को बेअसर करना कोशिकीय ऑक्सीकरणरोधी गढ़ों को मजबूत करना शरीर में विटामिन ए को बना सकता है
बीटा ग्लूॅन	जई चोकर, दलिया, जई आटा जौ, राई	हृदय–धमनी (सी. एच. डी) के रोग जोखिमों को काम कर सकता है
पाली असंतृप्त फैटी अम्ल (पी. यू. एफ. ऐ.)	अखरोट, अलसी, अलसी का तेल	दिल और नेत्र स्वास्थ्य तथा मानसिक कार्यविधि के रखरखाव का समर्थन करता है

ओमेगा–3 फैटी एसिड्स ऐ. एलत्र ऐ		
संयुग्मित लिओनलेइक अम्ल (सी. एल. ऐ.)	मांस और मेमने, कुछ पनीर	प्रतिरक्षा स्वास्थ्य और वंछनीय शरीर की संरचना के रखरखाव का समर्थन करता है।
एंथोसायनिंस सायनिडीन, पेलार्गोनिडीन, डेल्फिनिडीन, मालवीडीन,	जामुन, चेरी, लाल लाल अंगूर	कोशिकीय ऑक्सीकरणरोधी गढ़ों के लिए सिलेंडर की तरह काम करना मस्तिष्क के कार्य एवं स्वस्थ के रखरखाव का कार्य करना
कैल्शियम	सेंार्डिन, पालक, दही, कम वसा वाले डेयरी उत्पादों, दृढ़ खाद्य पदार्थ और पेय पदार्थ	ऑस्टियोपोरोसिस के जोखिम को कम करता है
पोटैशियम	आलू, कम वसा वाले डेयरी उत्पाद, साबुत अनाज ब्रेड और अनाज, खट्टे रस, सेम, केला, पत्तेदार साग	कम सोडियम युक्त आहार के संयोजन से उच्च रक्तचाप और स्ट्रोक के जोखिम को कम करता है
इनुलिन, फ्रुक्टोऑलिगोसैकाराइड्स (एफ. ओ. एस.), पॉलीडेक्सट्रोस	साबुत अनाज, प्याज, कुछ फल लहसुन, शहद, लीक, केला, दृढ़ खाद्य पदार्थ और पेय	पाचन से सम्बंधित स्वास्थ्य के रखरखाव का कैल्शियम के अवशोषण का समर्थन करता है
खमीर, लैक्टोबैसिलाई, बिफ़िडोबैक्टीरिया और लाभदायक बैक्टीरिया के कुछ विषिष्ट उपभेद	कुछ योघर्टस, और अन्य उपयोगी जामनयुक्त डेयरी एवं डेयरी रहित खाद्य पदार्थ	पाचन और प्रतिरक्षा के रखरखाव का समर्थन करता है विशिष्ट उपभेदों के लिए लाभदायक होता है
सोया प्रोटिन	सोयाबीन और सोया आधारित खाद्य पदार्थ जैसे दूध, दही, पनीर और टोफू	सी. एच. डी. के खतरे को कम कर सकता है
विटामिन अ	अंग का मांस, दूध, अंडे, गाजर मीठे आलू, पालक	आंख, प्रतिरक्षा और हड्डी के रखरखाव का समर्थन करता है कोशिकाओं की मज़बूती मे योगदान देता है
राइबोफ्लेविन (विटामिन बी 2)	पतले मांस, अंडे, हरी पत्तेदार सब्जियां, डेयरी पदार्थ एवं कुछ अनाज संयोजित नाष्ता	कोशिकाओं के विकास का समर्थन करता है चपापचय को विनियमित करने में मदद करता है
नियासिन (विटामिन बी 3)	डेयरी उत्पाद, पोल्ट्री उत्पाद अंडा, मछली, बादम, अंडे एवं कुछ अनाज संयोजित नाष्ता	कोशिकाओं के विकास का समर्थन करता है चपापचय को विनियमित करने में मदद करता है
विटामिन बीत्र 12 (कोबालामिन)	अंडे, मंस, पोल्ट्री उत्पाद, दूध एवं कुछ अनाज संयोजित नाष्ता	मानसिक कार्यविधि के रखरखाव मे मदद करता है चपापचय के विनियमन करने में मदद करता है एवं रक्त कोशिकाओं के बनने में सहायता प्रदान करता है
बायोटिन	जिगर, साल्मोन मछली, डेयरी, अंडे, कस्तूरी एवं कुछ अनाज संयोजित नाशता	चपापचय के विनियमन एवं हार्मोन संश्लेषण में मदद करता है
विटामिन डी	सूरज की रोशनी, मछली, संयोजित भोज्य पदार्थ जैसे कि योघर्टस या अनाज और पेय पदार्थ जिसमें दूध एवं जूस सम्मिलित है	ऑस्टियोपोरोसिस के जोखिम को कम कर सकता है कैल्शियम और फास्फोरस के विनियमन मे मदद करता है प्रतिरक्षा स्वास्थ्य का समर्थन करता है कोशिकाओं के विकास में मदद करता है

चित्र–1. बाज़ार में उपलब्ध कुछ कार्यात्मक खाद्य पदार्थ

डेयरी उत्पादों से सम्बंधित जैव सक्रिय कार्य

मानव स्वास्थ्य का खाद्य पदार्थों से घनिष्ठ सम्बंध है। सभी व्यक्ति को आवश्यक रूप से एक निश्चित खाद्य पदार्थ की सही समय में और सही मात्रा में जरूरत पड़ती है। डेयरी उत्पाद संभवित रूप से बेहतर स्वास्थ्य एवं जीवन यापन करने के लिए एक विशिष्ट श्रेणी में आते हैं, जिसमें रोगाणुपरोधी कार्य, हृदय प्रणाली से सम्बंधित कार्य, जठरांत्रीय विकास, वृद्धि, चपापचय, मुक्त ऑक्सीकारक कणों के खिलाफ रक्षा एवं मनोवैज्ञानिक कार्य निहित है।

1. रोगाणुरोधी कार्य

- आंत्र के जीवाणुओं को नियंत्रित करना
- विषाणुरोधी कार्य
- ई. कोलाई और कॉलरा के आंत्रजीवविष पर बाध्यकारी प्रभाव डालना

2. हृदय–धमनी से सम्बंधित कार्य

- प्रदाह विरोधी कार्य
- उच्च रक्तचाप का विरोध
- रक्तषयानन सम्बंधी विरोध
- कोलेस्ट्रॉल में कमी

3. अन्य

- कैंसर विरोधी
- ऑक्सीकरणरोधी
- ओपिऑइड प्रभाव
- ऑस्टियोपोरोसिस को रोकना

मानव स्वास्थ्य पर डेयरी उत्पादों से व्यत्पन्न पेप्टाइड्स के जैव सक्रिय कार्य

लगभग दूध के सभी घटक संभावित स्वास्थ्य लाभ में योगदान देते हैं जैसे कि प्रोटीन, पेप्टाइड्स, लिपिड, लघु कार्बोहाइड्रेट, खनिज और विटामिंस। जैवसक्रिय कार्य एवं दुग्ध घटकों के बीच जो सम्बंध है वो चित्र में दर्शाया गया है। कुछ डेयरी उत्पाद जो लोगों के दैनिक जीवन मे नियमित रूप से उपयोग हो रहा है। वे मुख्य रूप से हैं योगहर्ट और अन्य किण्वित डेयरी उत्पाद, खीस, पनीर, मठ्ठा गाढ़ा या पृथक्कृत प्रोटीन इत्यादि।

वजन से संबंधित प्रबंधन मे दूध एक पोषक आहार के रूप में शोध वं चर्चा का विषय बन गया है। और यहाँ तक कि डेयरी उत्पादों का उपभोग कई स्वास्थ्य लाभ से जुड़ा हुआ है जो कि बीमारियों और उनकी जटिलताओं को दूर करने की लिए प्रतिपादित किये गए हैं। उदाहरण के लिए एक व्यक्ति जो कि कम वसायुक्त डेयरी उत्पाद ग्रहण करता है उसके वजन व उच्च रक्तदाब कम होने की, आघात का खतरा कम होने की, आंत्र कैंसर और ऑस्टियोपोरोसिस की सम्भावना कम होती है दूध में प्रोटीन घटक उच्च श्रृंखला वाले एमीनो अम्ल सामग्री प्रदान करते हैं जो मांसपेशियों की दुबला बनाए रखने के लिए मदद करते है। कम वसा वाले दूध में कई घटक हो सकते हैं जो कि मोटापे की परिणामस्वरूप बीमारी की शुरूआत के खिलाफ सुरक्षात्मक प्रभाव दिखाते हैं। ये कई सारे घटक कम वसा वाले दूध में पाये जाते हैं और उन्हें अलग भी किया जा सकता है। तथा ऐसे व्यक्ति जो लैक्टोस असहिष्णुता के कारण डेयरी उत्पादों का उपभोग नहीं कर पाते हैं उनके लिए उपयोग में लाया जा सकता है। एक अन्य अध्ययन से यह निष्कर्ष निकला है कि सीसा द्वारा उत्पन्न लिपिड पेरॉक्सीडेसन भी कप्परिस, आर्टिमिसिया और मठ्ठा प्रोटीन के ग्रहण के द्वारा प्रभावहीन किया जा सकता है।

प्रोबायोटिक्स और प्रीबायॉटिक्स का मिश्रण, जो कि स्वास्थ्य वर्धक जीवनों की वृद्धि करके आंत्र के जीवाणुओं एवं उनके चयापचय को बढ़ाता है और इनके मिश्रण को सिनबायोटिक की तरह वर्णन किया जाता है। प्रीबायॉटिक्स के महत्वपूर्ण उपयोग डेयरी उत्पादों मे मुख्य रूप से टेबल स्प्रेड, सेंके हुए खाद्य पदार्थ और ब्रेड, मधुशाला और नाशते का अनाज, सलाद ड्रेसिंग, मांस उत्पादों और कुछ मिष्टान सामग्री में किया जाता है।

निष्कर्ष

खाद्य पदार्थों एवं स्वास्थ्य के बीच तालमेल बनाये रखने के लिए बहुत सारे डेयरी उत्पाद एवं उनका विकास एक बहुत अच्छा उदाहरण है क्योंकि आजकल लोग स्वास्थ्य के साथ–साथ आहार दोनों ही प्राथमिक रूप से मांग करते हैं। इसलिए इनकी पूर्ति के लिए बाजार में बहुत से स्वास्थ्यवर्धक डेयरी एवं खाद्य उत्पाद मौजूद हैं। एक अच्छे आहार का व्यक्ति के स्वास्थ्य से सीधा सम्बंध होता है यह कोई नयी बात नहीं है लेकिन लोगों का ध्यान दिन प्रतिदिन इस ओर बढ़ता ही जा रहा है।

17 डेरी एवं खाद्य प्रसंस्करण संयंत्र के लिए स्वच्छ डिजाइन संबंधी कुछ आवश्यक बातें

पी.बर्नवाल, वरिष्ठ वैज्ञानिक एवं पी.एस. मिंज, वैज्ञानिक

डेरी अभियांत्रिकी प्रभाग, भाकृअनुप - राष्ट्रीय डेरी अनुसंधान संस्थान, करनाल

प्राचीन काल से ही, लोगों ने स्वच्छता को ''साफ–सफाई के माध्यम से उपचार'' के रूप में और संरक्षण और स्वास्थ्य को बढ़ावा देने वाले विज्ञान के रूप में समझा था। 19वीं सदी के अंत में, रोगों के एक प्रमुख कारणों के रूप में कीटाणुओ को मान्यता देने के बाद, स्वच्छता उपायों को तेजी से व्यवहार में लाया जाने लगा। 20 वीं सदी की शुरूआत से ही यह स्पष्ट हो गया था कि सुरक्षित भोजन के उत्पादन द्वारा रोगों के रोकथाम–संबंधी उपाय किये जा सकते है और इस तरह खाद्य स्वच्छता संबंधी विषय का जन्म हुआ था। स्वच्छता को 'खाद्य श्रृंखला के सभी स्तरों पर सुरक्षा और भोजन की उपयुक्तता सुनिश्चित करने के लिए आवश्यक सभी शर्तों और उपाय के रूप में परिभाषित किया जा सकता है। एक डेरी एवं खाद्य प्रसंस्करण संयंत्र में दूषित पदार्थों को भौतिक, रासायनिक और सूक्ष्मजीवविज्ञानी पदार्थों के रूप में वर्गीकृत किया जा सकता है। गुणवत्ता डेरी एवं खाद्य प्रसंस्करण इकाइयों की स्वच्छ डिजाइन के साथ शुरू होता है। डेरी एवं खाद्य प्रसंस्करण संयंत्र के अनुचित डिजाइन के कारण उत्पाद–संदूषण हो सकता है जिसमे डेरी खाद्य उत्पादों की गुणवत्ता पर विपरीत असर हो सकता है।

1. सामान्य स्वच्छता प्रथायें:

डेरी एवं खाद्य उद्योग द्वारा विकसित प्रथम सुरक्षा प्रणालियों में से एक अच्छी विनिर्माण प्रथा (गुड मैनुफैकचरिंग प्रैक्टिस–जीएमपी) को शामिल करना था, जिसका उपयोग अंतिम उत्पाद की परीक्षण के लिए एक पूरक के रूप में किया गया था। जीएमपी भी स्वच्छ डेरी एवं खाद्य उत्पादन के लिए एक रूपरेखा प्रदान करता है, जिसे अक्सर एक अच्छे स्वच्छ प्रथा (गुड हाइजीनिक प्रैक्टिस–जीएचपी) के रूप में जाना जाता है। जीएचपी को पूरी डेरी एवं खाद्य श्रृंखला (फूड चेन) में लागू किया जाना चाहिए, जिससे उत्पाद अपने प्रयोजित उपयोग के लिए सुरक्षित और उपयुक्त हो सकें। जीएचपी की अवधारण काफी हद तक विषयपरक है और इसके लाभ मात्रात्मक होने की बजाए गुणात्मक हो जाते है। इसका उत्पाद की सुरक्षा की स्थिति से कोई सीधा संबंध नहीं है, लेकिन इसके उपयोग को सुरक्षित भोजन के उत्पादन के लिए एक आवश्यक निवारक उपाय के रूप में माना जाता है। उन स्वच्छता के उपायों को एक संकट विश्लेषण संवेदनशील नियंत्रण बिंदु (हैजर्ड एनालिसिस क्रिटिकल कंट्रोल पॉइंट – एचएसीसीपी) की अवधारणा में शामिल किया जा सकता है, जिसके द्वारा इन उपायों से उम्मीद के मुताबिक परिणाम मिलें और नियंत्रण भी रहें।

जीएचपी की स्थापना लंबे व्यावहारिक अनुभव का नतीजा है और इसके प्रमुख घटक निम्नलिखित है:

1.1 परिसर और उपकरणों के डिजाइन:

इसमें, अस्वच्छता के खतरों से बचने और सुरक्षित डेरी एवं खाद्य उत्पादन की सुविधा के लिए, परिसर के स्थान और नक़्शे (लेआउट) को बनाया जाता हैं। डेरी एवं खाद्य प्रसंस्करण और संचालन (हैंडलिंग) के उपकरणों को डिजाइन करते समय हमेशा स्वच्छता को ध्यान में रखना चाहिए जैसे आसानी से सफाई होना आदि।

1.2 उत्पादन प्रक्रिया का नियंत्रण:

नियत्रण उपायों को पूरे आपूर्ति श्रृंखला (सप्लाई चेन) को लागू करना चाहिए। इसमें कई कारकों जैसे कच्चा–माल, पैकेजिंग और प्रक्रिया–जल तथा साथ ही साथ स्वयं–उत्पाद का भी ध्यान रखा जाता है। इसके प्रमुख पहलुओं में, समूचे (सम्पूर्ण) प्रक्रिया का प्रबंधन और पर्यवेक्षण तथा साथ ही उचित रूप में अभिलेखबद्ध प्रणाली (रिकॉर्डिंग सिस्टम), शामिल हैं।

चित्र–1: स्वच्छ संयंत्र (प्लांट) डिजाइन के कुछ उदाहरण

1.3 संयंत्र (प्लांट) का रखरखाव और सफाई:

दोनों, प्रसंस्करण यंत्रो/मशीनों/उपकरणों और इमारत (बिल्डिंग) के भवन–निर्माण, को अच्छी हालत में बनाए रखे जाना चाहिए। संयंत्र (प्लांट) की सफाई, कीटाणुशोधन तथा नियमित रूप से निगरानी को प्रभावशाली बनाने के लिए, उपयुक्त कार्यक्रमों को विकसित किए जाने की जरूरत है। कीट नियंत्रण और अपशिष्ट पदार्थों (कचरे) के प्रबंधन के लिए, उचित प्रणालियां (सिस्टम) भी होने चाहिए।

1.4 व्यक्तिगत स्वच्छता:

कर्मचारियों (स्टाफ) को व्यक्तिगत स्वच्छता के उच्च मानकों, जैसे सुरक्षात्मक कपड़े पहनना, हाथ धोना और सामान्य व्यवहार आदि, को बनाए रखना आवश्यक हैं। आगंतुकों को भी सख्ती (दृढ़ता) से इन मामलों में नियंत्रित किया जाना चाहिए। कार्मिकों (कर्मचारियों) के स्वास्थ्य–स्थिति की नियमित रूप से निगरानी की जानी चाहिए और किसी भी बीमारी या चोट को दर्ज (रिकॉर्ड) करना चाहिए।

1.5 परिवहन:

परिवहन वाहनों के उपयोग और रखरखाव (मेंटेनेन्स) के लिए, आवश्यक सुविधाओं को स्थापित किया जाना चाहिए जैसे उनकी सफाई और कीटाणुशोधन व्यवस्था आदि। वाहनों के उपयोग को अच्छी तरह व्यवस्थित और निगरानी में रखना चाहिए।

1.6 उत्पाद जानकारी और उपभोक्ता जागरूकता:

यह बहुत ही महत्वपूर्ण है कि बने हुए अंतिम उत्पाद को उपयुक्त रूप से लेबलिंग (चिन्हित) किया गया हो और उपभोक्ता को उत्पाद हैंडलिग और भंडारण पर सभी प्रासंगिक जानकारी प्रदान की गई हो जिसमें 'तिथि तक उपयोग' (यूज़ बाई डेट) भी शामिल हो। लेबलिंग (चिन्ह) पर, उत्पाद की बैच और मूल का संकेत अवश्य होना चाहिए जिससे कि पूरा पता लगाने (सुराग लग सकने / ट्रैसिएबिलिटी) की संभावना बनी रहे।

1.7 कर्मचारी प्रशिक्षण:

डेरी एवं खाद्य स्वच्छता और सुरक्षा के संबंध में, सभी कार्मिकों (कर्मचारियों) को उचित प्रशिक्षण प्राप्त करना चाहिए और अपनी व्यक्तिगत जिम्मेदारियों से पूरी तरह से अवगत कराया जाना चाहिए। इस तरह के प्रशिक्षण कार्यक्रमों को नवीनतम जानकारियों के साथ आवश्यकता के अनुसार जारी रखा (दोहराया) जाना चाहिए।

2. स्वच्छ संयंत्र (प्लांट) डिजाइन

स्वच्छ संयंत्र डिजाइन का प्राथमिक उद्देश्य, सूक्ष्म–जीवीय (माइक्रोबियल) और अन्य दूषित पदार्थों (कांटामिनेन्ट्स) के कारखाने में कुछ क्षेत्रों के बीच प्रवेश को सीमित करने के लिए प्रभावी स्वच्छता अवरोध (प्रतिबंध/बाधा) स्थापित करना (चित्र–1), होना चाहिए।

डेरी संयंत्र के भीतर, स्वच्छ डिजाइन और संचालन आवश्यकताओं के भिन्न स्तरों के क्षेत्र होंगे:

2.1 गैर–उत्पादन वाले क्षेत्र:

ये वे क्षेत्र हैं जहां निर्मित या पाश्चुराइज्ड उत्पादों को दूषित होने का कोई खतरा नहीं है अथवा इन क्षेत्रों में संदूषण को बहुत ही मामूली महत्व का माना जाता है। इस तरह के क्षेत्रों में, कच्चे माल को लेना, चबूतरों (पैलेट्स), वापसी के बर्तनों (कंटेनरों) और शैचालय, भंडारण सुविधा और सेवा /कार्य की सुविधाओं की सफाई जैसे बॉयलर कमरे, सीआईपी उपकरण आदि शामिल हैं। सामान्य अच्छी स्वच्छ प्रथाओं को बनाए रखना चाहिए।

2.2 स्वच्छ/कम जोखिम वाले क्षेत्र:

इन क्षेत्रों में, उत्पाद को एक दूषित पर्यावरण में पड़ने (लाने) के

जोखिम सीमित या कम होते हैं और यहाँ अच्छी स्वच्छ विनिर्माण प्रथाओं (गुड मैनुफैकचरिंग प्रैक्टिस–जीएमपी) की आवश्यकता होती है। इस तरह के क्षेत्र, प्रायः 'उच्च जोखिम/उच्च देखभाल' वाले क्षेत्रों के निकट स्थित होते है और इस प्रकार एक स्वच्छ 'अवरोध–ताला (बैरियर लॉक)' के रूप में कार्य करते हैं। पैकेजिंग सामग्री, प्रयोगशालाओं, ऊष्मा–उपचार क्षेत्र के भंडारण आदि 'स्वच्छ' क्षेत्रों के उदाहरण हैं। इन क्षेत्रों को अलग किया जाना चाहिए, उदाहरण के लिए, गीले मिश्रण (वेट मिक्सिंग) प्रक्रिया को शुष्क मिश्रण (ड्राई मिक्सिंग) प्रक्रिया के संचालन से अलग करना चाहिए। संकट विश्लेषण संवेंदनशील नियंत्रण बिंदु (हैजर्ड मनालिसिस क्रिटिकल कंट्रोल पॉइंट – एचएसीसीपी) योजना के संबंध में, इन क्षेत्रों को प्रायः ऐसे क्षेत्रों के रूप में माना जाएगा जहाँ सूक्ष्मजीवविज्ञानिकी निवारक (प्रिवेंटिव)

क्रम संख्या	धातु/पदार्थ	विवरण
1.	पिटवा लोहा (रॉट आयरन)	लोहे (आयरन) का शुद्धतम रूप, न्यूनतम कार्बन और अन्य पदार्थों की उपस्थिति, आसानी से मशीनिंग एवं वेल्डिंग होने योग्य, उच्च तापमान अनुप्रयोगों के लिए इस्तेमाल होने योग्य जैसे भाप की आपूर्ति लाइनों, हीटिंग क्वाइल्स, निकास लाइनों आदि।
2.	ढलवा लोहा (कास्ट आयरन)	इसमें 2.5 से 4% तक कार्बन होता है। इसे किसी भी आकार के सांचे में ढाला जा सकता है, लेकिन यह मशीनिंग और वैल्डिंग के लिए कठिन होता है। आमतौर पर इस प्रकार के लोहे से, भट्टियों (फर्नेस) की सलाखों (छड़ो), क्रशिंग और ग्राइंडिंग मशीनों के जबड़े, खंभों के आधार आदि को बनाया जाता है।
3.	स्टील्स	इसमें 0.05 से 2.0% तक कार्बन होता है। इसके अलावा, फास्फोरस, सल्फर, सिलिकॉन और मैंगनीज को बहुत कम मात्रा में मिलाया जाता है जिससे यह और उपयोगी हो सके। • हल्का (माइल्ड) स्टील (0.05 से 0.3% कार्बन) : बर्तनों (वेसेल्स), पाइप और फिटिंग आदि को बनाने मे उपयोगी • मध्यम कार्बन स्टील (0.3 से 0.5% कार्बन) : मजबूती में सुधार जैसे शाफ्ट, स्प्रिंग्स, बोल्ट आदि को बनाने में उपयोगी • उच्च कार्बन स्टील (0.5 से 2% कार्बन) : बहुत कठोरपन, जैसे ब्लेड, चक्कू (सॉ), छेनी (चिजेल्स) आदि काटने के उपकरणों को बनाने में उपयोगी
4.	मिश्र धातु स्टील्स (एलाय स्टील्स)	इसे निकेल, क्रोमियम, सिलिकॉन, मैंगनीज, मोलिब्डेनम, टाइटेनियम आदि को मिलाकर बनाया जाता है। इससे ये अत्यधिक जंग प्रतिरोधी होते जाते हैं और हीट एक्सचेंजर्स, पाइपलाइनों, और सभी खाद्य प्रसंस्करण उपकरणों को बनाने में उपयोग किये जाते है।
5.	एल्यूमीनियम और उसके मिश्रण (एलाय)	यह सीढ़ीयों, दरवाजों, खिड़कियों और फ्रेम बनाने के लिए उपयोग होता है। क्षारीय डिटर्जेंट लगने पर, इसका खराब आदि होने का खतरा बने रहना ही इसकी सबसे बड़ी कमी/दोष है।

तालिका 1: उपकरण–निर्माण में उपयोग होने वाले प्रमुख धातुओं/पदार्थों का वर्गीकरण और विवरण

उपायों को अपनाया जाता है।

2.3 उच्च जोखिम वाले क्षेत्र:

'उच्च जोखिम' क्षेत्र, कारखाने का एक अच्छी तरह से परिभाषित, फिजिकली (निर्माण या शारीरिक) रूप से अलग हिस्सा होता है, जिसे बने हुए अंतिम उत्पाद के फिर से संदूषित (री–कांटामिनेषन) होने से रोकने के लिए पूरी स्वच्छता आवष्यकताओं के अनुसार डिजाईन किया और चलाया जाता है। इसके उदाहरण प्रसंस्करण, ब्राइनिंग, पकने और पैकिंग के कमरे इत्यादि हैं। आमतौर पर, विषिष्ट स्वच्छता संबंधी आवष्यकताएं होती हैं जैसे इमारतों (बिल्डिंगों) के मापदंड, नक्षा (लेआउट), निर्माण और उपकरणों के मानकों, कर्मचारियों के प्रषिकक्षण और स्वच्छता और अन्य संचालन प्रक्रियाएं इत्यादि।

3. स्वच्छ उपकरण डिजाइन

डेरी एवं खाद्य उत्पादों की हैंडलिंग और प्रसंस्करण के दौरान उपकरणों की सतह के साथ परस्पर क्रिया (इंटरेक्षन), खाद्य उत्पादों की भौतिक, रासायनिक और बैक्टीरियल गुणधर्मों/गुणवत्ता के संदर्भ में, एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। तालिका 1 में, उपकरणों, पाइपों और इनके भागों (पार्ट्स) के निर्माण के लिए कुछ आवष्यक पदार्थों/सामग्रियों का वर्गीकरण प्रस्तुत किया गया है।

उत्पाद के संपर्क में आने वाले निर्माण पदार्थों/सामग्रियों में एक व्यापक तापमान सीमा पर पर्याप्त ताकत/मजबूती, दूषण/मिलावट/धब्बा की अनुस्थिति, जंग और घर्षण प्रतिरोधी, आसानी से साफ होने योग्य किया हो सकता है, एक उचित जीवन के लिए होना चाहिए, और आकार (षेप) देने में सक्षम होना चाहिए। आम तौर स्टेनलेस स्टील इन सभी जरूरतों को पूरा करती है। डेरी और खाद्य उपकरणों के निर्माण के लिए सबसे ज्यादा आमतौर पर उपयोग होने वाले स्टेनलेस स्टील (एसएस), अमेरिकी लौह और इस्पात संस्थान (ए आई एस आई) के ऑस्टेनिटिक स्ऐनलेस स्टील के 300 सीरीज/श्रृंखला (304, 306, 308 और 316) के है, जिनका उल्लेख तालिका 2 में किया गया है।

डेरी एवं खाद्य प्रसंस्करण के उपकरण, स्वच्छ एवं कार्यचालन स्थिति में बनाए रखने के लिए, आसान होनें चाहिए जिससे यह सुनिश्चित हो सके कि सूक्ष्मजीवविज्ञानी समस्याओं को रोकने के लिए यह उम्मीद के रूप में प्रदर्शन (काम) करेंगे। इसलिए, उपकरणें को साफ और संक्रमण से उत्पादों की रक्षा करने के लिए आसान तरीका होना चाहिए। एसेप्टिक (सड़न रोकने वाले) उपकरणों के मामले में, उपकरण पाश्तिराइज़ या कीटाणुविहीन करने योग्य (उपयोग पर निर्भर) होना चाहिए और सूक्ष्म–जीवों के प्रवेश को रोकने योग्य (अर्थात् बैक्टीरिया अवरोधी) होना चाहिए। उन सभी कार्यों की, जो सूक्ष्म–जीवविज्ञानी सुरक्षा के दृष्टिकोण से महत्वपूर्ण हैं, मॉनिटरिंग (देख–रेख) और उनपर नियंत्रण करना संभव होना चाहिए। चाहे जितना भी स्वच्छ डिजाइन के लिए तकनीकी जानकारी और अनुभव हो, जिसे डिजाइन और निर्माण में लगाया जाय, यदि आवश्यकताओं को पूरा करना बहुत ही महत्वपूर्ण है, तो अभ्यास (प्रैक्टिस) में यह देखा गया है कि अंतिम/परिणामस्वरूप प्राप्त डिजाइन का निरीक्षण, परीक्षण और सत्यापन की जाँच करना बहुत ही जरूरी है। महत्वपूर्ण (संवेदनशील) मामलों में, रखरखाव (मेंटेनेन्स) के तौर पर स्वच्छता के स्तर की जाँच करना आवश्यक हो सकता है। डिजाइनर को यह सुनिश्चित करना चाहिए कि निरीक्षण और/या सत्यापन के लिए संबधित क्षेत्रों तक आसानी से पहुंचा जा सके।

डेरी एवं खाद्य प्रसंस्करण के उपकरण/मशीन डिजाइन की बुनियादी सुविधाओं में से कुछ निम्नवत है:

- त्वरित निराकरण (डिसमैंट्लिंग) और संयोजन (असेम्बलिंग) की सुविधा
- किसी भी ठहराव से बचने के लिए स्वतः ढलान वाली नाली
- सभी वेल्डेड जगहों के कोनों का गोल होना
- निकला हुआ किनारों की तरह सिरे (हेड्स)
- समान तापमान वितरण मैकेनिज्म (तंत्र)
- कोई भी अदृश्य/अंधी जगह और दरारों का न होना
- स्वच्छ–क्षमता और परिशोधन

4. निष्कर्ष

स्वच्छता प्रसंस्करण संयंत्रों के लिए एक शब्द ही नहीं है, बल्कि आज के परिदृश्य में उत्पाद की स्वीकृति के लिए एक अनिवार्य

एआईएसआई 300 सीरीज/श्रृंखला (स्टेनलेस स्टील)	संघटन (प्रतिशत)				
	कार्बन (अधिकतम)	मैंगनीज	क्रोमियम	निकेल	अन्य पदार्थ
301	0.15	2.0	16–18	6–8	–
302	0.15	2.0	17–18	8–10	–
304	0.08	2.0	18–20	8–12	–
304 एल (304 एल)	0.03	2.0	18–20	8–12	–
309	0.20	2.0	22–24	12–15	–
310	0.20	2.0	24–26	18–12	–
316	0.08	2.0	16–18	10–14	2–3 (मोलिब्डेनम)
316 एल (316 एल)	0.03	2.0	16–18	10–14	2–3 (मोलिब्डेनम)
321	0.08	2.0	17–18	9–12	–
329	0.09	< 1.0	23–28	2.5–5.5	1.7 (नाइट्रोजन)
347	0.08	2.0	17–19	9–13	–
409	0.03	< 1.0	10.5–11.5	< 0.5	–
410	0.12	< 1.0	11.5–13.5	< 0.75	–

तालिका 2: आमतौर पर खाद्य और डेरी उद्योग में उपयोग होने वाले कुछ स्टेनलेस स्टील

आवश्यकता है। उत्पाद सुरक्षा मानकों के अनुसार सही हैं, इसे सुनिश्चित करने के लिए फार्म–स्तर उत्पादन से लेकर ग्राहक द्वारा अंतिम उत्पाद की खपत तक स्वच्छता को देखना होगा और इस पर अनिवार्यतः विचार करना होगा। यदि स्वच्छता मानकों का अनुसार उत्पाद, उत्पादन– संग्रह– परिवहन– प्रसंस्करण–विपणन के किसी भी चरण में विफल रहते हैं, तो इसका मतलब डेरी एवं खाद्य उत्पाद को गुणवत्ता और सुरक्षा से समझौता किया गया है। ऐसी स्थिति में, उत्पाद का उपयोग के योग्य नहीं माना जायेगा और ग्राहक को जोखिम में रहना पड़ सकता है। परिणामतः उद्योगों/कारोबारियों को अंततः अपने ब्रांड और प्रतिष्ठा के भयावह अपरिवर्तनीय परिणाम भुगतना पड़ सकता है। अतः स्वच्छता को ध्यान में रखते हुए सुरक्षा मानकों के अनुसार डेरी एवं खाद्य उत्पादों को बनाना चाहिए जिससे फार्म–स्तर उत्पादन से लेकर अंतिम उत्पाद की खपत तक डेरी एवं खाद्य उत्पाद की गुणवत्ता और सुरक्षा बनी रहे।

18 उच्च गुणवत्ता के पनीर उत्पादन हेतु स्वचालित प्रेस तकनीक का विकास

चित्रनायक, मंजुनाथ एम, महेश कुमार, आशीष कुमार सिंह, अमिता वैराट एवं खूशबू कुमारी

डेरी अभियांत्रिकी प्रभाग, भाकृअनुप-राष्ट्रीय डेरी अनुसंधान संस्थान, करनाल

प्रोसेसिंग इंडस्ट्री व खाद्य पदार्थों की गुणवत्ता

खाद्य पदार्थों की गुणवत्ता उपभोक्ताओं के साथ साथ फूड प्रोसेसिंग इंडस्ट्री के लिए भी काफी महत्त्वपूर्ण है। हर उपभोक्ता पौष्टिक, स्वच्छ, उत्तम गुणवत्ता व स्वास्थ्य की दृष्टिकोण से पूरी तरह सुरक्षित खाद्य पदार्थ ही बाजार से खरीदना चाहता है। उसी प्रकार हर खाद्य पदार्थ से जुड़ी इंडस्ट्री व कम्पनी भी ऐसी ही अच्छी, पौष्टिक व उत्तम गुणवत्ता वाले उत्पाद मार्केट में लाकर अपनी साख बनाना चाहती है। विभिन्न प्रकार के खाद्य पदार्थ व खासकर दुग्ध व दुग्ध के विभिन्न उत्पादों की गुणवत्ता बरकरार रखने हेतु उनमें होने वाली रासायनिक प्रतिक्रियाएं, उनके माइक्रोबियल काउन्ट मान तथा उनके रख–रखाव व सफाई आदि पर काफी ध्यान रखना पड़ता है। खाद्य पदार्थों को खुले में रखने व बार बार छूने से उनमें रासायनिक प्रतिक्रिया की दर व माइक्रोबियल संक्रमण की संभावना बढ जाती है। अतः बाह्य संक्रमण व बार बार छूनें की प्रक्रिया को नियंत्रित करने के लिए स्वचालन (ऑटोमेशन) तकनीक अपनाई जाती है। ऑटोमेशन तकनीक में मानवीय दखल कम हो जाती है व मशीन निर्धारित ढंग से सुरक्षित वातावरण में बिना किसी बाह्य वातावरण के हस्तक्षेप के अपना कार्य सम्पादित करता है। मानवीय भूलों व गलतियों में तो कमी आती ही है साथ ही साथ खाद्य पदार्थों में माइक्रोबियल संक्रमण की संभावनाओं में भी कमी आती है। इसके फलस्वरूप खाद्य पदार्थों की शेल्फ लाइफ में वृद्धि होती है व इन्हें अधिक समय तक उत्तम गुणवत्ता के साथ संरक्षित व सुरक्षित रखा जा सकता है।

दुग्ध व दुग्ध से बने उत्पाद व उनकी शेल्फ लाइफ

खाद्य–पदार्थ, खासकर दूध से बने उत्पादों की शेल्फ लाइफ सामान्यतः कम होती है और सामान्य तापक्रम पर वे जल्दी खराब होने लगते हैं। दूध में प्रति मिली लीटर माइक्रोबियल काउन्ट 10^5 से अधिक नहीं होना चाहिए। माइक्रोंबियल काउन्ट 10^5 प्रति मिली लीटर से कम होने पर ही दूध को उत्तम गुणवत्ता की श्रेणी में रखा जाता है व इसे अन्तर्राष्ट्रीय बाज़ार में स्वीकारा जाता है। दूध उत्पादों में पनीर का उपयोग भारत में व अन्य देशों में बहुतायत में होता है। सामान्य तापक्रम पर पनीर लगभग एक दिन (24 घंटे) तक ही सुरक्षित रह सकता है, जबकि रेफ्रिजेरेशन तापक्रम पर पनीर को लगभग सात दिनों तक उत्तम अवस्था में सुरक्षित रखा जा सकता है। हर खाद्य पदार्थों की शेल्फ लाइफ के दौरान मुख्यतः उनमें तीन प्रकार के परिवर्तन यथा–भौतिक,

आई डी कंट्रोलर, टाइमर फ्रंटपैनल व पनीर प्रेस

रासायनिक व माइक्रोबियल काउन्ट मान में परिवर्तन होते हैं। इन परिवर्तनों में से मुख्यतः रासायनिक व माइक्रोबियल काउन्ट मान में परिवर्तन द्वारा खाद्य पदार्थों व दूध व दूध के उत्पादों की शेल्फ लाइफ प्रभावित होती है।

स्वचालन विधि द्वारा दुग्ध उत्पादों का गुणवत्ता मूल्यांकन

खाद्य पदार्थों, दुग्ध व दुग्ध के उत्पादों की शेल्फ लाइफ के दौरान होने वाले परिवर्तन मानों का मूल्याकंन व मापन मुख्यतः दो तरीकों से किया जाता है। पहली विधि में इन गुणों का मूल्यांकन अनुभव व खाद्य पदार्थ की स्थिति, यथा, रंग, गंध आदि देखकर किया जाता है, परन्तु इस विधि द्वारा प्राप्त मानों में विविधता होने की संभावना अधिक होती है व प्राप्त मान प्रायः सटीक नहीं होते हैं। साथ ही साथ इस विधि द्वारा प्राप्त मानों में निर्धारण करने वाले की वर्तमान स्थिति के अनुसार बदलाव व विविधता भी पायी जाती है। इस कमी को दूर करने हेतु दूसरी विधि का प्रयोग किया जाता है, जिसमें विभिन्न प्रकार के यंत्रों व ऑटोमेटिक यंत्रों का प्रयोग किया जाता है। ये स्वचालित (ऑटोमेटिक) यन्त्र खाद्य पदार्थों में होने वाले हर प्रकार के परिवर्तनों का स्टीक मूल्यांकन करके उनका सही मान देते हैं व इस प्रकार प्राप्त मानों में विविधता नहीं होती है। इन यंत्रों द्वारा प्राप्त मानों को कंप्यूटर में सुरक्षित रखा व अन्य उपयोग हेतु आगे भी लाया जा सकता है। यंत्रों द्वारा स्क्रीन पर दिखाए गए मानों के द्वारा खाद्य पदार्थों में होने वाले रासायनिक, भौतिक व माइक्रोबियल काउन्ट मान में परिवर्तन का सही सही मूल्यांकन संभव हो पाता है व ये डाटा, ग्राफ–टेबल आदि के रूप में प्रस्तुत किये जाते हैं।

पनीर बनाने की प्रक्रिया हेतु स्वचालन विधि का प्रायोग

पनीर एक ऐसा दुग्ध उत्पाद है, जो भारतीय खान–पान व खासकर शाकाहारी लोगों का मुख्य आहार है। आजकल हर होटलों, घरों, शादी–ब्याह या पार्टी में पालक पनीर, मटर पनीर, पनीर टिक्का, पनीर के पकौड़े काफी मात्रा में पकाए व स्वाद व चाव के साथ खाए भी जाते हैं। पनीर मे उपस्थित पौष्टिक तत्वों के कारण ये स्वास्थ्य की दृष्टिकोण से भी बहुत की फायदेमंद आहार है। पनीर बनाने हेतु दूध को लगभग 90 से 95 डिग्री सेंटीग्रेड तक गर्म कर उसमें 2 से 3 प्रतिशत की मात्रा का सिट्रिक अम्ल का घोल, 70–75 डिग्री सेंटीग्रेड तक गर्म जल में बनाकर डाला जाता है। सिट्रिक अम्ल के घोल डालने पर दूध फटने लगता है व गरम छेना पृथक होने लगता है। पांच सात मिनट तक छेना को नीचे बैठने व पृथक होने के बाद इसे पतले कपड़े से छानकर अलग कर प्रेसिंग मशीन में हूप में रखा जाता है। ये भी ध्यान रखा जाता है कि प्रेसिंग से पूर्व छेना का तापमान 75–80 डिग्री सेंटीग्रेड से कम न हो। हूप में रखने के बाद टाइमर में समय का मान नियत कर प्रेसर ऑन किया जाता है। एफ आर एल यूनिट व सोलेनोइड वाल्व से होकर कंप्रेस्ड हवा न्युमैटिक सिलेंडर को ऑपरेट कराती है व पनीर हूप के ऊपर दाब पड़ने लगता है। दाब का मान भी एफ आर एल यूनिट द्वारा स्वचालन विधि से नियत कर छेना के ऊपर लगाया जाता है। इस प्रकार छेना के ऊपर लगाने वाला दाब व समय दोनों को स्वचालन विधि द्वारा नियत किया व पनीर के ऊपर लगाया जाता है। नियत समय के बाद सोलोनोइड वाल्व का उपरी वाल्व बंद हो जाता है व नीचे का वाल्व खुल जाता है जिससे सिलिंडर ऊपर उठ जाता है व पनीर हूप में तैयार होकर प्राप्त हो जाता है, जिसे ठंडे जल में एक से दो घंटे तक रखा जाता है व पनीर प्रेस के ऊपर लगाने वाला दाब का मान 3 से 5 किलोग्राम / सेमी^{2} के मध्य उत्तम पाया गया व ये दाब 10 से 14 मिनट की अवधि तक लगाया गया। इस प्रकार स्वचालन विधि से तैयार किये गए पनीर की गुणवत्ता की जांच की गयी। इसमें नमी की मात्रा 55 से 65 प्रतिशत तक पाई गयी जो उत्तम क्वालिटी के पनीर में होती है। इसी प्रकार टेक्सचर एनालाय्सर द्वारा टेक्सचर गुणवत्ता मान प्राप्त किये गए। पनीर नमूनों का हार्डनेस का मान 35 से 42 न्यूटन के मध्य पाया गया, जो पनीर की उत्तम गुणवत्ता हेतु आवश्यक है। अन्य टेक्सचर गुण भी उत्तम गुणवत्ता वाले पाए गए। स्वचालन विधि से बनाये गए पनीर में तापक्रम मापने व देखने हेतु पी आई डी कंट्रोलर व तापक्रम सेंसर भी लगाया गया है, जो पूरे प्रक्रिया के दौरान तापक्रम बताता रहता है। कंट्रोल पैनल में लगे पी आई डी केंट्रोलर में तापक्रम मान देखकर हर प्रक्रिया जरूरत के अनुसार की जाती है। इस स्वचालन विधि से बनाये पनीर का माइक्रोबियल काउन्ट मान भी कम पाया गया, क्यूंकि इस विधि में मानवीय हस्मक्षेप कम हुआ। अतः ये कहा जा सकता है कि ये तकनीक उत्तम गुणवत्ता के पनीर व ऐसी अन्य ऐसे कई उत्पादों हेतु उपयुक्त है। फूड प्रोसेसिंग इंडस्ट्री व डेरी इंडस्ट्री इस स्वचालन की तकनीक को अपना कर उत्तम गुणवत्ता के उत्पादों का उत्पादन कर रहे हैं व इस दिशा में आगे बढ़ रहे हैं।

19 डेरी फार्म में अभिलेख रखने का महत्व

तुलिका कुमारी, अर्जुन प्रसाद वर्मा, परमेश्वर के नायक एवं मानिष सावंत
डेरी अभियांत्रिकी प्रभाग, भाकृअनुप-राष्ट्रीय डेरी अनुसंधान संस्थान, करनाल

किसी भी व्यवसाय को, चाहे वह खेती–बाड़ी हो या पशु–पालन, चलाने के लिए यह आवश्यक है कि उसका उचित अभिलेख रखा जाए। सोचिए अगर एक दुकानदार बही–खाता/ अभिलेख न रखे या उसका खाता गुम हो जाए, तो कितनी मुश्किलों का सामना करना पड़ेगा। भारत में पिछले चार दशकों में पशु–पालन पद्धति में बहुत अंतर आया है। पशु–पालन को डेरी अद्योग का रूप प्रदान करने के लिए सरकार ने कई कार्यक्रम चलाये है। वैज्ञानिक पद्धति से पशु–पालन हेतु पशुपालक को आहार, चारा, दवाई, बीमा इत्यादि पर चल पूँजी लगानी पड़ती है। इस कार्य में पशु पालक अगर अपनी थोड़ी मेहनत व संयम लगाकर यदि खाता रिकार्ड सही व नियमित ढंग से रखना शुरू कर दे तो उसके उद्योग को लाभ प्राप्त होगा। पशु पालक को अपने पशुओं को दिये गये आहार की मात्रा का और उनसे उत्पन्न दूध और घी की मात्रा का अभिलेख रखे बिना पशु पालक को उनके बारे में सही सही ज्ञान नहीं हो पाता है कि अमुक जानवर रखना लाभदायक है अथवा नहीं। कई बार जबकि पशुपालक किसी गाय या भैंस को बहुत अच्छा समझता है, परन्तु उसका व्यक्तिगत अभिलेख देखने से पता चलता है कि वह अन्य गाय/भैंस से भी निम्न स्तर का है। अतः पशु पालन में बही खाता/अभिलेख रखना एक महत्तवपूर्ण कार्य है जो डेरी मालिक को डेरी उद्योग में लाभ प्राप्त कराने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाता है।

अभिलेख रखने से लाभः–

1. डेरी फार्म में होने वाले लाभ तथा हानि का हर समय ज्ञान रहता है।
2. पशुओं को आवश्यकतानुसार संतुलित एंव सस्ता आहार दिया जा सकता है।
3. पशुओं में किसी भी असमानता या रोग आदि का पता चल जाता है।
4. पशुओं के खरीदने बेचने में सहायता मिलती है।
5. पशुओं के चयन तथा अवांछित या बेकार के पशुओं के निष्कासन में सहायता मिलती है।
6. फार्म में आर्थिक लाभ किस प्रकार हो, आगे के लिए योजनाएं बनाना आसान होता है, पशुओं का पंजीकरण भी कराया जा सकता है।
7. फार्म पर नौकरों द्वारा की जाने वाली बेईमानी का पता चलता है।
8. उत्पादन अभिलेखों के आधार पर सन्तति परीक्षण किया जा सकता है।
9. फार्म के पशुओं का उचित मूल्य प्राप्त होता है।
10. प्रजनन सम्बन्धी लेखपत्रों से पशुओं की प्रजनन क्षमता का ज्ञान हो जाता है।

अभिलेखों का वर्गीकरणः–

उेरी अभिलेखों को निम्नलिखित वर्गों में विभक्त कर सकते हैंः–

1. पशु वृत्त पत्र
2. पशु वंशावली अभिलेख
3. वत्स अभिलेख
4. दैनिक दुग्ध उत्पादन अभिलेख
5. मासिक दुग्ध उत्पादन अभिलेख
6. वार्षिक दुग्ध उत्पादन अभिलेख
7. जनन व उत्पादन पंजिका
8. स्वास्थ्य पंजिका
9. लैक्टेसन पंजिका
10. पशुओं का स्टॉक रजिस्टर
11. पशु प्रजनन रजिस्टर
12. प्रतिदिन पशु खाद्य रजिस्टर
13. वृद्धि पंजिका

अभिलेख प्रबंधन के लिए निम्नलिखित बातों पर विशेष ध्यान देना चाहिएः–

1. आपके पास भिन्न नस्लों के कितने पशु है, उनका उम्र कितनी है तथा बाजार में उनकी कीमत क्या है। यदि कोई पशु ऋण लेकर खरीदा है तो ब्याज कितना है।
2. यदि पशुओं के लिए पशु शाला है तो उसे बनाने में कितनी पूँजी लगी एंव उसके रख रखाव में कितना पैसा लग चुका है।

3. पशुओं के चारे में कितना खर्च होता है एंव कौन कौन से चारे प्रयोग किए जाते है।
4. पशु के स्वास्थय को बरकरार रखने के लिए टीके, दवाइयों और पशु डाक्टर की फीस में कितना खर्च होता है।
5. दूध उत्पादन का संपूर्ण हिसाब होना चाहिए कुल दुग्ध उत्पादन कितना है, कितना घर पर इस्तेमाल किया जाता है व कितना और किस रेट में बेचा जाता है। यदि घर पर तैयार घी, मक्खन, पनीर इत्यादि बेचा जाता है तो उसका ब्यौरा भी दर्ज होना चाहिए।
6. गोबर का प्रयोग यदि खाद या ईधन के रूप में होता है तो कितने पैसे की बचत होती है।
7. जब कोई नया पशु खरीदा जाए या बेचा जाए, तो रिकार्ड रखना चाहिए कि कितने में खरीदा/बेचा गया।
8. पशु का अगर बीमा कराया गया है तो बीमा कितनों का है व बीमें की अवधि कब तक है।

डेरी फार्म पर प्रयोग होने वाले कुछ महत्त्वपूर्ण अभिलेख पत्रों के प्रारूप :–

<u>वृत्त–पत्र (History Sheet)</u>

1. पशु की आवकः–

फार्म का नाम...

पशु का नाम तथा नम्बर...........................नस्ल........................

.नर/मादा...

जन्म तिथि...

जन्म स्थान..

प्रजनक साँड...

माता...

माता के सर्वोत्तम ब्याँत का उत्पादन..

....

क्रय की तिथि...

क्रय अधिकारी...

3. पशु का प्रजनन एंव उत्पादनः–

क्रमांक	ब्यांत	सांड का नाम तथा नं.	कितनी बार ग्याभिन हुई	बच्चो का लिंग तथा भार	ब्याने की तिथि	दुग्ध सूखने की तिथि	ब्यांत का दुग्ध उत्पादन	औसत वसा	दूध देने के दिन

(2) दैनिक दुग्ध उत्पादन अभिलेख

डेरी फार्म का नाम.......................................महीना..वर्ष...

क्र. सं.	गाय का नाम व नम्बर	ब्याने की तिथि	दुग्ध उत्पादन तिथि									
			1.		2.		3–3		31		योग	
			सुबह	शाम	सुबह	शाम	सुबह	शाम	सुबह	शाम		
1. 2. 3.												
	योग											

(3) मासिक दुग्ध उत्पादन अभिलेख

डेरी फार्म का नाम..वर्ष...

क्र. सं.	गाय का नाम व नम्बर	ब्याने की तिथि	दुग्ध उत्पादन तिथि								औसत वसा प्रतिशत
			जनवरी		फरवरी–नवम्बर		दिसम्बर		योग		
			सुबह	शाम	सुबह	शाम	सुबह	शाम	सुबह	शाम	
1.											
2.											
3.											
	योग										

विक्रयकर्ता का नाम व स्थान..
दिया गया मूल्य...रू.
आयु.............................वर्ष..........................माह................................

2. पशु की निकासीः–

बिक्री अथवा मृत्यु के समय पशु का मूल्य.................................
....रू.
मृत्यु का स्थान.....................................तिथि..............................
मृत्यु का कारण...
मृत शरीर का विवरण...
पृष्ठ तथा तिथि का ब्यौरा...

इस प्रकार के अन्य अभिलेखों का ब्यौरा रख कर पशु पालक विभिन्न लाभ उठा सकते है, जैस`ः– पशु पालना आपके लिए लाभदायक है या नहीं, अगर आपकी आय से व्यय अधिक है तो इसका कारण भी खाते के मूल्यांकन से ज्ञात हो जाएगा।

यदि आप हर आय व्यय और अन्य बातों का रिकार्ड रखते है तो आप अपने उद्योग की तुलना अन्य दूसरे उद्योग से कर सकते है और इसका लाभ उठा सकते हैं।

इस तरह डेरी फार्म में अभिलेख प्रबंधन ऐ महत्त्वपूर्ण पहलु है।

(4) वत्स पंजिका

फार्म का नाम..

पता..महीना... वर्ष ....

क्र. सं.	जन्म तिथि	संख्याकंन की तिथि	कान संख्या	वत्स का लिंग	सांड	गाय	जन्म के समय भार	निपटान वत्स का वया निपटान किया	तिथि	टिप्पणी
1.										
2.										
3.										
	योग									

20 चारा फसलों, घासों एवं खरपतवारों में पाये जाने वाले रसायन तथा उनका पशु स्वास्थ्य पर प्रभाव एवं बचाव के उपाय

अर्जुन प्रसाद वर्मा, तुलिका कुमारी एवं मालूराम यादव
डेरी अभियांत्रिकी प्रभाग, भाकृअनुप-राष्ट्रीय डेरी अनुसंधान संस्थान, करनाल

पौधों में सक्रिय रासायनों की बड़ी मात्रा पायी जाती हैं। इनमें से कुछ रसायन जैसे डिजीटाक्सिन, कोलचीसीन, ऐट्रापीन आदि मानव और पशु रोगों के इलाज के लिए उत्यन्त उपयोगी पाये गये हैं। हालाकि, कुछ पौधों के संघटकों का पशुओं के स्वास्थ्य एंव उत्पादन पर प्रतिकुल प्रभाव पड़ता हैं। पौधों के इन गुणवत्तारोधी संघटकों का पशु के शरीर पर प्रभाव अचानक या कुछ समय के पश्चात विकसित हो जाता हैं। सौभाग्य से, वातावरण में पाये जाने वाले हजारों पौधों के बीच में, कुछ पौधें ही हानिकारक हैं। जब इन जहरीलें पौधों को खाने से पशु की उत्पादकता में कमी, पशु की मृत्यु, पशु के भार में कमी, उपापचय में गिरावट जैसे विकार उत्पन्न हो जाते है। इन पौधों से उत्पन्न विषाक्तता का उपचार करनें में काफी खर्च आता हैं जिसके फलस्वरूप पशुपालको की आय में हानि होती हैं। दुर्भाग्यवश, पौधों से उत्पन्न विषाक्तता के उपचार के लिए कुछ ही चिक्तिसा संयत्र काम कर रहे हैं। विषाक्त पौधों को खाने से प्रभावित पशु को परिशोधन प्रक्रियों जैसे वोमिटिंग कराना चाहिए एंव सक्रिय चारकोल पिलाना चाहिए। तनाव को दूर करने का प्रयास करना चाहिए जिससे पशु के पेट से विषाक्त पद्धार्थ वोमिटिंग के द्वारा बाहर आ जाये। एक अनुमान, के मुताबिक भारतवर्ष में लगभग 700 जहरीलें पौधों की प्रजातियां पायी जाती हैं जो 90 से अधिक फैमिली की हैं। पशु के चरने के दौरान कुछ पौधों जो विषाक्तता उत्पन्न करते हैं, से सामना करना पड़ता हैं, जो निम्नलिखित प्रकार से हैं :–

1. पारथेनियमः– पारथेनियम को सामान्यता गाजर घास, काग्रेंस घास आदि के नामों से जाना जाता हैं। इस पौधे की पत्तियों, टहनियों और फूलों में विषाक्तता पायी जाती हैं। इस पौधें में पारथेनिन नायक रसायन पाया जाता हैं, जो पशुओं के लिए हानिकारक हैं। इस पौधे के विषाक्त पद्धार्थ का असर सभी पशुओं खासकर गाय, भैंस, भेड़, और बकरी में होता हैं। पशुओं में इसके लक्षण आमतौर पर दस्त के रूप में होते हैं, उसके बाद पशु की त्वचा पर घाव हो जाता हैं और खुजली उत्पन्न हो जाती हैं। पलके एंव मॉंसपेशियों के आसपास सूजन आ जाती हैं। मनुष्यों में पारथेनियम से त्वचा पर एलर्जी हो जाती हैं। पशु के उपेक्षित चारागाह में घास चरनें से इसकी विषाक्ता हो जाती हैं तथा पशु की त्वचा पर घाव का पाया जाना एक प्रमुख पहचान हैं।

उपचार एंव निदानः–

1. जानवरों को दूषित चारागाह पर चरने के लिए नही जाने देना चाहिए।
2. विषक्तता कम करने के लिए सामान्य चारा खिलाये।
3. प्रभावित पशु को लीवर टानिक पिलाना चाहिए।
4. त्वचा की घावों का इलाज करने के लिए इन्टीपरमुरिटिक तथा इन्टीसेपटिक देना चाहिए।
5. गाजर घास की रोकथाम हेतु उचित कदम उठायें।

(2) धतूराः– धतूरा का वनस्पतिक नाम घतूरा स्ट्रॉंमोनिअम हैं। इसे जिमसन घास, थार्म एप्पल के नाम से भी जाना जाता हैं। पौधों के पत्तों, वेरी तथा बीज मे विषाक्त रासायनों की काफी मात्रा पायी जाती हैं। यह विषाक्तता हायोससाइयाइन, एद्रोपिन तथा हायोससाइन तत्त्व के कारण होता हैं। घास खाने वाले पशु मुख्यता गाय, भैंस, बकरी आदि काफी हद तक प्रतिरोधक होते हैं। लेकिन कुत्ता, बिल्ली तथा सुअर अति सवेंदनशील होते हैं। धतूरा का पशु के शरीर में विषाक्तता होने पर पशु का मुँह एंव मसकस मेम्व्रेन सूख जाती हैं। पशु के शरीर में ऐंठन, पेट मे दर्द, आखों से कम दिखायी देना और सॉंस रूक जाने से मृत्यु भी हो जाती हैं।

उपचार एंव निदानः–

1. जोखिम रोकने के लिए पशु को धतूरा उगने वाले स्थान पर जाने से रोकना चाहिए।

2. पशु के शरीर में जहर के लक्षण प्रतीत होने पर पशुचिकित्सक से तुरंत सम्पर्क करें।
3. गैस्ट्रिक लैबेज देना चाहिए।
4. फाइसोसिटिगमाइन या निलोकारपाइन की उचित खुराक देनी चाहिए।

(3) लेथाइरसः– लेथाइरस को सामान्यता खेसारी, खेसारी दाल आदि नामों से जाना जाता हैं। खेसारी का पूरा पौधा विषाक्त होता हैं। इसके बीज में सबसे ज्यादा विषाक्तता पाई जाती हैं। लेपाइरस में बी–अमीनोंप्रोपियो नाइट्राइल, बी.एन. आक्जाइल, एल अल्फा वीटा डाइ अमीनों प्रोपियोनिक एसिड नामक विषाक्त तत्व पाया जाता हैं, जिसका पशुओं के स्वास्थ्य पर बुरा प्रभाव पड़ता हैं। खेसारी से सभी प्रकार के पशु अति सवेंदनशील होते हैं।

पशु के शरीर में खेसारी की विषाक्ता होने पर, पैरो मे लंगड़ापन एंव दर्द होना, पशु की पिछली टाँगों में पैरा लिसिस का होना आदि हैं।

उपचार एंव निदानः–

1. विषाक्तता उत्पन्न करने वाले स्त्रोत को निकाल देना चाहिए।
2. पशुचिकित्सक से परामर्श करें।
3. गैस्ट्रिक लैबेज एंव एक्टीवेच्ड चारकोल पशु को खिलाना चाहिए।

(4) लैनटाना कैमराः– इसको रैमुनिया, चतुरंग, कनेर, थानी–डडिया, जंगली घास, गुच्छा बेरी आदि नामों से जाना जाता हैं। इस पौधे की पत्तियां तथा हरे बेरी में विषाक्ता पाई जाती हैं। लैनटानाडियंन्स नामक जहर का तत्व इस पौधे के रासायनिक संघटक में होता हैं, जो सभी प्रकार के जानवरों विशेषकर गाय, भैंस, भेड़ और बकरी के लिए नुकसानदायक होता हैं। विषाक्ता के कारण रयूमिनल स्टेसिस, कब्ज, पलकों पर सूजन और वारीकी त्वचा वाले पशुओं में फोटोसिन्सटाइजेसन हो जाता हैं। पशु के लीवर की लम्बाई भी बढ़ जाती हैं।

उपचार एंव निदानः–

1. पशुओं को चारागाह में चराते समय सावधानी बरतें।
2. जानवरों को प्रत्यक्ष रूप से सूर्य के प्रकाश से बचायें।
3. विषाक्ता के अवशोषण को रोकने के लिए सक्रिय चारकोल का घोल पिलायें।
4. पशुओं को इन्टीवायोंटिक देना चाहिए।

(5) नाइट्रेट एंव नाइट्राइड की विषाक्ताः– पशुओं में इसकी विषाक्ता, नाइट्रेट युक्त पौधे, (सलजम, अलसी, जई, ज्वार, मक्का आदि) उर्वरक एंव खाद्य पद्धार्थ तथा नाइट्रेट युक्त पानी पीने से होता है। जुगाली करने वाले पशुओं (गाय, भैंस, भेड़ और बकरी) सामान्यता नाइट्रेट की विषाक्ता से प्रभावित होते हैं। नाइट्रेट एंव नाइट्राइट की विषाक्ता होने पर पशुओं में श्वसन प्रक्रिया का तेज होना, पेट में दर्द, झाग निकालना, पशु का कमजोर होना, मसकल झिल्ली का नीला रंग का होना आदि हैं। कभी कभी पशु की पल्स में बढ़ोत्तरी काफी तेज एंव गिरावट होती है, जिससे पशु की मृत्यु भी हो जाती हैं।

उपचार एंव निदानः–

1. जिन चारो में नाइट्रेट एंव नाइट्राइट की विषाक्ता होने की सम्भावना हो उसे पशु को नही खिलाना चाहिए।
2. चारे की विषाक्ता कम करने के लिए उसे दूसरे हरे चारे के साथ मिश्रित करके देना चाहिए।
3. पशु में लक्षण प्रतीत होने पर तुरन्त पशु चिक्त्सिक से सम्पर्क करें।
4. तीव्र विषाक्ता होने पर मेथाइल ब्लू का अन्तः शिरा इंजेक्शन देना चाहिए।

(6) अरंडीः– अरंडी के बीजों में सबसे ज्यादा विषाक्ता पाई जाती हैं। इसमें राइसिन नामक तत्व विषाक्ता के लिए पशुओं में उत्तरदायी होता है। अरंडी की विषाक्ता से सभी प्रकार के पशु प्रभावित होते हैं। पशुओं में इसकी विषाक्ता के लक्षण पेट में दर्द होना, खून के साथ दस्त होना, शरीर में पानी की कमी, मांसपेशियों में ऐठन आदि का होना हैं।

उपचार एंव निदानः–

1. जिन पशुओं में विषाक्ता के लक्षण प्रतीत हो, उन्हें अरंडी पूरी तरह से नही खिलाना चाहिए।
2. पशु चिक्त्सिक से तुरन्त सम्पर्क करें।
3. सक्रिय चारकोल घोल पिलाये।
4. सोडियम वाइकाब्रोनेट पशु को दे, जिससे राइसिन मूत्र उत्सर्जन के माध्यम से बाहर निकल जाये।
5. नजदीकी पशु चिक्त्सिालय में पशु को ले जाकर इन्टी–राइसिन सीरप देना चाहिए।

(7) आक्जेलिस विषाक्ताः– इसका वनस्पतिक नाम आक्जेलिस सापा हैं। सामान्यतः इसे तिनपतिया के नाम से भी जाना जाता है। इस पौधें में आक्जेलिक एसिड नामक विषाक्त तत्व पाया जाता हैं। इससे सभी प्रकार के पशु प्रभावित होते हैं। आक्जेलिस की विषाक्ता होने पर पशु का शिर झुका रहता हैं,

भूख में कमी और पशु झुंड से अलग हो जाता हैं। अनियमित श्वसन से पशु कोमा में होने जैसा प्रतीत होता हैं।

उपचार एंव निदानः—

1. आक्जेलेट युक्त चारा पशु को खिलाना बंद कर देना चाहिए।
2. कैल्शियम वोरोग्लूकोनेट प्रभावित पशु को देना चाहिए।
3. चारे को डाइकैल्शियम फास्टफेट या कैल्शियम फास्फेट के साथ खिलायें।

(8) साइनोजेनिक विषाक्तताः

कुछ वनस्पतियों में साइनाइड, साइनोजेनिक ग्लूकोसाइड के रूप में पाया जाता हैं। साइनाइड से`युक्त चारे की काफी मात्रा पशुओं को कम समय में खिलानें पर विषाक्तता से मृत्यु हो जाती हैं। ज्वार, आड़ू यूकेलिप्टस, बबूल आदि पौधों के पत्तों में साइनाइड की विषाक्तता पायी जाती हैं। अति संवेदनशील पशुओं गाय, भैंस, बकरी आदि पर इसका नाकारात्मक प्रभाव पड़ता हैं। साइनाइड की विषाक्तता से पशु को साँस लेने में तकलीफ और झाग गिरना इसके मुख्य लक्षण हैं।

उपचार एंव निदानः—

1. विषाक्ता के लक्षण प्रतीत होने पर तुरन्त पशु चिकित्सक से सम्पर्क करें।
2. पशुओं को 25–45 दिन तक तथा 50 सेमी0 से कम उचाई का ज्वार का चारा न खिलाये।
3. फास्फोरस तथा पोटेशियम की उचित मात्रा खेत में डालें।
4. जंगली पौधें या जिनमे साइनाइड की विषाक्तता पायी जाती हैं, उन्हें पशुओं को न खाने दे।

सांराशः— पशुओं से अगर हमें पर्याप्त उत्पादन लेना हैं तो हमें उनके खानपान पर सावधानी पूर्वक ध्यान देना चाहिए और अपने पशु की निगरानी करते रहना चाहिए। पशुओं का उत्तम स्वास्थ्य ही पर्याप्त उत्पादन लेने में मदद कर सकता हैं।

जब तक आपके पास राष्ट्र भाषा नहीं, आपका कोई राष्ट्र भी नहीं।

21 भैंसों में सफल कृत्रिम वीर्यरोपण के लिए महत्वपूर्ण सुझाव

[1]राज कुमार, [2]चंदन कुमार, [3]सुनीता मीणा, [4]तुषार कुमार मोहंति एवं [5]मुकेश भक्त

- शोध सहयोगी, भाकृअनुप - राष्ट्रीय डेरी अनुसंधान संस्थान, करनाल
- सहायक प्राध्यापक, माधव विश्वविद्यालय, आबु रोड, राजस्थान
- वैज्ञानिक, भाकृअनुप - राष्ट्रीय डेरी अनुसंधान संस्थान, करनाल
- प्रधान वैज्ञानिक, भाकृअनुप - राष्ट्रीय डेरी अनुसंधान संस्थान, करनाल
- वरिष्ठ वैज्ञानिक, भाकृअनुप - राष्ट्रीय डेरी अनुसंधान संस्थान, करनाल

पशुधन की उत्पादकता को बढ़ाने में सहायता प्रजनन एक महत्वपूर्ण साधन हैं एवं कृत्रिम वीर्यरोपण सहयता प्रजनन का एक अभिन्न अंग हैं। परंतु कृत्रिम गर्भाधान की सफलता अनेक कारकों पर निर्भर करती हैं जैसे कि उचित नर व मादा एवं वीर्य रोपण के लिए निपुण व्यक्ति का चुनाव, वीर्यरोपण के लिए सही समय का चुनाव, वीर्य की उर्वरता की जाँच व गर्भवती मादा का उचित रख–रखाव। इन कारकों की अपर्याप्त जानकारी से गर्भाधान दरों में कमी आ सकती हैं। असफल गर्भाधान कृषकों को भारी आर्थिक क्षति पहुँचती हैं। अतः निम्नलिखित जानकारी सहायता प्रजनन की सफलता व कृषकों की आमदनी को बढ़ा सकती हैं।

जानवरों में वीर्यरोपण सिर्फ मद्काल के दौरान ही करना चहिए। यही नहीं ये भी सुनिश्चित करना अनिवार्य है कि वीर्यरोपण में प्रयुक्त होने वाले वीर्य की गुणवत्ता की जाँच प्रयोगशाला में की गयी हो। सरल मानकों द्वारा वीर्य के गुणवत्ता की जाँच की जा सकती हैं। मद्काल के दौरान मादा विशेष लक्षण दर्शाती है जिससे उसके मद्काल में होने का पता चलता है।

भैसों में मद्काल के दौरान प्रकट होने वाले लक्षण

- मादा को भूख ना लगना।
- पशु का रंभाना।
- मादा का विचलित व अधीर होना।
- मादा का रूक रूक कर मूत्र विसर्जन करना।
- मादा के योनि में सूजन व गढ़े स्लॅम का स्त्राव।
- मादा का पूंछ ऐंठना।
- मादा का दूसरे पशुओं के साथ आलंबन।

मादा के मद्काल मे होने का पता टीज़र बैल से भी लगाया जा सकता है। टीज़र बैल को मादा के पास ले जाने पर वह विशेष लक्षण दर्शाता है। टीज़र बैल तथा मादा के व्यवहार के आधार पर मादा के मद्काल में होने का पता चल जाता है।

टीज़र बैल से मद्काल दर्शाती मादा की पहचान

- बैल का मादा के पुट्ठे पर ठुड्डी रखना।
- बैल का फ्लेहान प्रतिक्रिया दर्शाना।
- बैल का मादा के साथ आलंबन।

एक बार मादा की मद्काल में सही पहचान हो जाए तो, दूसरा महत्वपूर्ण कार्य वीर्यरोपण मे निपुर्ण व्यक्ति का चुनाव है। पर जो बात सबसे ज्यादा ध्यान देने योग्य है कि वीर्यरोपण के लिए उचित वीर्य का प्रयोग हो। प्रयोगशाला में हिमीकृत वीर्य का गुणनिर्धारण गुनगुने पानी 37 डिग्री सेल्सियस मे 45 से 60 सेकेंड तक पिघला कर सरल मानकों द्वारा किया जा सकता है। शुक्राणुओं की प्रगामी गतिशीतलता, जिव्यता तथा प्लाविका झिल्ली की अंखडता उसकी उर्वरता से सह–सबंधित है।

कृत्रिम वीर्यरोपण मे उपयुक्त होने वाले वीर्य की उर्वरता की जाँच

- वीर्य मे शुक्राणुओं की गतिशीलता लगभग 40 प्रतिशत या उससे अधिक होनी चाहिए।
- शुक्राणुओं की गतिशीलता प्रगामी होनी चाहिए।
- शुक्राणुओं की प्लाविका झिल्ली अखंडित होनी चाहिए।
- शुक्राणुओं में वीर्यरोपण के समय धारिता की दर कम होनी चाहिए।
- शुक्राणुओं में धारिता को प्राप्त करने की क्षमता की जाँच (भैसों के ताज़ा स्खलित वीर्य मे 6 घंटे तथा हिमीकृत वीर्य मे 4 घंटे)।

मादा जननांगो की जानकारी व वीर्यरोपण की सही जगह भी गर्भाधान दर को सुनिश्चित करती है। वीर्यरोपण मादा के गर्भाश्य मे ही होनी चाहिए।

हिमीकरण—हिमद्रवण प्रक्रिया शुक्राणुओं मे ऊनघातक क्षति पहुँचती है। अंडपित्त युक्त वीर्य विस्तारक मे ये क्षति ज्यादा होती हैं तथा जीवाणुओं और विषाणुओं से होने वाली बीमारियों का खतरा भी होता है जबकि सोयाबीन दूध युक्त वीर्य विस्तारक में यह क्षति तुलनात्मक कम होती है। सोयाबीन दूध, सोयाबीन से बनाया जाता है और पौधे से निर्मित होने के कारण ये जीवाणुओं और विषाणुओं से होने वाली बीमारियों के खतरे को भी टालता हैं।

22

स्टेम कोशिकायें और उनके उपयोग

विशाल शर्मा, सिकन्दर सैनी एवं ध्रुव मालाकार

पशु जैव प्रौद्योगिकी केन्द्र, भाकृअनुप - राष्ट्रीय डेरी अनुसंधान संस्थान, करनाल

स्टेम कोशिकाऐं वे अविभेदित कोशिकाऐं हैं जिनमें आत्मनवीकरण–क्षमता के साथ साथ विभेदित कोशिकाओं– को उत्पन्न करने की क्षमता भी होती हैं। स्टेम कोशिकाओं में प्रारंभिक जीवन और विकास के दौरान शरीर में कई अलग अलग प्रकार की कोशिकाओं में विकसित होने की उल्लेखनीय क्षमता होती है। मानव या पशु के कई ऊतकों में ये कोशिकाऐं जीवन भर आंतरिक मरम्मत प्रणाली के रूप में कार्य करती है। स्टेम कोशिका विभाजन के पश्चात प्रत्येक नई कोशिका में एक स्टेम कोशिका बने रहने की अथवा अन्य प्रकार की विशेष कोशिकाओं, जैसे की लाल रक्त कोषिका, मस्तिष्क कोशिका या पेशी कोशिका में विकसित होने की क्षमता होती है।

स्टेम कोशिकाओं के प्रकार

भ्रूणीय स्टेम कोशिका

भ्रूणीय स्टेम कोशिका, ब्लास्टसिस्ट चरण भ्रूण के आंतरिक कोशिका पिन्ड (ICM, Inner Cell Mass) से निकाली जाती हैं। ये कोशिकाऐं प्लूरीपोटेन्ट होती हैं, अर्थात ये तीन जनन परतों से उपजित कोशिकाओं को जन्म दे सकती हैं।

व्यस्क स्टेम कोशिका

व्यस्क स्टेम कोशिका वह अविभेदित कोशिका है जो विभेदित ऊतकों में पाई जाती है। व्यस्क स्टेम कोशिका स्वनवीकरण करने में सक्षम हैं और एक जीव के जीवनकाल में मरम्मत प्रणाली के रूप में कार्य करती हैं। व्यस्क स्टेम कोशिका के स्त्रोत मुख्यतया अस्थि मज्जा, ऊतक वसा, रक्त, स्वच्छमण्डल, आंख का दृष्टिपटल, दांत, यकृत और त्वचा हैं। ये कोशिकाऐं प्लूरिपोटेंट या मल्टिपोटेंट प्रकार की हो सकती हैं।

प्रेरित प्लूरिपोटेंट स्टेम कोशिका (IPSA)

प्रेरित प्लूरिपोटेंट स्टेम कोशिकाऐं वे वयस्क कोशिकाऐं हैं जिन्हे आनुवंशिक रूप से कुछ जीन और कारकों को व्यक्त करके भ्रूण स्टेम कोशिका जैसी कोशिका बनने के लिए प्रेरित किया जाता हैं। हालांकि ये कोशिकाऐं प्लूरिपोटेंट कोशिकाओं के महत्वपूर्ण मानदंडों को पूरा करती हैं परंतु अब तक यह ज्ञात नहीं है कि ये कोशिकाऐं चिकित्सकीय मायनों में भ्रूण स्टेम कोशिकाओं से कितनी अलग हैं। प्रेरित प्लूरिपोटेंट स्टेम कोशिका सर्वप्रथम मूषक मे 2006 में सूचित की गई थीं और तत्पश्चात् मानव में 2007 में सूचित की गयीं।

भ्रूण और व्यस्क स्टेम कोशिकाओं के अनुप्रयोग

1. मानव विकास में अन्तर्दृष्टि

मानव विकास के बारे में सबसे अधिक ज्ञान मॉडल जीवों, जैसे कि फल मक्खियों, कीड़े, मेंढ़क और चूहों पर किये गये अध्ययन के माध्यम से प्राप्त हुआ है। मानव भ्रूण स्टेम कोशिका लाइन, जिन्हें कई किस्म की कोशिकाओं और ऊतकों में विभेदित अथवा बदला जा सकता है, भ्रूण विकास की प्रारम्भिक घटनाओं एवं मानव शरीर विकास को समझने का एक अद्वितीय अवसर प्रदान करती हैं।

2. रोगों के विकास का अध्ययन

मानव रोगों का अध्ययन करने के लिए प्रयोग होने वाले प्रायोगिक पशु, रोगों की बिल्कुल वैसी नकल नहीं कर सकते जैसे कि मनुष्यों में पाये जातें हैं। मानव प्लूरिपोटेंट स्टेम कोशिकाऐं, विशेष रूप से रोगी या रोग विशिष्ट कोशिकाऐं, प्रयोगशाला में मानव रोगों की और अधिक सटीक नकल करने की संभावना प्रदान करती हैं। सामान्य कोशिका विकास की बेहतर समझ हमें रोगों के कारणों को समझने और त्रुटियाँ को सही करने का अवसर देगी।

3. दवाओं की जांच, खोज और विकास के लिए एक मॉडल

कैंसर स्टेम कोशिकाओं की खोज ने तेजी से दवाओं की खोज के क्षेत्र में ध्यान एकत्रित किया है। सामान्य या रोगग्रस्त ऊतकों से उत्पन्न प्रेरित प्लूरिपोटेंट स्टेम कोशिकाओं के उत्पादन में की

गई प्रगति ने दवाओं की जांच करने के लिए एक मंच का कार्य किया है। जिससे पार्किंसंस रोग और मधुमेह जैसी बीमारियों के विरूद्ध कोशिका आधारित चिकित्सा के विकास में सहायता मिल रही हैं। सुरक्षा का आंकलन करने के लिए नई दवाओं का पशु अथवा मानव पर परीक्षण से पूर्व स्टेम कोशिकाओं पर परीक्षण किया जा सकता है।

4. पारजीवी पशु उत्पादन

एक पारजीवी पशु वह पशु है जिसके जीनोम में एक बहिर्जात जीन (किसी दूसरे जीव का जीन) परिचालन द्वारा डाला गया हो। पारजीवी पषु मानव प्रोटीन जैसे कि इंसुलिन, लैक्टोफेरिन, अल्फा–1 एंटीट्रिप्सिन आदि के उत्पादन का अवसर प्रदान करते हैं। पारजीवी पषु उत्पादन के लिए होमोलोगस पुनर्संयोजन (Homologous Recombination) द्वारा स्टेम कोशिकाओं को वांछित डी.एन.ए. से ट्रांस्फेक्ट किया जाता है। ट्रांसफेक्ट हो चुकी कोशिकाओं द्वारा दैहिक कोशिका केन्द्रक हस्तांतरण (SCNT) तकनीक की सहायता से पारजीवी पशुओं का उत्पादन किया जाता है।

5. चिकित्सीय क्लोनिंग

इस तकनीक का उद्देश्य उन प्लूरिपोटेंट स्टेम कोशिकाओं का निर्माण है, जिनमें रोगी का केन्द्रक जिनोम हस्तांतरित किया गया हो। इन कोशिकाओं को प्रयोगशाला में विभेदित किया जाता है और फिर पुनः मरीज में प्रत्यारोपित कर दिया जाता है। दैहिक कोशिका केन्द्रक हस्तांतरण तकनीक से एक वयस्क दाता कोशिका के केन्द्रक को एक केन्द्रक रहित डिम्बाणुजनकोशिका में हस्तांतरित करके भ्रूण उत्पन्न किया जाता है। इस विधि से स्टेम कोशिका के गुणों से युक्त ऑटोलॉगस प्लूरिपोटेंट स्टेम कोशिका उत्पन्न की जाती हैं। पशुओं में इस तकनीक से उत्पन्न कोशिकाओं के प्रत्यारोपण का उपयोग सफलतापूर्वक पार्किन्सन रोगी चूहों और मानवों में किया जा सकता है। वर्तमान में इन बीमारियों की चिकित्सा मुख्यतया ऊतक प्रत्यारोपण की उपलब्धता या प्रतिरक्षा संगतता पर ही निर्भर है।

6. पुनरूत्पादक चिकित्सा

पुनरूत्पादक चिकित्सा शब्द का उपयोग प्रायः उन चिकित्सा उपचांरो और अनुसंधानों का वर्णन करने के लिए किया जाता है, जिनमें अंगों या ऊतकों का कार्य बहाल करने के लिए स्टेम कोशिकाओं (वयस्क या भ्रूण स्टेम कोशिका) का उपयोग होता है। इस चिकित्सा में प्रयोगशाला से प्राप्त स्टेम कोशिकाओं अथवा उनसे जनित विशिष्ट कोशिकाओं को क्षतिग्रस्त अंग में प्रत्यारोपित किया जाता है, जिसके फलस्वरूप स्टेम कोशिकाओं के विभाजन से उस अंग के ऊतकों की मरम्मत की जाती है। सैद्धांतिक रूप में, कोई भी ऊतक अपह्रास रोग जैसे कि पार्किंसंस रोग, रीढ़ की हड्डी में चोट, हृदय रोग, टाइप 1 मधुमेह, पेशी अपविकास, दृष्टिपटल अपह्रास और यकृत की बीमारियाँ, स्टेम कोशिका उपचार के लिए संभावित उपाय हो सकते हैं।

पुनरूत्पादक चिकित्सा में स्टेम कोशिकाओं के वर्तमान नैदानिक उपयोग

रोगियों में स्थानीय या प्रणालीगत निषेचन के माध्यम से स्वजातीय (ऑटोलॉगस) या अल्लोजीनिक कोशिकाओं का प्रत्यारोपण, मध्योतक स्टेम कोशिका के मुख्य नैदानिक उपयोगों में शामिल है। स्टेम कोशिका प्रत्यारोपण हृदय रोग, फेफड़ों की फाइब्रोसिस, रीढ़ की हड्डी में चोट या हड्डी और उपास्थि की मरम्मत जैसे व्यापक वर्णक्रम संकेतों के लिए इस्तेमाल किया जा सकता है। इन विट्रो संवर्धित मध्योतक स्टेम कोशिका को जब प्रथम बार चिकित्सीय परीक्षण में उपयोग किया गया, तो अनेक असाध्य रोगों के उपचार के लिए मध्योतक स्टेम कोशिका के उपयोग में एक क्रांति देखी गई और मध्योतक स्टेम कोशिका चिकित्सा की व्यवहार्यता और प्रभावोत्पादकता की जांच करने के लिए अनेक क्लिनिकल परीक्षण किये गए। सार्वजनिक क्लिनिकल परीक्षण डाटाबेस यह दर्शाता है कि बहुत व्यापक क्षेत्र के मध्योतक स्टेम कोशिका चिकित्सीय अनुप्रयोगों का उपयोग लगभग 206 नैदनिक परीक्षणों में किया गया है।

(क) रक्त स्टेम कोशिका प्रत्यारोपण

अस्थिमज्जा रक्त कैंसर (ल्यूकेमिया, लिम्फोमा) और अन्य अनुवांशिक रक्त विकारों (जैसे सिकल सेल एनीमिया) के इलाज के लिए रूधिरोत्पादक स्टेम कोशिकाओं (हीमेटॉपॉएटीक स्टेम कोशिकाऐं) का दशकों से प्रयोग किया जा रहा है। स्टेम कोशिकाओं का एक अन्य स्त्रोत गर्भ–नाल रक्त है जो आजकल उपचार में प्रयोग किया जा रहा है। पिछले 40 वर्षो से डॉक्टर अस्थिमज्जा प्रत्यारोपण के द्वारा रक्त स्टेम कोशिकाऐं स्थानांतरित कर रहे हैं।

(ख) जलन चिकित्सा

बाहय त्वचा कोशिकाओं को प्रयोगशाला मे संवर्धित करके तृतीय–डिग्री जलन के रोगियों में स्वजातीय निरोपण के लिए

उपयोग किया गया है। कोशिका आधारित ऊतक पुनःनिर्माण की सफलता में स्टेम कोशिका जीव विज्ञान के प्रभाव का सब से अच्छा उदाहरण, त्वचा निरोपण प्रदान करता है।

(ग) स्वच्छमण्डल (कॉर्निया) पुनरूत्पादन

अंगीय स्टेम कोशिकाओं को सफलतापूर्वक कॉर्निया के रासायनिक विनाश से पीड़ित रोगियों में दृष्टि पुनस्थापित करने के लिए इस्तेमाल किया गया है। नैदानिक परीक्षणों में नेत्र विकारों, जैसे कि स्टारगार्ट मक्यूलर डिस्ट्रोफी (एस.एम.डी.) और उम्र–संबंधी धब्बेदार क्षय विकार, के रोगियों का इलाज करने के लिए मानव भ्रूणीय स्टेम कोशिका–व्युत्पन्न दृष्टि पटल कोशिकाओं का प्रयोग किया जा रहा है। 2012 में वैज्ञानिकों के एक समूह ने भ्रूण स्टेम कोशिकाओं को पूर्ण रूप से अंधे रोगियों में आंशिक दृष्टि पुनर्स्थापित करने के लिए सफलतापूर्वक प्रयोग किया।

(घ) प्रतिरक्षा–संवेदक रोगोपचार

मध्योतक स्टेम कोशिका का अल्प–प्रतिरक्षाकारी स्वभाव दर्शाता है कि एलोजेनिक चिकित्सा के सम्बंध में, या कहें कि एक बेजोड़ दाता से व्युत्पन्न कोशिकाओं के एक प्राप्तकर्ता में वितरण के लिए मध्ययोतक स्टेम कोशिकाओं के व्यापक निहितार्थ हैं। परपोषी प्रतिरक्षा अस्वीकृति या GVHD (कलम विरोध परपोषी रोग) के कुछ प्रमाणों के साथ एलोजेनिक दाता–बेमेल कोशिकाओं के नैदानिक प्रयोगों का वर्णन कई रिपोर्टें करती हैं। उदाहरण के लिए, ऑस्टियोजेनेसिस इम्पर्फेक्टा से ग्रस्त बच्चों में एलोजेनिक अस्थिमज्जा प्रत्यारोपण से दाता व्युत्पन्न मध्योतक स्टेम कोशिका निरोपण व नई हड्डी में वृद्धि हुई है। 2006 में, सांद्राभ–दुर्दम्य III-IV श्रेणी GVHD ग्रस्त आठ मरीजों, जिनमें से एक व्यापक स्थायी GVHD से पीडित था, में मध्योतक स्टेम कोशिका प्रतिरोपण के फलस्वरूप, आठ मरीजों में से छह में तीव्र GVHD पूरी तरह से गायब हो गया।

(ड) स्नायु क्षय रोग

नैदानिक परीक्षणों में पार्किंसन और हनटिन्गटन रोगियों में निरस्त भ्रूण के मस्तिष्क ऊतकों को निरोपित किया जा चुका है। जब कि कुछ सफलताओं का उल्लेख किया गया है परन्तु परिणाम एक समान नहीं हैं, इसलिऐ आगे के नैदानिक परीक्षणों में अधिक परिष्कृत रोगी चयन की आवश्यकता है ताकि हम यह चिकित्सा से पहले ही जान लें कि रोगी को लाभ होगा कि नहीं।

(च) अस्थि विकार

2011 में, ऊरू सिर के अस्थि परिगलन और घुटने के अस्थि संधि शोथ से पीड़ित रोगियों में स्वाजातीय वसा व्युत्पन्न स्टेम कोशिकाओं, हायलुरोनिक एसिड, प्लेटलेट संपन्न प्लाज्मा और कैल्शियम क्लोराइड के एक संयोजन के (त्वचासेतक इंजेक्शन) द्वारा उपचार किया गया। 3 महीने बाद, सभी रोगियों में दर्द में कमी और चलने में सुधार था। केवल इतना ही नहीं, अस्थि दोषों के भरने में, अस्थि की मोटाई और मेनिस्कस की उपास्थि में भी उल्लेखनीय वृद्धि देखी गयी।

(छ) यकृत रोग

वर्ष 2009 में, चिकित्सीय परीक्षण में अंतिम चरण यकृत रोग के 8 रोगियों (चार यकृत–शोध बी, एक यकृत–शोध सी, एक मादक, और दो अज्ञातोत्पन्न) पर मध्योतक स्टेम कोशिका के स्वजातीय इंजेक्शन के माध्यम से उपचार किया गया। सभी रोगियों के यकृत में आश्चर्यजनक सुधार था। यकृत की व्याधि के उपचार के लिए उपयोग, सुरक्षा, और प्रभावकारिता की दृष्टि से मध्योतक स्टेम कोशिका एक अच्छा विकल्प हैं।

(ज) हृदय रोग

अस्थि मज्जा से व्युत्पन्न मध्योतक स्टेम कोशिकाओं को यदि स्थानीय रूप से वितरित किया जाये तो वे नये सिरे से हृदय पेशी उत्पन्न कर सकती हैं। यह दर्शाता है कि स्टेम कोशिका चिकित्सा को चक्रीय धमनी के रोगो के इलाज के लिए भी प्रयोग किया जा सकता है। इस दृष्टिकोण का व्यावहारिक उपयोग, अस्थिमज्जा से व्युत्पन्न मध्योतक स्टेम कोशिकाओं के वितरण द्वारा हृदय पेषी रोधगलन से पीड़ित रोगियों में प्रदर्शित किया गया है। फैली हुई हृदय पेशी विकृति के एक चूहा प्रतिरूप (मॉडल) में मध्योतक स्टेम कोशिका प्रत्यारोपण के परिणाम स्वरूप हृदय पेशी में कोशिका घनत्व में वृद्धि और कोलेजन मात्रा में कमी देखी गयी।

(झ) कुत्ते के इलाज में

कुत्तों में मध्योतक स्टेम कोशिका के इंजेक्शन के द्वारा क्षतिग्रस्त ऊतकों, गले की रस्सी से बने गहरे घाव, आदि कम अवधि में ही ठीक हो जाते है।

(त्र) गौ पशु थनैला उपचार

गौ पशु थनैला रोग में पशुओं के थन ऊतक इस सीमा तक क्षतिग्रस्त हो जाते हैं कि पशु में दुग्ध उत्पादन रूक जाता हैं। स्टेम कोशिकाओं के उपयोग द्वारा स्तन ग्रंथि उपकला

कोशिकाओं को बहुत निकट भविष्य में स्तन की सूजन के इलाज के लिए आशा की एक किरण देता है, जो सफलता पूर्वक वैज्ञानिकों द्वारा उत्पन्न किया गया है।

(ट) किडनी दोष

2012 में, मानव मध्योतक स्टेम कोशिकाओं को प्रतिरक्षा की कमी वाले एन.ओ.डी.–एस.ओ.डी.–एस.सी.आई.डी चूहों में सिस्प्लातिन प्रेरित तीव्र वृक्क असफलता के बाद प्रत्यारोपित करने के परिणामस्वरूप वृक्क कोशिका में अपोप्टोसिस की कमी हुई और बहुप्रजनन में वृद्धि देखी गई। मध्योतक स्टेम कोशिका ने ट्यूबलर उपकला और पेरी–ट्यूबलर वाहिकाओं में लंबे समय तक जीवित रहने की अखंडता भी संरक्षित रखी।

(ठ) मेरू रज्जु क्षति

2011 में, रीढ़ की हड्डी की क्षति से पीड़ित रोगियों में स्वजातीय वसाव्युत्पन्न स्टेम कोशिकाओं के अंतःशिराभ आधान के द्वारा इलाज किया गया। 12 सप्ताह के भीतर ही रोगियों के प्रेरक पेशी कार्य में सुधार हो गया था।

(ड) मधुमेह

2010 में, मधुमेह के रोगियों में वसाव्युत्पन्न स्टेम कोशिकाओं के एलोजेनिक इंजेक्शन से प्राप्त परिणामों के फलस्वरूप रोगियों के, स्वास्थ्य में सुधार, वजन में बढ़ौतरी और इंसुलिन की आवश्यकता में क्रमिक कमी देखी गई।

7. प्रजनन चिकित्सा में स्टेम कोशिकाऐं

शुक्र जनक स्टेम कोशिका (SSCs) नर स्तनधारियों में पाई जाने वाली वयस्क स्टेम कोशिकाओं का एक प्रकार है। यह कोशिकाऐं वृषण के आवास में स्वयं के नवीकरण और विभेदन करने में सक्षम हैं। एक सामान्य प्रसव के बाद शरीर में केवल इन्हीं वयस्क स्टेम कोशिकाओं में आजीवन आत्मनवीकरण करने की क्षमता होती है और यह संतान में आनुवंशिक सूचना भी स्थानांतरित करती हैं। इन कोशिकाओं का तीन तरीकों से उपयोग किया जा सकता है–

(क) वृषण पर–निरोपण

इस तकनीक का प्राथमिक उद्देश्य आनुवंशिक रूप से मूल्यवान अव्यस्क नर पशु की प्रजनन क्षमता की रक्षा करना है। उदाहरण के लिए, लुप्त प्रायप्रजातियों या संकट ग्रस्त प्रजातियों के बंदी प्रबंधन में, कुछ पशु आनुवंशिक रूप से उच्च मूल्य के होते हैं। यदि उनमें से कोई नवजात या किशोर नर पशु मर भी जाता है, तब भी प्रसव काल से शरीर में उपस्थित शुक्र जनक स्टेम कोशिका से उनके शुक्राणु विकसित करने के लिए वृषण पर–निरोपण एक साधन प्रदान करता है। इस प्रक्रिया में, दाता वृषण के छोटे टुकड़े प्रतिरक्षा न्यूनत चूहों में शल्य चिकित्सा द्वारा ग्राफ्ट कर दिये जाते हैं। प्रतिरक्षा प्रणाली के अभाव में, प्राप्तकर्ता चूहों का शरीर विदेशी वृषण ऊतक का पोषण करता है जिसके फलःस्वरूप शुक्राणु जनन को बढ़ावा मिलता है।

(ख) शुक्र जनक स्टेम कोशिका प्रत्यारोपण

इस तकनीक का प्राथमिक उद्देश्य पुरूष जनन कोशिका वंशावली की रक्षा और परिवर्तन करना है। यदि शुक्र जनक स्टेम कोशिका के गुणसूत्रों मे बहिर्जात डी.एन.ए. एकीकृत कर दिया जाता है, जो इन कोशिकाओं से विभेदित शुक्राणुओं में भी बाहरी जीन होगा; इसलिए हस्तांतरित विदेशी जीन के वंषदर चलने की संभावनाऐं बढ़ जाती हैं। यह तकनीक भ्रूण जीनोम में बहिर्जात जीन ले जाने के लिए एक उत्कृष्ट विधि प्रदान करती है और इस प्रकार पारजीवी पशुओं के उत्पादन में एक महत्वपूर्ण योगदान देती है।

शुक्र जनक स्टेम कोशिका प्रत्यारोपण तकनीक के पशुधन सम्बंधी अनेक संभावित लाभ हैं। जिसमें लुप्त प्राय प्रजातियों का संरक्षण, कम मूल्यवान प्राप्तकर्ता पशु में प्रत्यारोपण के लिए एक निरंतर आपूर्ति सुनिश्चित करना, कठोर वातावरण में संकरण, पारजीवी पशुओं का उत्पादन, रोगी या मृत पशु का प्रजनन में उपयोग एवं आनुवंशिक रूप से हीन नर के आनुवंशिक रूप से श्रेष्ठ नर में रूपांतरण जेसे उपयोग शामिल है।

(ग) प्रजनन क्षमता को बहाल करने का एक स्त्रोत : शुक्र जनक स्टेम कोशिका

शुक्र जनक स्टेम कोशिका की कमी नर बांझपन का एक महत्वपूर्ण कारण है। रासायनिक चिकित्सा और विकिरण चिकित्सा के बाद अथवा आनुवंशिक बीमारी के कारण शरीर में स्टेम कोशिकाओं की कमी हो सकती है। क्योंकि बच्चों में शुक्राणु जमा करने की संभावना नहीं होती, शुक्र जनक स्टेम कोशिका का संरक्षण और प्रत्यारोपण प्रजनन के विकारों के इलाज के लिए एक महत्वपूर्ण रणनीति बन सकता है। शुक्र जनक स्टेम कोशिका की बैंकिंग और प्रत्यारोपण अवयस्क रोगियों की प्रजनन क्षमता बनाए रखने के लिए एक आशाजनक उपाय है।

ग्रंथसूची

ताकाहाषी के, यामानाका एस. ''मूषक भ्रूण और वयस्क तंतुप्रसू कोशिका संवर्धन का परिभाषित कारकों द्वारा प्लूरिपोटेंट स्टेम में प्रेरण''. सेल 126 (2006): 663–676.

ताकाहाशी, काजुतोशी, तथा अन्य. ''परिभाषित कारकों द्वारा वयस्क मानव तंतुप्रसू कोशिका से स्टेम कोशिका का प्रेरण''. सेल 131.5 (2007):861–872.

कोली एस. अहमद एस, लाको एम, फिगोरेडी एफ. ''एकपक्षीय अंगीय स्टेम कोशिका की कमी के उपचार के लिए कोर्निया उपकला स्टेम कोशिका थेरेपी का सफल नैदानिक कार्यान्वयन'', स्टेम सेल 28 (3) (2010) 597–610.

पियर्सन, आर. ए. तथा अन्य ''प्रकाशग्राहीओं के प्रत्यारोपण के बाद दृष्टि की बहाली'', नेचर 845.7396 (2012) : 99–10.

रिंग्डेन, ओले तथा अन्य. ''चिकित्सा प्रतिरोधी कलम विरोध परपोषी रोग के उपचार के लिए मध्योतक स्टेम कोशिका'' ट्रांसप्लांटेशन 81.10 (2006) : 1390–1397

पाक, जाएवू, ''स्वजातीय वसा ऊतक व्यूत्पन्न स्टेम कोशिकाओं के द्वारा कूल्हा अस्थि परिगलन में मानव हड्डियों का और घूटने के पुराने ऑस्टियोआर्थराइटिस में मानव उपस्थिति का पुनर्जनन: एक मामलों की श्रृंखला''. जे मेड केस रेप 5.1 (2011): 296ण

ट्रउंसन, एलन तथा अन्य. ''स्टेम सेल उपचार के लिए नैदानिक परीक्षण'', बीएमसी मेडिसिन 9.1 (2011) : 52.

खाराज़िहा, पेड्रम तथा अन्य ''स्वजातीय मध्योतक स्टेम कोशिका इंजेक्शन के बाद यकृत शोथ के रोगियों में यकृत कार्यप्रणाली में सुधार : एक प्रथम–द्वितीय चरण चिकित्सीय परीक्षण''. यूरोपीय जर्नल औफ गैस्ट्रोएंटरोलॉजी ऐंड हेप्टोलोजी 21:10 (2009) : 1199–1205.

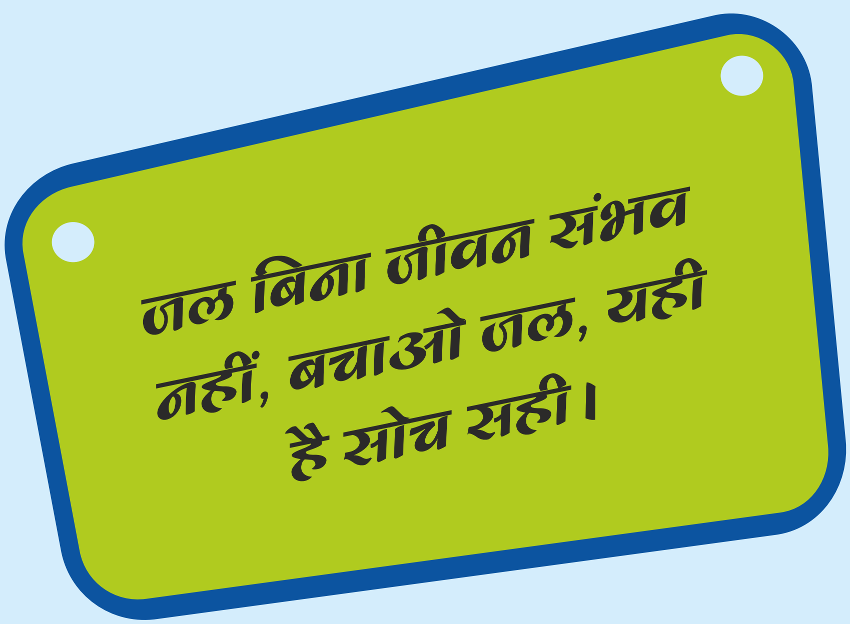

23 जलवायु परिवर्तन और तापमान वृद्धि का डेयरी उत्पादन एवं कृषि पर प्रभाव

महेश कुमार, अविनाश गोयल, नितिन कुमार गर्ग एवं जितेन्द्र कुमार, गैतम कोल

जलवायु परिवर्तन और तापमान विभिन्न प्रजातियों, पारिस्थितिक तन्त्र, डेयरी उत्पादन और कृषि के लिए प्रमुख समस्याओं में से एक है। जलवायु में परिवर्तन की दर पिछले 100 वर्षों में, अब तक किसी भी अवधि की तुलना में बहुत तेजी से बढ़ी है। आईपीसीसी के पूर्वानुमान के अनुसार अगले 100 वर्षों में पृथ्वी के औसतन तापमान में 1.8 डिग्री सेल्सियस से 4.0 डिग्री सेल्सियस तक की बृद्धि होने की सम्भावना है। मौसम में होने वाले इन बदलावों तथा तापमान वृद्धि कृषि एवं पशुओं को प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष रूप से प्रभावित करती है। वैज्ञानिक शोध के अनुसार 42 डिग्री सेल्सियस से उच्च तापमान जीवो के लिए उष्मीय तनाव का कारण बनता है।

जलवायु परिवर्तन का डेयरी उत्पादन पर प्रभाव

भारत दुनिया में सबसे बड़ा पशुपालन वाला देश है। कृषि के साथ पषुपालन भारतीय किसानो की आर्थिक मजबूती का एक प्रमुख स्तोत्र है। एक सीमा तक तापमान में वृद्धि होने पर डेयरी पशुओ में शरीर के तापमान को सामान्य बनाये रखने की क्षमता होती है। जब तापमान में वृद्धि एक सीमा से अधिक हो जाती है। तो पशुओं को उष्मीय तनाव का सामना करना पड़ता है। यह उष्मीय तनाव वातावरण मे तापमान, आर्द्रता, सौर विकिरण और हवा के दवाब बढ़ने के कारण होता है। उष्मीय तनाव डेयरी पशुओं के स्वास्थ्य शरीरिकी उपापचय और प्रतिरक्षा प्रणाली को प्रभावित करता है।

शरीरिक प्रभाव

पर्यावरण में तापमान वृद्धि का पशुओं की भूख पर सीधा नकारात्मक प्रभाव पड़ता है। दुधारू गायों तथा बकरियों की खुराक मे तापमान वृद्धि होने पर 20–25% की गिरावट देखी गई है। उष्मीय तनाव में पशुओं में श्वसन दर तथा अधिक पसीने की वजह से तरल पदार्थो की कमी और निर्जलीकरण की समस्या उत्पन्न हो जाती है। श्वसन दर बढ़ने के कारण फेफड़ो में कार्बनडाइआक्साइड की मात्रा बढ़ जाती है। अतः रक्त की क्षारीयता को कम करने के लिए शरीर को अधिक कार्बोनिक अम्ल की आवश्यकता पड़ने लगती है।

कोशिकीय प्रभाव

उच्च तापमान कोशिका की झिल्ली और तरलता दोनों को प्रभावित करती है जिसके कारण कोशिका को क्षति पहुँचती है। उष्मीय तनाव कोशिकाओं में विभिन्न प्रकार के अम्लो के संचय को बढ़ा देते है। उष्मीय तनाव में कोशिका में कैल्शियम, सोडियम और पोटोशियम खनिजों का स्तर बढ़ने लगता है और काशिका झिल्ली ऊष्मा प्रेरित कोशिकीय क्षय का महत्वपूर्ण घटक है। प्रोटीन संश्लेषण तथा डीएनए और आरएनए बहुलीकरण भी उष्मीय तनाव में बाधित हो जाता है। उष्मीय तनाव समाप्त होने पर भी डीएनए संश्लेषण लम्बे समय तक बाधित रहता है। अधिक तापमान वृद्धि से प्रोटीन विकृत भी हो जाती है।

जैवरासायनिक प्रभाव

उच्च उष्मीय तनाव पादप कोशिका में विभिन्न प्रकार के सुपरआक्साइड, हाइड्रोजन पर आक्साइड और हाइड्राक्सिल मूलक को उत्पन्न करता है जिन्हे सक्रिय आक्सीजन प्रजाति कहते है। जो झिल्ली की कार्यक्षमता को कम करता है। अतः झिल्ली की अर्द्वपारगम्यता को प्रभावित करते है। एकल आक्सीजन प्रोटीन, असंतृप्त फैटी अम्लो और डीएनए का सीधे आक्सीकरण कर सकती है।

जलवायु परिवर्तन और अजैविक मौसमी कारकों का कृषि पर प्रभाव

पौधे स्वपोषी होने के कारण अपना भोजन स्वयं बना सकते है और सभी परपोषी जीव प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से अपने जीवन के लिए पौधों पर आश्रित रहते है। अचलायमान होने के कारण पौधों को अपने विकास चक्र के दौरान विभिन्न मौसमी कारको का

सामना करना पड़ता है। यह मौसमी कारक पौधों के भीतर उसके उपापचय और विकास की प्रक्रिया को प्रभावित करते है। जलवायु मे परिवर्तन और तापमान वृद्धि फसल उत्पादन को सीमित करते है और पादप शारीरिकी एवं जैव रसायनिक परिवर्तन का कारण बनते है। भारत में कृषि उत्पादन में गिरावट का मुख्य कारण प्रकाश संश्लेषण की दर में कमी, श्वसन दर में वृद्धि और विकसित बीजो में शर्करा के संचयन का अवरूद्ध होना है।

तापमान में अचानक वृद्धि सभी जीवों मे तनाव प्रतिक्रिया को उत्प्रेरित करती है जिससे जीन की अभिव्यक्ति में बदलाव आता है। उष्मीय तनाव में आमतौर पर अधिकांश जीनों की अभिव्यक्ति बन्द हो जाती है और एक विशेष जीन समूह, उष्मीय आघात जीन का स्तर बहुत तेजी से बढ़ जाता है। उच्च तापमान के सम्पर्क में आने पर यह अनुलेखन कारक सक्रिय हो जाते है जो किसी भी जीव के शरीर में जीवन भर संरक्षित रहते है। उष्मीय तनाव प्रतिक्रिया के कारण अनुलेखन कारक की श्रृखंला जीवों में अनुलेखन स्तर पर दूसरे अनुलेखन कारकों के सहयोग से नियंत्रित होती है।

पौधों पषुओं और फफूंदो मे उष्मीय आघात अनुलेखन कारक कोशिका को विभिन्न अजैविक तनावों से बचाव में केन्द्रिय भूमिका निभाते है। अतः जीवो में उष्मीय आघात अनुलेखन कारकों की अभिव्यक्ति को बढ़ाकर उसमें उष्मीय क्षमता को बढ़ाया जा सकता है।

उष्मीय आधात जीन उष्मीय आघात प्रोटीन का संश्लेषण करते है आघात सम्बंधी प्रोटीन की अभिव्यक्ति बढ़ते हुए तापमान में एन्जाइम के विकृतिकरण को बचाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। उष्मीय आघात प्रोटीन दो प्रकार से पौधों को उष्मीय तनाव से बचाती है। एक समूह जो आणविक संरक्षिकाओ की तरह कार्य करके प्रोटीन के विकृतिकरण को रोकता है और दूसरा समूह जिसमे यूबिक्यूटिन और कुछ प्रोटियेज होते है जो उसके लक्ष्य प्रोटीन को नष्ट करती है।

आणविक स्तर पर हाल ही में खोजे गये सूक्ष्म आरएनए जीन की अभिव्यक्ति को विनियमित करते है तथा इनका सम्बंध जीवों में विभिन्न तनाव प्रतिक्रियाओं में भी होता है। एम आर एन ए एक छोटे, एक सूत्री अकूटलेखन आरएनए है जो अत्याधिक संराक्षित एवं नवीन वर्ग के सदस्य है। यह जीन की अभिव्यक्ति को दो प्रकार से नियंत्रित करते है– एक संदेशवाहक आरएनए को अनुलेखन पष्चात क्षय करके और दूसरा अनुवादन की दर में गिरावट करके।

हाल ही में कई अध्ययनों द्वारा पौधो और पशुओं में नवीन और संरक्षित सूक्ष्म आरएनए की खोज की गई है। सूक्ष्म आरएनए उन जीनों की अभिव्यक्ति को भी विनयमित करते है जो जीवो के विकास और दूसरे शरीरिकी प्रक्रम को भी नियंत्रित करते है। अधिकांश सूक्ष्म आरएनए की अभिव्यक्ति में जो जीवो की वृद्धि एवं विकास में शामिल है, तनाव के दौरान मान्यकृत रूप से परिवर्तित होती है। अध्ययनों में यह देखा गया है कि जब सूक्ष्म आरएनए की अभिव्यक्ति कम होती है तो अनुलेखन पश्चात इसके लक्ष्य जीन अपनी अभिव्यक्ति को बढ़ाते है। किसी जीनोटाइप की उष्मीय क्षमता विभिन्न आनुंवशिक, कार्यिकी और जैव रासायनिक पैमानों पर निर्भर है जो उष्मीय तनाव में प्रतिरक्षा प्रणाली को विनयमित करती है। उष्मीय तनाव से बचाव के लिए जल्दी परिपक्व होने वाली फसलों और उष्मा सहनशील जीनोटाइप विकसित करने की आवश्यकता है।

उष्मा उत्तरदायी नवीन सूक्ष्म आरएनए का प्रयोग करके विभिन्न प्रकार के उष्मा उत्तरदायी लक्ष्य जीनों की अभिव्यक्ति को नियंत्रित करके जीनों में उष्मीय क्षमता को बढ़ाया जा सकता है। पषुओं तथा फसलों में जैवरासायनिक एवं आणविक स्तर पर उष्मीय आघात अनुलेखन कारकों उष्मीय आधात प्रोटीन के प्रयोग द्वारा जीन संरचनाओ में बदलाव करके उष्मीय आघात के प्रतिरक्षा प्रणाली में सहायता की जा सकती है।

24

पशुओं में बाह्य परजीवियों से बचाव एवं प्रबंधन

स्वाति शिवानी, ऋतिका गुप्ता, चन्द्र दत्त, दिग्विजय सिंह एवं आकाश मिश्रा

पशु पोषण प्रभाग, भाकृअनुप.-राष्ट्रीय डेयरी अनुसंधान, करनाल

पशु बहुत सारे बाह्यपरजीवी (परजीवी जो परपोषी के शरीर के उपरी सतह पर रहते हैं।) एवं हानिकारक कीट से प्रभावित होते हैं जिससे कि पशुओं की उत्पादन क्षमता कम हो जाती है। एवम् पशु कल्याण भी अत्यधिक प्रभावित होता है। पशुओं में बाह्य परजीवी का संक्रमण पशुपालन व्यवयाय के लिए अत्यंत चिंता का विषय है। पशुओं पर रहने वाले मुख्य बाह्य परजीवी किलनी, माइट्स, मक्खी एवम् जूँ है जो कि पशु के शरीर पर रहते हैं एवम् शरीर के उपरी सतह या अंदर जाकर अपना आहार लेते हैं। गर्म प्रदेशों में गर्मी के मौसम में किलनी एवम् मक्खी का प्रकोप अत्यधिक होता है जबकि माइट्स एवम् जूँ का प्रकोप सर्दी की महीनों में अधिक होता है। अगर इन बाह्य परजीवियों की संख्या को नियंत्रित नहीं किया जाता है तो पशुओं की उत्पादन क्षमता कम हो जाती है तथा पशुपालकों को आर्थिक हानि का सामना करना पड़ता है क्योंकि ये परजीवी पशुओं को प्रत्यक्ष एवम् अप्रत्यक्ष नुकसान देते है।

प्रत्यक्ष नुकसान

यह परजीवियों द्वारा पशुओं को होने वाले कष्ट, असुविधा एवम् क्षति के कारण होता है। कष्ट एवम् असुविधा के कारण दूध उत्पादन एवम् शरीरिक वृद्धि दर में कमी आ जाती है। किलनी, माइट्स एवम् मक्खी खाल, ऊन आदि का नुकसान करते है या फिर पशुओं को शरीर के रगड़ने तथा खुजलाने के कारण होने वाले घाव के कारण बाल, खाल तथा ऊन की क्षति होती है। इन बाह्य परजीवियों के कारण पशुओं में खून की कमी, संक्रमण, खुजली, त्वचा में छेद आदि हो जाता है।

अप्रत्यक्ष नुकसान

यह नुकसान पशुओं में विभिन्न प्रकार के रोगों के होने के कारण होता है जो कि बाह्य परजीवी द्वारा प्रसारित किया जाता है।

किलनी द्वारा फैलाये गए रोग– बबीसियोसिस, एनाप्लाज्मोसिस, डरमैटोफिलोसिस, थिलेरियोसिस आदि

मक्खी द्वारा फैलाये गए रोग– थनैला, ट्राइपैनोसेमियेसिस, किरैटोकंजक्टीवाइसिस आदि

मिज द्वारा फैलाये गए रोग– ब्लुटंग, अफ्रीकन हॉर्स सीकनेस आदि।

किलनी

किलनी बाह्यपरजीवियों का एक समूह है जो कि पशुओं में होने वाले नुकसान का एक प्रमुख कारक है। ये रक्त चूसने वाले बाह्यपरजीवी है जो कि पशुओं के शरीर पर रक्त चूसने वाले अल्प समय (कुछ दिन) तक मौजूद रहते है। ये पशुओं में रक्त अल्पता, दुर्बलता, अन्य बिमारियों का प्रसार आदि करते हैं तथा खाल, ऊन एवम् बाल का प्रत्यक्ष रूप से नुकसान करते है। किलनी का जीवन चक्र चार चरणों में पूरा होता है जैसे कि अंडा, लार्वा, निम्फ एवम् वयस्क। लार्वा एवम् निम्फ जीवन चक्र के अगले चरण में जाने से पहले परपोषी के शरीर से रक्त की आवश्यकता होती है। किलनी बहुत ही कठोर होते है एवम् बिना आहार के लगभग दो साल तक जीवित रहने में सक्षम होते हैं। किलनी जब एक बार परपोषी के शरीर से संलगन होते हैं जो प्रजनन से सप्ताह भर पहले तक रक्त चूसते है। रक्त चूसने के बाद मादा किलनी अंडे देती है।

किलनी को निम्नलिखित वर्गों मे विभाजित किया जा सकता है।

(1) एक परपोषी किलनी– इस वर्ग के किलनी के जीवन चक्र का सभी चरण एक ही पशु पर पूरा हो जाता है।

उदाहरण– बुफिलस प्रजाति, ऑटोवियस मेगनिन आदि। इस वर्ग के किलनी की संख्या को आसानी से नियंत्रित किया जा सकता है।

(2) बहुल परपोषी किलनी– इस वर्ग के किलनी अपना जीवन चक्र दो या अधिक पशुओं के शरीर पर पूरा करते है। जीवन चक्र के हरेक चरण को पूरा करने के बाद ये पशु के शरीर से अलग हो जाते हैं एवम् अन्य पशु के शरीर से चिपक जाते हैं। विभिन्न चरण के लिए परपोषी समान या विभिन्न प्रजाति के भी हो सकते हैं।

उदाहरण– इक्सोडीज जाति, रीपीसिफेलस जाति आदि।

किलनी के दो प्रकार के वर्ग होते है इक्सोडीज (कठोर किलनी) एवम् अरगासिड्स (सौम्य किलनी)। कठोर किलनी का पृष्ठीय भाग कठोर होता है एवम् एक कड़ा आवरण मौजूद होता है। इसके

विपरीत सौम्य किलनी का पृष्ठीय स्तर चमड़े की तरह लचीला होता है। किलनी का चिकित्सीय एवम् आर्थिक महत्व इनके द्वारा पशुओं एवम् मनुष्यों में रोगों के प्रसारित करने के कारण होता है।

किलनी पशुओं को विभिन्न तरीकों से प्रभावित कर अत्यधिक आर्थिक नुकसान पैदा करता है। पशुओं में रक्त की कमी किलनी द्वारा पैदा किया हुआ एक प्रत्यक्ष परिणाम है। इसके अलावा ये कृमि परजीवी एवम् रक्त प्रोटोजोआ के महत्वपूर्ण रोगवाहक होते है। किलनी द्वारा विभिन्न रोगों के रोगाणुओं को प्रसारित करने की क्षमता का विश्व स्तर पर महत्वपूर्ण आर्थिक महत्व है। कई विकासशील देशों में किलनी जनित रोगों का पशुओं के स्वास्थ एवम् प्रबंधन संबंधी एक प्रमुख समस्या का विषय है।

माइट्स– पषुओं मे माइट्स का संक्रमण चर्म रोग पैदा करता है जिसे खाज के नाम से भी जाना जाता है। यह परजीवी त्वचा के अंदर 0.5–1 इंच की गहराई तक जाकर वहीं पर अंडे देते हैं। माइट्स रक्त एवम् लसीका चूसने के लिए बहिःत्वचा को बेध देते है। बाह्य त्वचा पर हुए जख्म से सीरम निःस्रावित होकर सतह पर आ जाते है और थक्के बनाता है और इस प्रकार त्वचा पर पपड़ी बन जाती है। माइट्स के अंडो से छः पैर वाला लार्वा निकलता है जो कि बाद मे आठ पैरो वाला प्रोटोनिम्फ, ट्राइटोनिम्फ एवम् वयस्क में परिवर्तित हो जाता है। ये अपना जीवन चक्र 14 दिनो मे पूरा कर लेते है। परपोषी के शरीर पर माइट्स के जीवनचक्र के सभी चरण एक साथ पाए जा सकते है। पशुओं में माइट्स का संक्रमण अव्यधिक खुजलाहट एवम् असुविधा पैदा करते हैं जिसके कारण पशुओं के अहार अंतर्ग्रहण एवम् उत्पादन में कमी हो जाती है। खुजली एवम् रगड़ के कारण पशुओं के खाल एवम् ऊन का अत्यधिक नुकसान होता है। अधिक खुजली के कारण त्वचा में पपड़ी पड़ कर दरार पड़ जाता है तथा त्वचा मोटी हो जाती है एवम् संक्रमण के कारण फोड़ा या फुंसी निकल जाता है जो कि अत्यंत कष्टदायी होता है। विभिन्न प्रजाति के पशुओं में माइट्स का संक्रमण खाज पैदा करता है पर कुछ माइट्स प्रजाति परपोषी विशेष होते हैं एवम् एक प्रकार के परपोषी प्रजाति में दूसरी परपोषी प्रजाति की अपेक्षा अधिक संक्रमण करते हैं।

पशुओं में होने वाले विभिन्न प्रकार के खाज

(1) सारकोप्टिक खाज– यह प्रायः कुतों, भेड़, बकरी एवम् घोड़ों में मिलता है। यह अधिकतर पशुओं के माथे, गर्दन, सींग एवम् पूँछ की जड़ में मिलता है। संक्रमित स्थान पर लाल दाने निकल आते है जो शीघ्र ही फोड़ो में बदल जाता है एवम् इनके फूटने पर गाढा–पीला तैलीय स्त्राव निकलता है तथा पशु जब संक्रमित स्थान को रगड़ता है तो वहाँ के बाल झड़ जाते हैं।

(2) सोरोप्टिक खाज– यह प्रायः भेड़ों में देखने को मिलता है। यह शरीर के गर्दन, पीठ, पूँछ की जड़ एवम् पैरों में होता है। ये परजीवी शरीर के ऐसे भागों की त्वचा पर रहते हैं जो बालों या ऊन से अच्छी तरह ढके होते हैं।

(3) कोरिओप्टिक खाज– यह भेड़ों एवम् घोड़ो में देखने को मिलता है। यह शरीर के गर्दन, पीठ, पूँछ और पैरों में होता है।

माइट्स की संख्या सर्दी के मौसम में सबसे अधिक होती है एवम् गर्मी के मौसम में इसकी संख्या में कमी आ जाती है।

जूँ– यह परजीवी अपना पूरा जीवन–चक्र एक ही पशु के शरीर पर पूरा करता है। यह सभी घरेलु पशुओं में विषेषकर जाड़ों के दिनो में शरीर पर बालों के बीच पाया जाता है। भारत में पशुओं में जूँ का संक्रमण बहुत ही सामान्य है। ये अपना पूरा जीवन चक्र एवम् जीवन चक्र के सभी चरण एक साथ ही पशु के शरीर पर बिताता है। जूँए को मुख्यतः दो वर्ग में विभाजित किया गया है। जैसे कि रक्त चूसने वाले जूँ (एनोप्लूरा) एवम् काटने वाले जूँ (मैलोफैगा)

उदाहरण– चूसने वाले जूँए – लिग्लोकैंथस भिटुलि पिडेलिस

काटने वाले जूँए – डैमालिनिया बोमिस ओविस

पशुओं में जुओं का संक्रमण खुजलाहट पैदा करता है एवम् अत्यधिक रगड़ने एवम् खुजलाने से शरीर पर घाव बन जाता है तथा खाल मोटी हो जाती है, जिससे खाल एवम् ऊन की गुणवत्ता में कमी आ जाती है। काटने वाली जूँए त्वचा एवम् बाल से अपना पोषण लेते है जबकि चूसने वाले जूँए रक्त से अपना मरण करते है। अधिक संख्या में जुओं के संक्रमण से पशुओं को अत्यधिक बैचेनी होती है तथा वे खाना पीना भी छोड़ देते हैं जिससे उनकी उत्पादन क्षमता एवम् वृद्धि में कमी आ जाती है।

मक्खी– वयस्क मक्खी पशुओं के रक्त, पसीना, त्वचा से निकलने वाले स्त्राव, लार आदि की तरफ आकर्षित होते हैं एवम् इससे अपना भरण करते है। मक्खी बहुत सारे रोग जनित रोगाणुओं के वाहक भी होते है।

मुख्यतः इसे दो वर्गो में विभाजित किया गया है।

(1) काटने वाली मक्खी – सी–सी मक्खी, स्त्रेवल मक्खी आदि

(2) बिना काटने वाली मक्खी – फेस मक्खी आदि

बिना काटने वाली मक्खी आँख नाक एवम् घाव से निकलने वाले स्त्राव के उपर निर्भर रहती है। ये पशुओं को सामान्यतः चरने एवम् आराम करने के समय परेशान करती हैं जिससे पशुओं के उत्पादन एवम् वृद्धि में कमी आ जाती है। बिना काटने वाली मक्खी किसी विशेष रोगाणुओं के जैविक वाहक तो नहीं होते हैं लेकिन उनके भरण एवम् प्रजनन की आदत तथा मुँह एवम् पैर की संरचना के

कारण ये विभिन्न प्रकार के कृमि, विषाणु एवम् अन्य रोगाणुओं के यांत्रिक वाहक का कार्य करते हैं।

काटने वाली मक्खी पशुओं को अधिक परेशान करती है एवम् बहुत सारे रोगाणुओं के जैविक वाहक भी होते है। चूँकि ये पशुओं के रक्त के उपर निर्भर रहते हैं अतः पशुओं में रक्त की कमी एवम् अतिसंवेदनशीलता हो जाती है।

सामान्यतः सभी घरेलू पशुओं को वृद्धि एवम् उत्पादन मक्खियों के कारण प्रभावित होते हैं जिससे कि पशुपालकों को आर्थिक नुकसान उठाना पड़ता है।

रोकथाम एवम् उपचार

बाह्य परजीवियों के संक्रमण के रोकथाम एवम् उपचार में उनके जीवन चक्र की अहम् भूमिका होती है। जैसे कि जूँ अपना पूरा जीवन चक्र पशु के शरीर पर व्यतीत करती हैं अतः रोकथाम के लिए केवल पशु का उपचार पर्याप्त है। लेकिन परपोशी के शरीर से अलग होने के बाद परजीवी यदि वातावरण में मौजूद रहते हैं तो रोकथाम के लिए पशु के साथ–साथ वातावरण का उपचार भी अनिवार्य है। अथवा संक्रमित स्थान का उपयोग पशुओं के लिए कुछ समय तक बंद कर देना चाहिए। बाह्य परजीवियों का संक्रमण पशुओं के पोषण स्तर, अनुवांशिकता एवम् तनाव के स्तर से काफी प्रभावित होती है। अतः बाह्य परजीवियों के संक्रमण से बचाने के लिए पशुओं को संतुलित आहार देना चाहिए। अच्छे पोषण से पशु की त्वचा साफ एवम् चमकीली रहती है तथा माइट्स एवम् किलनी के संक्रमण की संभावना कम हो जाती है। पशुओं को अधिक भीड़ वाली जगह पर नहीं रखना चाहिए एवम् हरेक पशु को उनके सामान्य गतिविधि के लिए पर्याप्त जगह होनी चाहिए। पशुओं को धूप में रखना बाह्य परजीवी के संक्रमण से बचाने का सबसे सरल एवम् आसान तरीका है। पशुओं के प्रतिस्थापित समूह को हमेशा स्वस्थ एवम् स्वच्छ वातावरण में रह रहे जानवरों से ही लाना चाहिए। पशुशाला की सफाई नियमित रूप से करना चाहिए एवम् गोबर एवम् पेशाब को इकट्ठा नहीं होने देना चाहिए।

जैविक रोकथाम

हल्दी एवम् नीम के छाल का बारीक चूर्ण पशु के शरीर पर छिड़काव जूँओं की रोकथाम के लिए काफी प्रभावशाली होता है। कुछ तेल जैसे कि पुदीना के तेल का उपयोग भी पशुओं में बाहयपरजीवी के संक्रमण को रोकने के लिए गंघक पाउडर या पाइरेथ्रिन पाउडर का पशुओं पर छिड़काव काफी प्रभावी साबित होता है। ये माइट्स के लार्वा को जो कि शरीर के उपरी सतह पर रहते हैं, नष्ट करता है।

बाह्य परजीवियों के उपचार में प्रयोग होने वाले उत्पाद

पशुओं में बाह्य परजीवियों की रोकथाम पुरे पशु के झुंड के आधार पर होती है, इसका अर्थ यह है कि अगर समूह में एक पशु बाहयपरजीवी से संक्रमित पाया जाता है तो रोकथाम के लिए समूह के सारे पशुओं को परजीवीनाशक औषधि से उपचार करना चाहिए। बाहयपरजीवी की रोकथाम के लिए उपयोग होने वाले कुछ सामान्य उत्पाद।

कृत्रिम पाइरेथ्रॉइड के विभिन्न उत्पाद जैसे कि डेल्टामेथ्रिन, साइपरमेथ्रिन, परमेथ्रिन आदि जूँ संक्रमण की रोकथाम के लिए बाजार मे उपलब्ध होते हैं। इन उत्पादों के घोल का लेप या स्नान जूँ संक्रमण को कम करता है। कुछ अन्य उत्पाद जैसे कि आइवरमेक्टिन, एपरिनोमेक्टिन डोरामेक्टिन आदि का उपयोग टीका के रूप मे किया जाता है। टीका में प्रयोग औषधि काटने वाले जूँ की अपेक्षा रक्त चूसने वाले जूँ के लिए अधिक प्रभावशाली होता है। बाहयपरजीवियों के पूर्ण उन्मूलन के लिए समूह के सारे पशुओं का उपचार अत्यंत जरूरी है। सभी संक्रमित भवनों की अच्छे से सफाई करके परजीवीनाषक औषधि के घोल छिड़क कर संक्रमणरहित कर देना चाहिए। पशुशाला की नियमित सफाई परजीवियों के संक्रमण की रोकथाम में काफी मददगार होती है।

उत्पाद	बाह्यपरजीवी	उपचार
मैलाथियान	किलनी, जूँ	0.5% स्प्रे, 4% पाउडर का छिड़काव
चूना गंघक	माइट्स, जूँ	2.5% घोल का स्नान
कोभाफॉस	माइट्स, जूँ	0.05–0.3% स्प्रे या घोल का स्नान, 0.5–1% पाउडर का छिड़काव
फॉसमेट	माइट्स, जूँ	0.15–0.25% घोल का स्नान
मेथॉक्सीक्लोर	माइट्स, जूँ, किलनी	0.5% स्प्रे या घोल का स्नान, 5% पाउडर का छिड़काव

25 पशुओं के प्रमुख संक्रामक रोग और उनकी रोकथाम

अर्जुन प्रसाद वर्मा, मालु राम यादव, नवल सिंह रावत एवं गोविन्द मकराना
भाकृअनुप-राष्ट्रीय डेरी अनुसंधान, करनाल-132001

संक्रामक रोग प्रकोप होने पर बचाव के उपाय :–

- संक्रामक रोग के प्रारंभिक लक्षण देखते ही रोगी पशु को अन्य स्वस्थ पशुओं से अलग स्थान पर रखें।
- रोगी पशु को दाना–चारा व पानी की व्यवस्था अलग बर्तनों में करें।
- रोगी पशु के उपचार हेतु पशु चिकित्सक से सम्पर्क करें।
- पशु चिकित्सक द्वारा संक्रामक रोग होने की जानकारी देने पर रोगी पशु के उपचार के साथ–साथ पशु चिकित्सक की सलाह से आसपास के स्वस्थ पशुओं में टीकाकरण कराएं।
- रोगग्रस्त क्षेत्र में पशुओं का आवागमन / परिवहन नहीं करें।
- पशुपालक सर्वप्रथम स्वस्थ पशु का दूध निकाले तत्पश्चात रोगी पशु का निकालें एवं हाथ, बर्तन आदि को एंटीसंप्टीक घोल जैसे लाल दवा, डिटोल आदि से साफ करें।
- संक्रामक रोग से मृत पशु को गांव के बाहर लगभग 1.5 मीटर गहरे गड्ढे में चूने या नमक के साथ दबा देंवें।
- मृत पशु के सम्पर्क में रही वस्तुओं व स्थान को भी फिनाइल, लाल दवा आदि से कीटाणु रहित करें।
- बाड़े के आसपास मक्खी, मच्छर, कीट इत्यादि नहीं पनप सकें, इसके लिये यथासमय कीटनाशक घोल का छिड़काव करें।
- घाव लगने पर पशु का तुरन्त प्राथमिक उपचार करावें ताकि संक्रमण शरीर में न फैले।
- नियमित अन्तः एवं बाह्य परजीवी नाशक औषधि का प्रयोग पशु चिकित्सक की सलाह पर करें।

संक्रामक रोग से मृत पशु के शवों का निस्तारणः–

क्या करें

1. संक्रामक रोग से मृत पशु के शव को गड्ढा खोदकर दबा देना चाहिए।
2. लगभग 1.5 मीटर गहरा गड्ढा खोदकर शव पर नमक या चूने की परत बिछा दें।
3. मृत पशु का मल–मूत्र, चारा बिछावन या खून जैसे विसर्जित पदार्थो को गड्ढे में दबा दें या जला दें।
4. पशु आवास में शव स्थान पर चूना, पानी, फिनायल का छिड़काव करें या कागज चारा डालकर आग लगाकर स्थान को शुद्ध करें।

क्या न करें

1. खुले मैदान, नदी या तालाब में नही फेंके।
2. शव की खाल न उतारें।
3. चील, कौआ व कुत्तों के लिए खुला न छोड़े जो कि इस संक्रमण को एक स्थान से दूसरे स्थान पर फैलातें है।
4. बिना स्थान शुद्ध स्वस्थ पशु को उस स्थान पर ना बांधे

मुंहपका खुरपका रोग

यह मुख्यतः गाय, भैंस, बकरी एवं शूकर जाति के पशुओं में होने वाला विषाणुजनित, अत्यन्त संक्रामक, छूतदार एवं अतिव्यापी रोग है। छोटी उम्र में पशुओं में यह रोग जानलेवा भी हो सकता है। संकर नस्ल के पशुओं में यह रोग अत्यन्त तीव्रता से फैलता है। इस रोग में मृत्यूदर तो कम है, लेकिन दुधारू पशुओं का दुग्ध उत्पादन बहुत कम हो जाता है। इस रोग का फैलाव पशुपालक को अत्यधिक आर्थिक हानि पंहुचाता है।

रोग का फैलाव

- दूषित चारे, दाने व पानी के सेवन से
- रोगी पशु की बिछावन के सम्पर्क में आने से
- गोबर एवं पेशाब से
- दुधारू पशुओं के ग्वाले से
- हवा के माध्यम से

रोग के लक्षण

- 105–107° फॉरेनहाइट तक तेज बुखार
- मुंह, मसूड़े व जीभ पर छाले, लगातार लार का गिरना।
- पैरों में खुरो के बीच छाले जिसमें पशु का लंगड़ाना।
- पैर के छालों में जख्म एवं कीड़े पड़ना।

- दुधारू पशु के थनों एवं गादी में छाले पड़ने से थनैला रोगा।
- कुछ पशुओं में हांफने की बीमारी होना।
- दुधारू पशुओं में दूध के उत्पादन में एकदम कमी।

रोग का उपचार

1. मुंह पर खुर के घावों की प्रतिदिन सुबह–शाम फिटकरी या लाल दवा के हल्के घोल से सफाई करें।
2. घाव में कीड़े पड़ने पर फिनाइल तथा मीठे तेल की बराबर मात्रा मिलाकर उपयोग करें।
3. उपरोक्त सब उपलब्ध न होने पर नीम के पते उबालकर ठंडे किये पानी से जख्म साफ करें।
4. विषाणुओं द्वारा उत्पन्न रोगों का सही इलाज अभी तक नही खोजा जा सका है। अतः बचाव ही उपचार है।
5. इस रोग से पशु की रोग प्रतिरोधक क्षमता कम हो जाने से अन्य रोगों के बचाव हेतु पशु चिकित्सक की सलाह से उपचार करावें।

रोगी की रोकथाम व बचाव

1. पशुओं में प्रतिवर्ष नियमित रूप से टीकाकरण करावें
2. यह रोग महामारी के रूप में फैलता है अतः रोगी को स्वस्थ पशु से तुरन्त अलग करें।
3. पशु को बांधकर रखें व घूमने फिरने न दें।
4. बीमार पशु के खाने–पीने का प्रबंध अलग ही करें।
5. रोगी पशुओं को नदी, तालाब, पोखर आदि में पानी न पीने देवें।
6. पशु को सूखे स्थान पर बांधे। कीचड़, गीली व गंदी जगह पर नहीं।
7. रोगी पशु को सम्भालने वाले व्यक्ति को बाड़े से बाहर आने पर हाथ पैर साबुन से अच्छी तरह से धो लेने चाहिए।
8. मुंहपका खुरपका रोग से सक्रमित पशु को बेचना, गांव के अन्य पशुओं एवं अन्य गांव के पशुओं के लिए भी खतरा है। अतः पशुओं को न बेचे और न ही खरीदें एवं पशु का एक स्थान से दूसरे स्थान पर आवागमन नहीं करें।
9. रोग की सूचना तुरन्त पशु चिकित्सक को देवें।
10. जहां जहां पशु की लार आदि गिरती है वहां पर कपड़े धोने का सोड़ा चूना इत्यादि डालते रहें यदि संभव हो तो फिनाइल से धोना भी लाभप्रद होता है।

गलघोंटू (घुर्रका रोग)

गलघोंटू मुख्यतः गाय, भैंस, भेड़, बकरी एवं शूकर जाति के पशुओं में होने वाली अतिव्यापी छूतदार बीमारी है। यह एक जीवाणु जनित रोग है। यह बीमारी उन स्थानों पर अधिक होती है जहां बारिश का पानी इकट्ठा हो जाता है। इस रोग के जीवणु अस्वच्छ स्थान पर रखे जाने वाले पशुओं तथा लम्बी यात्रा अथवा अधिक कार्य करने से थके पशुओं पर शीघ्र आक्रमण करते है।

रोग का फैलाव

- रोगी पशु के जूठे चारे, दाने एवं पानी के सेवन से
- रोगी पशु की बिछावन से सम्पर्क में आने से
- रोगी मादा पशु के दूध से
- हवा के माध्यम से

रोग के लक्षण

- 105–106° फॉरेनहाइट तक रोज बुखार
- आंखे लाल एवं सूजी हुई
- नाक, आंख एवं मुंह से स्त्राव
- गर्दन, सिर या आगे की दोनों टांगों के बीच सूजन
- सांस लेते समय घुर्र–घुर्र की आवाज का होना
- सांस लेने में कठिनाई के कारण दम घुटने से पशु की मृत्यु होना।

रोग का उपचार एवं बचाव के उपाय

1. रोग का तुरन्त उपचार आवश्यक है अन्यथा पशु की मृत्यु संभव है।
2. रोग की सूचना निकट के पशु चिकित्सालय में देवें एवं रोगी पशु का तुरन्त उपचार करावें।
3. प्रतिवर्ष मानसून पूर्व गलघोटू रोग का टीका निकटतम पशु चिकित्सा संस्था से अवश्य लगवाऐं।
4. पशु को लम्बी यात्रा से पूर्व भी टीका अवश्य लगवाऐं।
5. रोग के लक्षण देखते ही रोगी पशु को अन्य स्वस्थ पशुओं से अलग कर देवें।
6. स्वस्थ पशुओं को चारा, दाना, पानी आदि रोगी पशु से पहले देवें।
7. बीमारी से मृत पशु के शव का निस्तारण वैज्ञानिक तरीके से गहरा गड्ढा खोदकर नमक/चूना डालकर अथवा जलाकर करें।
8. रोगी पशु को नदी, तालाब, पोखर आदि में पानी न पीने दें।

लंगड़ा बुखार (फड़सूजन)

यह गाय, भैस, भेड़, बकरी में वर्षा ऋतु में होने वाला एक जीवाणु जनित छूतदार संक्रामक रोग है। इसमें शरीर में मांसल भाग विशेष रूप से पुट्ठों पर गैस भरी सूजन आ जाने से पशु लंगड़ाने लगता है।

रोग का फैलाव

- खुले घाव या खरोंच द्वारा भी जीवाणु शरीर में प्रवेश कर रोग उत्पन्न करता है।
- इस रोग के जीवाणु के बीजााणु प्रतिकूल परिस्थितियों में भी काफी समय तक जीवित रहकर रोग फैलाते रहते है।

रोग के लक्षण

- 105–107° फॉरेनहाइट तक तेज बुखार, खाना पीना एवं जुगाली बंद कर देना।
- शरीर के विभिन्न अंगों में अकड़न, आंखों का लाल होना।
- पुट्ठे पर गर्म सूजन, जो बाद में ठंडी हो जाती है।
- सूजन को दबाने पर गैस भरी होने से चट–चट की आवाज होती है।
- पशु का पहले लंगड़ाना एवं बाद में चलने–फिरने में पूर्णतया असमर्थ हो जाना।

रोग का उपचार एवं बचाव के उपाय

1. निकटतम पशु चिकित्सालय को रोग की सूचना देवें एंव रोगी पशु का तुरन्त इलाज करावें।
2. प्रतिवर्ष पशुओं को इस रोग से बचाव हेतु मानसून से पहले टीका अवश्य लगवाऐं।
3. रोगी पशु को नदी, तालाब, पोखर आदि में पानी न पीने दें।
4. रोगी पशु को स्वस्थ पशुओं से अलग कर स्वस्थ पशुओं को दाना–पानी आदि पहले देवें
5. रोग से मृत पशु को गांव के बाहर लगभग 1.5 मीटर गहरे गड्ढे में चूने या नमक के साथ दबा दें।
6. रोगी पशु के सम्पर्क में आई वस्तुओं की लाल दवा या फिनाइल से सफाई करें।

फड़किया रोग (एन्टेरोटॉक्सिमिया)

फड़किया भेड़ व बकरियों में होने वाली एक प्रमुख बीमारी है। यह बीमारी स्वस्थ भेड़ व बकरियों में मुख्यता जुलाई–अगस्त माह में होती है। यह बीमारी हर उम्र की भेड़ व बकरियों में प्राण घातक रोग के रूप में होती है।

रोग के कारण

1. यह बीमारी एक जीवाणु से होती है। यह रोग भेड–बकरी की प्रत्येक नस्ल, आयु तथा लिंग के पशु को प्रभावित करता है।
2. अधिक प्रोटीन युक्त खुराक लेने अथवा ताजी फसल कटे हुए खेतों मे चराने से यह बीमारी अधिक होती है।
3. सरसों व चने की कटाई के तुरंत बाद खाली खेतों में बकरियों/भेड़ों को चराना सबसे अधिक हानिकार होता है। टूटी हुई सरसों/चने की फलियां बकरियां अधिक खा लेती है जिससे प्रोटीन युक्त खुराक बढ़ जाती है।
4. यह रोग पोषक/अधिक प्रोटीनयुक्त खुराक के प्रारंभ करने के 15–20 दिन बाद में होता है।
5. अन्तः परजीवियों का अधिक संक्रमण भी रोग जनन में सहायक होता है।

रोग के लक्षण

- पेट में तीव्र दर्द होने के कारण पीड़ित भेड़/बकरी बेचैन होकर उछलने कूदने लगती है।
- रोगी पशु के आफरा आ जाता है। रोगी पशु की मांसपेशियों में खिंचाव एवं सिर को दीवार या खंभे से टकराती है।
- फडफकिया रोग के जीवाणु से उत्पन्न आंत्र–आविषाक्तता से बड़ी संख्या में पशु प्रातः काल मरे मिलते है।
- रेवड़ का सबसे स्वस्थ मेमना पहले प्रभावित होता है।
- इस अवस्था में छेड़ देन पर रोगी जमीन पर गिर जाता है और उसकी टांगे एवं सिर खींच जाते है।
- आंखे चौकन्नी नजर आती है तथा मुंह से झाग निकलता है।
- पशु जल्दी–जल्दी सांस लेता है और मांसपेशियों में फड़कन होती रहती है।
- कुछ पशुओं में दस्त लगते हैं।
- उत्तेजना के दौरान शरीर का तापमान भी बढ़ जाता है।
- अन्तिम अवस्था में रोगी अर्द्ध मूच्छित होकर पड़ जाता है तथा लेटे–लेट साइकिल चलाने की तरह रोगी की टांगे चलती रहती है।
- इन लक्षणों के प्रकट होने के 2–3 घंटे में पशु की मृत्यु हो जाती है।

रोग का उपचार एवं बचाव के उपायः–

बीमारी के लक्षण प्रकट होने के बाद इस बीमारी में औषधियों का विशेष असर नहीं होता, अतः रोग से बचाव हेतु निम्न उपाय अपनाने चाहिए :–

1. अधिक प्रोटीन युक्त चारा कम मात्रा में खिलाना चाहिए।
2. ताजी फसल कटे खेतों मे पशुओं को कम समय तक चराना चाहिए।
3. जिन क्षेत्रों में बीमारी का प्रकोप बढ़ रहा हो उन क्षेत्रों में चराने के घंटो (समय) में कमी कर देनी चाहिए।
4. शाम को बाड़े में बन्द करते समय प्रत्येक भेड़, बकरी का निरीक्षण कर लेना चाहिए, यदि किसी भेड़ या बकरी का पेट फूला लगे तो, 10–20 ग्राम मीठा सोडा देना चाहिए।

5. प्रकोप के दिनों में रात के समय में भी एक दो बार झुण्ड का निरीक्षण करना अच्छा रहता है।
6. इस रोग से भेड़–बकरियों को बचाने हेतु प्रतिवर्ष फरवरी–मार्च या जुलाई माह में टीका अवश्य लगवाना चाहिए।
7. यह टीके प्रसव के 2–4 सप्ताह पहले लगाने से मादा के साथ–साथ नवजात में भी रोग से बचाव की शक्ति आ जाती है।

एन्थ्रेक्सः (तिल्ली बुखार, विष ज्वर, गिल्टी रोज. वूल सोर्टर्स डिजीज)

यह बेसीलस एथ्रेसिस नामक जीवाणु से पशुओं तथा मनुष्यों में होने वाला घातक संक्रमक रोग है। इस जीवाणु के बीजाणु कई वर्षो तक मिट्टी में पड़े रहते है एवं अनुकूल परिस्थितियां मिलने पर रोग उत्पन्न करते है। इसलिए इस रोग को 'मिट्टी जनित रोग' भी कहते है। इस रोग के जीवाणु हवा के सम्पर्क में आने पर स्पोर के रूप में सुरक्षा कवच बना लेते है।

रोग का फैलाव

1. बीजाणु संक्रमित घास, पेड़ पौधे व पानी के सेवन से शाकाहारी पशु संक्रमित होते है।
2. मांसाहारी पशुओं में संक्रमित मांस के सेवन तथा संक्रमित बाल, खाल एवं शव को चाटने से रोग फैलता है।
3. खून चूसने वाले परजीवियों तथा मांसाहारी पक्षियों द्वारा भी यह रोग फैलता है।
4. रोग के जीवाणु नाक तथा खरोंच या चोट द्वारा भी शरीर में प्रवेश करते हैं।
5. यह रोग प्रयोगशालाओं में काम करने वाले, भेड़ की ऊन के समपर्क में आने वाले, मृत पशुओं की खाल उतारने वाले एवं मांस काटने वाले व्यक्तियों में अधिक होता है।
6. यह रोग खेतों में उन के बुरादे की खाद को उपयोग में लेते समय सम्पर्क में आने वाले मनुष्यों एवं पशुओं में भी फैल सकता है।

रोग के लक्षण

- रोग का अचानक उत्पन्न होना एवं पशु की मृत्यु होना।
- पशु खाना–पीना बंद कर देता है।
- तीव्र ज्वर, नाड़ी की गति धीमी, पशु का बैचेनी से चक्कर काटना।
- म्यूकस झिल्लियों से रक्त छलकाता है।
- सांस लेने में कठिनाई, मुंह से सांस लेने का प्रयास एवं दम घुटने से अचानक मृत्यु।
- गर्भित पशु में गर्भपात हो जाता है।
- दूधारू पशुओं के दूध उत्पादन में कमी हो जाती है।
- पशु के नाक, कान, मुंह गुदा द्वार से गहरे लाल रंग का न जमने वाला गाढ़ा खून निकलना।

रोग के उपचार एवं बचाव के उपाय

1. रोगी पशु को स्वस्थ पशु से तुरन्त अलग कर निकटस्थ पशु चिकित्सालय में सम्पर्क कर उपचार करायें।
2. प्रभावित क्षेत्रों के पशुओं में लगातार 3 वर्ष तक टीकाकरण करायें।
3. अचानक पशु की मृत्यु एवं प्राकृतिक छिद्रो में खून निकलने पर न तो मृत पशु का शव खोले न ही उसकी खाल निकाले।
4. मृत पशु के शव के निस्तारण गांव के बाहर 1.5 मीटर गड्ढा खोदकर उसमें नमक या चूना डालकर करें। यह बात अवश्य ध्यान में रखें कि मृत पशु का शव जंगली पशु–पक्षी भी न खा सकें।
5. मृत पशु के रहने के स्थान की सफाई फिनाईल से करें।
6. मृत पशु की बिछावन आदि को जला दें या गड्ढे में गाड़ दें।

26 जैविक खेती आज की आवश्यकता

मालु राम यादव[1], राकेश कुमार[1], विजेन्द्र कुमार मीना[1], बृजेश यादव[2] एंव विनोद यादव[3]

[1]भाकृअनुप- राष्ट्रीय डेरी अनुसंधान संस्थान, करनाल
[2]भाकृअनुप- भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली
[3]कृषि रसायन एंव मृदा विभाग, राजस्थान कृषि महविद्यालय, उदयपुर

जैविक खेती है क्या ?

जैविक खेती, खेती करने का वह तरीका है जिसके अर्न्तगत रासायनिक उर्वरक, कीटनाशक व फफूंदनाशी रसायनों का उपयोग न करके इनके स्थान पर जैविक उत्पाद जैसे– गोबर की खाद, कमपोस्ट, वर्मी कम्पोस्ट, जीवाणु खाद, हरी खाद, फसल चक्र, फसल अवशेष व अन्य कार्बनिक अवशेष, प्राकृतिक मित्र कीटों, जैविक कीटनाशियों आदि का उपयोग किया जाता है।

जैविक खेती की आवश्यकताः–

जनसंख्या के बढ़ते दबाव एंव हरित–क्रांति के परिणाम स्वरूप उन्नत एंव संकर किस्मों के बीजों, रसायनिक उर्वरको व कीटनाशकों को अन्धाधुन्ध अपनाया गया जिससे जलवायु व भूमि प्रदूषण के साथ–साथ उत्पादित खाद्यानों एवं परिरक्षित भोज्य पदार्थों मे रसायनों के अवशेष मानव स्वास्थ्य के लिए हानिकारक सिद्ध हो रहे हैं। जीवाश खादों का उपयोग कम होने से भूमि मे कार्बनिक पदार्थो की कमी होती जा रही है साथ ही उर्वरा शक्ति मे कमी से फसलों की उत्पादकता में ठहराव आ गया है। आधुनिक खेती उपयोग किये जा रहे रसायनों के कारण आज जल, वायु एवं भूमि प्रदूषण एक खतरनाक स्तर तक पहुँच गया, जिससे सदा स्वस्थ रहने वाले ग्रामीण भी आज कैंसर, हदयघात जैसी बीमारियों से ग्रस्त होने लगे हैं।

जैविक खेती मे जीवांश खाद, प्राकृतिक संसाधनों एंव कार्बनिक पदार्थो का समुचित उपयोग किया जाता है। कृषि उत्पादन मे टिकाऊपन लाने, मृदा की जैविक गुणवत्ता बनाये रखने, वातावरण प्रदूषण रोकने एंव मानव स्वास्थ्य की रक्षा तथा उत्पादन लागत को कम करने के लिए जैविक खेती की आवश्यकता है। जैविक खेती को पूर्ण जैविक संगठन माना गया है।

वर्तमान में की जा रही खेती के नकारात्मक पहलुओं, कृषि आदानों की बढ़ती कीमतों एंव खेती में लागत बढ़ने के मददेनजर जैविक खेती ही एकमात्र टिकाऊ खेती विकल्प है। जैविक खेती परम्परागत खेती का उन्नत तरीका है, जिसमें भूमि की सजीवता, जल की गुणवत्ता एंव जैव विविधता आदि को बनाये रखते हुए दीर्घकाल तक पर्यावरण एंव वायु को प्रदूषित किये बिना टिकाऊ उत्पादन प्राप्त किया जा सकता है।

जैविक खेती अपनाने की विधिः– जैविक खेती को समझने एंव फसल की उत्पादकता बनाये रखने के लिए इसे मुख्य रुप से तीन घटको मे बांट सकते है। सबसे पहले बीजोपचार, दूसरा पोषक तत्व प्रबंधन तथा तीसरा कीड़ों एंव रोगों से सुरक्षा।

1. बीजोपचारः– जहां तक सम्भव हो किसान रासायनिक खेती से तैयार बीज का उपयोग नहीं करें। दलहनी फसलों को एजोटोबैक्टर/एजोस्पाईरिलियम जीवणु खाद से उपचारित करें। रोग नियंत्रण हेतु ट्राईकोडर्मा से बीजोपचार करना चाहिए।

2. पोषक तत्व प्रबंधनः– फसलों के लिए महत्त्वपूर्ण पोषक तत्व नत्रजन की पौधों के लिए पर्याप्त मात्रा में उपलब्धता सुनिश्चित करना जैविक खेती का सबसे कठिन कार्य हैं क्योंकि इस तत्व का जमीन में संचय नहीं किया जा सकता। खेती की कम से कम जुताई करें ताकि मृदा की संरचना एंव भूमि में कार्बनिक पदार्थ का कम से कम हास हो। वैज्ञानिक फसल चक्र अपनाऐं जिसमें दलहनी फसलों का समावेश अनिवार्य रूप से करें। पौधों के पोषण के लिए फसलों के अवशेषों, खरपतवारों व अनुपयोगी जैव पदार्थों को वर्मी–कम्पोस्ट, फॉस्फो–कम्पोस्ट, गौमूत्र व रॉक–फॉस्फेट में मिलाकर सुपर–कम्पोस्ट, नेडेप कम्पोस्ट एंव उन्नत विधि से बनाया गया कम्पोस्ट का अधिकाधिक उपयोग करें।

3. समेकित कीट एंव पोधों–व्याधि प्रबंधनः–

समन्वित कीट प्रबंधन के अन्तर्गत मित्र कीटों, मित्र फफूंदों, मित्र पक्षियों, जैविक कीटनाशियों का उपयोग नाशीजीवों का स्तर आर्थिक हानि स्तर से कम रखने के लिए किया जाता है।

कीट प्रबंधनः– पौधों को नुकसान पहुंचाने वाले कीड़ों के प्रकृति

में अनेक दुश्मन मौजूद हैं जैसे लेडी बर्ड बीटल, क्राईसोपा व मकड़ी। इन मित्र कीटों का संरक्षण करें। सूण्डियों के दुश्मन जैसे ट्राईग्रामा, मड वास्प, रोबर मक्खी, मेंटिस, पक्षी आदि मौजूद है। कीट नियंत्रण हेतु किसानों द्वारा सवंय खेत पर उत्पादित व प्राकृतिक रूप से प्राप्त जैव अवशेषों जैसे नीम की पत्तियों का रस, नीम की निम्बोली, नीम का तेल, नीम की खली, तम्बाकू, धतूरे एंव गौमूत्र को जैव प्रभावी कीटनाशी के रूप में प्रयोग किया जा सकता है। अन्य तरीकों जैसे बी.टी. एंव एन.पी.टी. आदि का प्रयोग करें। इनके अतिरिक्त फेरोमीन ट्रेप, प्रकाश–पाश द्वार भृगों को मार दें व एक हैक्टेयर भूमि में 1 टन नीम की खली मिलायें।

पौध–व्याधि प्रबंधनः– जैविक तरीकों से बीमारियों की रोकथाम कीटों के बजाय अधिक कठिन होती है। अतः रोगों से बचने के लिए शुरू से ही सावधान रहें साथ ही निम्न तरीके अपनाएंः–

1. गर्मियों में गहरी जुताई करें।
2. उचित फसल चक्र अपनाऐं।
3. रोगरोधी उन्नत किस्मों की बुवाई करें।
4. बीज को तेज धूप में सुखाऐं या गर्म जल से उपचारित करें।
5. बीज को ट्राईकोडर्मा (मित्र फफूंद) से उपचारित करके बोए।

जैविक खेती में सामान्यतः की जाने वाली उन्नत शस्य क्रियाएंः–

1. गर्मी की गहरी जुताई करें।
2. वैज्ञानिक फसल चक्र को अपनाऐं। फसल चक्र में दलहनी फसलों का समावेश निश्चित करें।
3. विभिन्न फसलों में सिफाारिश अनुसार ही जैविक उर्वरकों जैसे राईजोबियम, एजोटोबेक्टर, एजोस्पाइरिलियम व पी. एस.बी. (फास्फेट साल्यूबलाइजिंग बेक्टीरिया) का उपयोग करें।
4. भूमि में जीवांशकी मात्रा बढ़ने के लिए हरी खाद का भी प्रयोग करें।
5. पौधों के पोषण के लिए सड़ी हुई गोबर की खाद, वर्मी कम्पोस्ट, फॉस्फो कम्पोस्ट एंव अन्य उन्नत विधि से बनाया गया कम्पोस्ट का अधिकाधिक प्रयोग करें।
6. फसल अवशेषों को खेत में ही मिला दें।
7. रसायनिक तत्वों से मुक्त जल से फसलों की सिंचाई करें।
8. खरपतवार नियंत्रण हेतु समय पर फसल चयन, बुवाई, बुवाई की सही विधि एंव निराई–गुड़ाई आवश्यक है।
9. फसलों की रोग प्रतिरोधी किस्मों का चयन करें।
10. जहां तक संभव हो स्थानीय स्तर से प्राप्त जैव अवशेष जैसे नीम के पत्ते, नीम की निम्बोली, नीम, करंज खली इत्यादि का कीटनाशी के रूप में प्रयोग किया जा सकता है। अन्य तरीकों में प्रकाश–पाश, फेरोमोन ट्रेप, ट्राईकोग्रामा, बी.टी. एंव एन.पी.वी. आदि का प्रयोग करें।
11. रोग नियंत्रण हेतु जैविक बीजोपचार (जैसे गर्म धूप/गर्म जल से उपचार) करें।
12. जैविक फफूंदनाशी जैसे ट्राईकोडर्मा आदि का प्रयोग करें।

27 उन्नत तकनीक अपनाएं-रबी फसलों की पैदावार बढ़ाएं

मालु राम यादव[1], राजेन्द्र कुमार यादव[3], राकेश कुमार[1], हरदेव राम[1], उत्तम कुमार[1] एंव सी.एम. परिहार

[1]भाकृअनुप- राष्ट्रीय डेरी अनुसंधान संस्थान, करनाल-132001
[2]भाकृअनुप- भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली-110012
[3]भाकृअनुप- भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली-110012

कम पानी, संरक्षित नमी एंव विपरीत परिस्थितियों में भी सरसों, चना, जौं एंव गेहूं की उन्नत कृषि तकनीक अपनाकर अधिकतम उपज एंव मुनाफा प्राप्त किया जा सकता है।

सरसों की उन्नत खेती

- सरसों की पैदावार पर बुवाई के समय का अधिक प्रभाव पड़ता है। अतः इसकी बुवाई 15 सितम्बर से 15 अक्टूबर तक आवश्यक रूप से करें।
- उन्नत किस्में – (सिंचित क्षेत्र) पूसा जय किसान (बायो–902,) आर.एच.एस 30, लक्ष्मी, वसुन्धरा, जगन्नाथ, अरवाली (आर.एन.393) टी–59 वरूणा, आशीर्वाद। बारानी क्षेत्र में पी.सी.असर. 7 रजत, पी.आर.15 क्रान्ति, आर.एच. 30, अरावली, आर.एच. 819 तथा पछेती बुवाई के लिए आर.एन. 505, आरजी.एन. 145 नवगोल्ड की बुवाई करे।
- बीज की मात्रा प्रति हैक्टर रखें।
- बीज को 2 ग्राम मैन्कोजेब या थाइरम प्रति किलों बीज की दर से उपचारित करे, तत्पचात्/एजोस्पाईरिलम जीवाणु खाद कल्चर 3 पैकेट प्रति हैक्टर से उपचारित कर बुवाई करे।
- संतुलित उर्वरकों का प्रयोग मिट्टी परीक्षण के आधार पर या विभागीय सिफारिशानुसार करे। सिंचित फसल में अधिकतम उपज लेने हेतु 80 किलोग्राम नत्रजन तथा 40 किलोग्राम फास्फोरस प्रति हैक्टेयर के आधार पर 88 किग्रा डी.ए.पी. व 145 किग्रा यूरिया अथवा 250 किग्रा सिंगल सुपर फास्फेट व 175 किग्रा यूरिया काम में लेवे तथा बुवाई से पूर्व 250 किलो जिप्सम प्रति हैक्टर उपयोग करें। नत्रजन की आधी मात्रा व फास्फोरस की पूरी मात्रा बुवाई से पूर्व उरकर देवे तथा शेष नत्रजन की मात्रा पहली सिंचाई के साथ देवे। असिंचित क्षेत्र में उपर बताये गये उर्वरकों की आधी मात्रा ही बुवाई से पूर्व काम में लेवें।
- पेन्टेडबग व आरामक्खी की रोकथाम के लिए बुवाई के 7–10 दिन बाद मिथाइल पैरामिथान 2 प्रतिशत पूर्ण या क्यनालफॉस 1.5 प्रतिशत चूर्ण का 25 किग्रा प्रति हैक्टर की दर से भुरकाव करे।
- मोयला चेंपा कीट दिखाई देने पर मिथाइल पैरामिथान 2 प्रतिशत या कार्बेरिल 5 प्रतिशत या मैलाथिऑन 5 प्रतिशत चुर्ण का 25 किग्रा प्रति हैक्टर की दर से भुरकाव करे अथवा डउायमिथोएट 30 ई.सी. दवा का 875 मिली. प्रति हैक्टर की दर से छिड़काव करे।
- सफेद रोली से बचाव हेतु मेटेलेक्सिल का 35 एस.डी. 6 ग्राम प्रति किलो बीज की दर से उपचारित कर बुवाई करे।
- पाले से बचाने के लिए गंधक के तेजाब का एक लीटर तेजाब 1000 लीटर पानी में घोल बनाकर फूल जाने से पहले छिड़काव करे।
- सरसों की फसल में आरोबंकी नियंत्रण के लिए 50 किलोग्राम नीम की खली बुवाई के समय कतारों में दें।
- सरसों में क्रांतिक अवस्था फूल आने 30–40 दिन एंव फलियां बनते समय 70–80 दिन सिंचाई अवश्य करें।
- फसल के पत्ते होकर झड़ने लगे तथा फलिया पकने लगे तब फसल काट लें।
- सामान्य परिस्थितियों में उन्नत कृषि विधियों को अपनाकर 15–16 क्विंटल/है. तक उपज प्राप्त की जा सकती है।

चने की उपज बढ़ाने का आसान तरीका

- आखिरी जुताई के समय 250 किलों जिप्सम प्रति हैक्टर के हिसाब से डालने से दाने सुड़ोल व चमकदार बनते हैं। दीमक और कटुआ लट से बचाव के लिए क्यूनॉलफास 1.5 प्रतिशत पूर्ण 25 किलों प्रति हैक्टर के हिसाब से भुरक कर आखरी जुताई करें।
- हमेशा प्रमाणित बीज ही बोये। उन्नत किस्में–सिंचित क्षेत्रों में

सी–235, दाहोद यलों, आर.एस.जी. 888, जी.एन.जी. 469, जी.एन.जी. 863, जी.एन.जी. 1581, आर.एस.जी. 895 तथा काबुली चने की जी.एन.जी. 1499, गौरी, जी.एन.जी. 1292 व आई.सी.सी.सी. 32

- बारानी क्षेत्रों के लिए चने की सी–235, आर.एस.जी. 888, आर.एस.जी. 973 व सम्राट आदि किस्में उपयुक्त है।
- पछेती बुवाई के लिए सम्राट आधार व आशा किस्में उपयुक्त होती है।
- क्षारीय भूमि के लिए आर.एम.जी. 896 (अर्पण) किस्म उपयुक्त होती है।
- बुवाई के लिए 70 से 80 किलों बीज एक हैक्टर के लिए पर्याप्त होता है।
- बीजोपचार–जड़गलन व उखटा रोग की रोकथाम के लिए 6 ग्राम ट्राईकोडर्मा मित्र फफूंद, कार्बेण्डेजिम या थाईरम के साथ टॉपसिन–एम 1 ग्राम प्रति किलोग्राम बीज के हिसाब से बीजोपचार करना चाहिए।
- दीमक के प्रकोप वाले खेतों में 8 मिलीलीटर क्लोरोपाईरीफॉस 20 ई.सी. दवा प्रति किलो बीज के हिसाब से काम में ले। इसके बाद बीजों को राईजोबियम तथा पीएसबी कल्चर से उपचारित करें।
- मिट्टी की जांच करवाकर मृदा स्वास्थ्य कार्ड या जिले की पुस्तिका में दी गयी सिफारिश के अनुसार उर्वरक डालें। डीएपी की तुलना में सिंगल सुपर फास्फेट ज्यादा लाभकारी है। सिंगल सुपर फास्फेट में फास्फोरस के साथ–साथ गंधक और केल्शियम भी होता है।
- मिट्टी की जांच नहीं करवाई हो तो सिंचित फसल के लिए 250 किलो सिंगल सुपर फास्फेट व 45 किलो यूरिया या 85 किलो डीएपी व 10 किलो यूरिया तथा असिंचित फसल में इनकी आधी मात्रा ही बुवाई से पूर्व डालें। उर्वरक बीज की सतह से 2 से.मी. गहराई व 5 से.मी. साईड में उरकर डालें।
- कतार से कतार की दूरी 30 सेमी. रखे। भारी मिट्टी वाले क्षेत्रों में कतार से कतार की दूरी 45 सेमी. रखे। बुवाई का सही समय अक्टूबर माह होता है। सिंचित क्षेत्रों में बुवाई नवम्बर के प्रथम सप्ताह तक की जा सकती है।
- पहली सिचाई बुवाई के 40 से 45 दिन बाद फूल आने से पूर्व एंव दूसरी सिंचाई 80 से 90 दिन फलियां बनना शुरू होने पर करनी चाहिए।
- फली छेदक लट चने की फसल का प्रमुख कीट है। फेरोमेन टेप का उपयोग करे। जैविक कीटनाशी एन0पी.वी. 250 एल.ई. या बी.टी. 750 मिलीलीटर 400–500 लीटर पानी में मिलाकर छिड़काव करे।
- इस तरह उन्नत किस्म, बीजोपचार, समय पर बुवाई, सिंचाई व कीट बीमारियों का प्रबन्धन करके 20 क्विंटल प्रति हैक्टर तक चने की उपज प्राप्त कर सकते है।

जौ–विपरीत परिस्थितियों में अधिकतम पैदावार प्राप्त करे।

- **उन्नत किस्में** – आर.डी. 2508, आर.डी. 2503, आर.डी. 2552, आर.डी. 2052, आर.डी. 2035, आर.डी. 2660, आर.डी. 2624, बिलाड़–2 बारानी क्षेत्रों के लिए आर.डी. 2624, आर.डी. 2660 एवं देरी से बुवाई के लिए आर.डी. 2508 तथा हरे चारे व दाने के लिए आर.डी. 2715 की बुवाई करे।
- खेत की अच्छी तैयारी करने के पश्चात दीमक व भूमि में रहने वाले अन्य कीड़ों की रोकथाम के लिए मिथाइल पैरामिथायॉन 2 प्रतिशत चूर्ण या क्यूनालफॉस 1.5 प्रतिशत पूर्ण 25 किलोग्राम प्रति हैक्टर की दर से बीज बोने से पूर्व अंतिम जुताई के समय भूमि में अच्छी तरह मिला दें।
- जौ की बुवाई 1 नवम्बर से 20 दिसम्बर तक की जा सकती है। किन्तु उपयुक्त समय नवम्बर माह रहता है। बीज की मात्रा 100 से 125 किलोग्राम प्रति हैक्टेयर प्रयोग करें। बुवाई 20 सेमी. की दूरी पर कतारों में करे। चारे की फसल के लिए बीज दर 125–130 किलोग्राम प्रयोग करें।
- बीज को बोने से पहले 2 से 3 ग्राम मैन्कोजेब या 3 ग्राम थाईरम प्रति किलोग्राम बीज की दर से उपचारित करना चाहिए। जहां अनावृत कण्डवा का प्रकोप हो वहां दो ग्राम कार्बेन्डेजियम प्रति किलोग्राम की दर से उपचारित करें।
- दीमक की रोकथाम के लिए प्रति 100 किलो बीज को क्लोरोपायरीफॉस 20 ईसी. 450 मिली. को 5 लीटर पानी में घोलकर उपचारित करे।
- 10 टन गोबर का सड़ा हुआ खाद प्रति हैक्टर की दर से बुवाई से 4 से 6 सप्ताह पहले डालें। इसके अतिरिक्त 60 किलो नत्रजन व 20 किलो फास्फोरस 45 किग्रा डीएपी + 65 किग्रा यूरिया प्रति हैक्टर काम में ले तथा नत्रजन की आधी एंव फास्फोरस व पोटाश की पूरी मात्रा बुवाई से पूर्व उर कर डाले। नत्रजन की शेष आधी मात्रा प्रथम सिंचाई के समय खड़ी फसल में छिटक कर देनी चाहिए।
- असिंचित क्षेत्रों में सभी उर्वरकों की पूरी मात्रा बुवाई के समय

ही दे।

- कान्तिक अवस्थाओं पर सिंचाई करे। प्रथम सिंचाई बुवाई के 30 –35 दिन बाद करें। द्वितीय सिंचाई 65–70 दिन बाद करें। तृतीय सिंचाई बुवाई के 70–80 दिन एंव चौथी सिंचाई 90–95 दिन पर करें।
- बुवाई के 30–35 दिन बाद निराई गुड़ाई कर खरपतवार निकाल दें।
- खड़ी फसल में दीमक की रोकथाम के लिए क्लोरोपरीयफॉस 20 ई.सी. 4 लीटर दवा प्रति हैक्टर सिंचाई के साथ दें।
- रोली रोग के लक्षण दिखाई देते ही गंधक का पाउडर 2.5 किलोग्राम प्रति हैक्टर सुबह या शाम भुरके या मैक्कोजेब 2–3 ग्राम /लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करें।
- मोल्या रोग रोधी किस्म आर.डी. 2052 एंव आर.डी. 2035 काम मे लेवे। रोग की रोकथाम के लिए फसल चक्र मे चना, सरसों, प्याज, सूरजमुखी, मैथी, आलू या गाजर की फसल बोयें।
- दाना पकने पर कटाई करें, उन्नत कृषि तकनीक अपनाकर सामान्यतः 40–45 क्विटल/है0 उपज प्राप्त की जा सकती है।

गेहूं की उन्नत खेती

- गेहूं की अधिकतम पैदावार के लिए बलुई दोमट, अच्छी उर्वरा व जलधारा क्षमता युक्त मिट्टी वाले सिंचित क्षेत्र उपयुक्त रहते है।
- हमेशा प्रमाणित बीज ही बोयेः उन्नत किस्मे– सामान्य बुवाई : पी. बी. डब्ल्यू 343, राज. 3077, राज 4037, पी.बी. डब्ल्यू 550, राज. 4120, राज. 4079, पछेती बवाई राज. 3777, राज. 3765, पी.बी. डब्ल्यू 373, राज. 4083, बारानी क्षेत्र : पी. बी. डब्ल्यू 175, सुजाता, क्षारीय व लवणीय क्षेत्र : राज. 3077, राज. 155.
- गेहू में सामान्य सिंचित फसल की बुवाई नवम्बर के प्रथम सप्ताह से नवम्बर के अन्त तक की जा सकती है। देरी से बुवाई दिसम्बर के मध्य तक की जा सकती है।
- सामान्य बुवाई के लिये 100 किलोग्राम बीज, जबकि देर से बुवाई एंव असिंचित क्षेत्र के लिये 125 किलोग्राम बीज प्रति हैक्टर की आश्यकता होती है।
- ईयर कोकल व टुण्डु रोग से बचाव के लिये रोग ग्रस्त बीज को 20 प्रतिशत नमक 5 लीटर पानी में 1 किलो नमक के घोल मे डुबोकर रोग ग्रस्त बीजों को निथार कर अलग कर दें।
- लवणीय मिट्टी व खारे पानी वाले क्षेत्रों में बीज को सोडियम सल्फेट के 3 प्रतिशत घोल 1.5 किलो सोडियम सल्फेट का 50 लीटर पानी मे घोल मे 24 घण्टे भिगोकर स्वच्छ पानी में धोकर सुखा कर बुवाई करें।
- बीज जनित रोगो से बचाव हेतु 2 ग्राम थाईरम या 2.5 ग्राम मेन्कोजेब या कार्बेन्डियम 2 ग्राम प्रति किलो बीज की दर से बीज पर समान रूप से छिडकाव उपचारित करे। बुवाई के काम मे लेवे।
- दीमक नियंत्रण हेतु 450 मीलीलीटर क्लोरोपायसरीफॉस 20 ई.सी. को आवश्यकतानुसार पानी मे घोलकर 100 किलो बीज पर समान रूप से छिडककर उपचारित करे।
- कम पानी की स्थिति मे 500 पी.पी.एम. थायोयूरिया 0.5 ग्राम/प्रति लीटर पानी के घोल मे बीज को 54 घंटे भिगोने के बाद छाया मे सुखाकर बुवाई करे।
- अन्त मे एजोटोबेक्टर जीवाणु कल्चर के तीन पैकेट से एक हैक्टर क्षेत्र के बीज के बीज को उपचारित कर बोये।
- संतुलित उर्वरक प्रयोग के लिये मिट्टी जांच के आधार पर ही उर्वरको का प्रयोग करें। सामान्यतः गेहूं मे बुवाई पूर्व 80 किलो डीएपी 70 किलो यूरिया विक्लप–1 या 220 किलो एसएसपी 100 किलो यूरिया विकल्प –2 प्रति हैक्टर उर्वरको की आवश्यकता होती है। 100 किलो यूरिया प्रथम सिंचाई के समय खडी फसल मे छिटक कर डालें।
- असिंचित गेहूं व तालाबी पेटा कास्त की भूमि मे उर्वरक की सारी मात्रा बुवाई से पूर्व सीधे भूमि में उर कर देनी चाहिए।
- जस्ते की कमी वाले क्षेत्रों मे बुवाई से पूर्व प्रति है 25 किलो जिंक सल्फेट या 10 किलो चिलेटेड जिंक नत्रजनीय उर्वरक के साथ मिलाकर देवे।
- दीमक एंव भूमि में रहने वाले अन्य कीडों की रोकथाम के लिये क्यूनालफॉस 1.5 प्रतिशत चूर्ण 25 किलो प्रति हैक्टर की दर से बीज बोने से पहले अन्तिम जुताई के समय खेत मे मिलाएं।
- **सिंचाई** : सामान्यः गेहू को भारी मिट्टी में 4–6 सिंचाई और हल्की मिट्टी में 6–8 सिंचाईयों की आवश्यकता होती है। फसल की क्रांतिक आवश्यकता शीर्ष जड़ जमने 20–25 दिन फुटान होते समय 45–50 दिन, गांठ बनते समय 65–70 दिन बालिया आने पर 85–90 दिन, दाने की दूधिया अवस्था पर 100–110 दिन तथा दाना पकते समय 115 से 120 दिन पर अवश्य सिंचाई करे।

- गेहूं की सिंचाई फव्वारा विधि द्वारा करने से लगभग40 प्रतिशत पानी की बचत होती है।
- **निराई–गुड़ाई:** प्रथम सिंचाई के 10 से 12 दिन के अन्दर कम से कम एक बार निराई–गुडाई कर खरपतवार अवश्य निकाल दे।
- चौड़ी पत्ती वाले खरपतवार को नष्ट करने के लिये बौनी किस्मों मे बुवाई के 30 से 5 दिन व अन्रू किस्मों मे 40 से 45 दिन के बीच 500 ग्राम 2–4 डी एस्टर साल्ट या 750 ग्राम 2–4 डी अमाइन साज्ट स्रयि तत्व नीदाशि रसायन प्रति हैक्टर की दर से 500–700 लीटर पानी मे घोलकर छिडकाव करे।
- रोली रोग के नियंत्रण का सर्वोतम उपाय रोली रोधक किस्मों राज. 3785, राज.3777, राज. 4037 किस्मों का प्रयोग करना है।
- अधिक तापमान से बचाव : गेहूं फसल में कल्ले निकलने एंव बालिया निकलने की उवस्था पर 100 पी.पी.एम. सेलीसाईलिक एसिड 1 ग्राम 10 लीटर पानी में घोलकर करे।

नराकास करनाल द्वारा वर्ष 2017 में आयोजित की गई गतिविधियां

क्रमांक	दिनांक	गतिविधि
1	28.1.2017	केन्द्रीय मृदा लवणता अनुसंधान संस्थान करनाल में नराकास के तत्वावधान में हिन्दी शब्दावली एवं वाक्यांश प्रतियोगिता का आयोजन कराया।
2	1.2.2017	सैनिक स्कूल कुंजपुरा कार्यालय में तिमाही रिपोर्ट आनलाइन प्रेषित करने में राजभाषा विभाग की वेबसाइट पर पंजीकरण में आ रही समस्याओं का निराकरण करवाया।
3	3.2.2017	यूनियन बैंक ऑफ इण्डिया करनाल क्षेत्रीय कार्यालय में हिंदी कार्यशाला आयोजित करवाई।
4	15.2.2017	एम.एस.एम.ई. विकास संस्थान कार्यालय का औचक निरीक्षण एवं संस्थान के निदेशक महोदय एवं राजभाषा अधिकारी से वार्तालाप कर नराकास करनाल की वैबसाइट को पुनः एक्टिवेट कराने के संबंधी में कार्रवाई शुरू की।
5	20.2.2017	जवाहर नवोदय विद्यालय, सग्गा, करनाल में नराकास निरीक्षण किया एवं हिन्दी कार्यशाला आयोजित करवाई।
6	22.2.2017	पंजाब नैशनल बैंक, मंडल कार्यालय, सेक्टर 12, करनाल द्वारा नराकास के तत्वावधान में आयोजित की गई यूनिकोड हिन्दी कंप्यूटर टाइपिंग प्रतियोगिता को आयोजित करवाया।
7	8.3.2017	संस्थान में राजभाषा ज्ञान लिखित प्रतियोगिता में 20 प्रतिभागियों ने बढ़–चढ़ कर भाग लिया।
8	9.3.2017	संस्थान में ''बसन्त का पैगाम, राजभाषा हिन्दी के नाम '' बैनर तले राजभाषा संगोष्ठी का आयोजन किया गया जिसमें 55 प्रतिभागियों ने भाग लिया।
9	10.3.2017	संस्थान में हिन्दी कार्यशाला का आयोजन किया गया जिसमें 47 प्रतिभागियों ने भाग लिया।
10	10.3.2017	पंजाब एण्ड सिंध बैंक, अंचल कार्यालय, करनाल में हिन्दी कार्यशाला आयोजित करवाई।

28 पाले में रबी फसलों का बचाव

विजेन्द्र कुमार मीना, बुद्धि प्रकाश मीना[1], उत्तम कुमार, राकेश कुमार, मगन सिंह, राजेश कुमार मीना एंव हरदेव राम

शस्य विज्ञान अनुभाग, भाकृअनुप-राडेअस, करनाल-132001

[1] कृषि विभाग, राजस्थान सरकार, सवाईमाधोपुर

भारत में हरित क्रांति के समय से अधिक उपज देने वाली किस्मों, उर्वरकों के साथ साथ सघन खेती के कारण विभिन्न फसलों के उत्पाद में निरंतर वृद्धि हुई है, लेकिन कभी कभी कुछ भौगोलिक परिस्थितियां विपरीत होने पर जैसे अतिवृष्टि, अनावृष्टि से फसलों को बहुत ज्यादा नुकसान हो जाता है। जैसे की सर्दी के मोसम में पड़ने वाला पाला व दाह आदि।

पाला / दाह :— सर्दियों के मौसम में अचानक तापमान में गिरावट आने से पाला पड़ता है। पाला पड़ने से फसलों की शारीरिक क्रियायें एवं उत्पादकता प्रभावित होती है।

पाले से होने वाले नुकसानः— जब पाला या दाह पडता है। जब वातावरण का तापमान जमाव बिन्दु से नीचे पहुँच जाता है जिससे पौधो की कोशिकाओ के अन्दर का पानी जम जाता है तथा कोशिकाओं की दीवारों का पानी भी निकल कर अन्दर चला जाता है। जिससे कोशिकाओं सिकुड़ जाती है। सुबह के समय जब धूप निकलती है तों कोशिकाओं का जमा हुआ पानी पिघलता है। और तेजी से वापस कोशिकाओं की दीवारों में जाने लगता है। जिससें कोशिकायें फट जाती है। फलस्वरूप पौधा मर जाता है। अगर पाले का कम असर होता है तों पौधा मुरझा जाता है। तथा कुछ समय बाद पौधे पुनः स्वस्थ दिखने लगता है।

पाले से बचावः— रबी की फसलों को पाले से नुकसान होता है। खड़ी फसल में सिंचाई, खाद एंव उर्वरक खरपतवार नियंत्रण व पौधा सुरक्षा के साथ साथ यह भी आवश्यक होता है। कि फसल को पाले से भी बचाने के उपाय किये जावें।

मोसम की जानकारी प्रतिदिन आकाशवाणी से किसानों को दी जाती है या किसान भाई भी स्वंय अनुमान लगा लेते है। उस समय कुछ ऐसी क्रियायें काम में लगाकर फसलों को काफी हद तक बचाया जा सकता है। जैसे कि क्रमशः

- खेत को सिंचित करना।
- धुआं करना।
- रसायनों का छिड़काव करके।
- पालेरोधी फसलों का चयन करके।

1. खेत को सिंचित करनाः—

प्रयोगो में यह देखा गया है कि सिंचित क्षेत्रों की अपेक्षा बारानी क्षेत्रों में दाह का असर अधिक होता है। क्योंकि जमीन का तापक्रम पानी की अपेक्षा अधिक बदलता है। जब खेत में सिचाई की जाती है, तो उस जमीन का तापमान अधिक नही गिर पाता है। जिससे हल्के दाह पाला का फसल पर बहुत कम प्रभाव पड़ताा है। अगर पाला अधिक पड़ता है, उस समय सिचाई से विशेष लाभ नहीं होता है। दूसरे सभी स्थानों पर सिचाई साधन की उपलब्ध नही होती है।

2. धुआं करनाः—

यह भी एक क्रिया है जिससे निश्चित रूप से यह नही कहा जा सकता कि फसल को पूर्णरूप से पाले से बचा सकते हैं। क्यो कि धुआं अधिक समय तक फसल के ऊपर नी रूक पाता है वैसे धुआं करने के लिए जल्दी सुबह करीब 1—2 बजे ही खेत मे पाले के समय कूडा करकट इकठ्ठा करके धुआं कर देते है। जिससे धुआं की एक पर्त सी फसल के ऊपर छा जाती है जो कि कम्बल का कार्य करती है। इससे तापमान भी अधिक नही गिर पाता है।

3. रसायनों का छिड़काव करकेः—

- ऐसी कई रासायनिक दवाईयां है, जिसके छिड़काव से फसल का पाले से बचाने में काफी मदद मिलती है। जैसे डाईमिथाइल सल्फेआक्साइड (डी.एम.एस.ओ.) का 78 ग्राम 750से 1000 लीटर पानी में घोल कर फसल में 50 प्रतिशत फूल आने पर छिड़काव करे तथा इसी छिड़काव को 10 से 15 दिन बाद दोबारा करे।
- दूसरा साइकोसेल नामक दवा का 2 लीटर पानी में घोलकर गेहूँ में कल्ले फूटने व बालियॉ निकलते समय छिडकाव करने से काफी लाभ होता है। लेकिन दोनो दवाईयाँ काफी

महंगी है। तथा आसानी से बाजार में मिलती भी नही है।

- अतः किसान भाईयों को सस्ती दवाईयों का उपयोग करना चाहिए। जैसे गंधक तेजाब इसका 0.1 प्रतिशत घोल यानि कि 1 लीटर गंधक का तेजाब 1000 लीटर पानी में घोल बना कर जब दाह लगने की संभावना हो या फसल में 50 प्रतिशत फूल आने पर पहला छिड़काव कर देवें तथा 10 से 15 दिन बाद पुनः दोहरावें। यह छिड़काव अधिकतर फसलों के लिए लाभदायक है। दूसरा एक किलोग्राम ग्लूकोज को 1000 लीटर पानी में घोलकर खासतौर से अफीम की फसल के ऊपर फूल आते ही छिड़काव कर देवें तथा 10 से 15 दिन बाद यही छिड़काव पुनः दोहरावें तो अफीम की फसल को पाले से बचाया जा सकता है।

4. पाले रोधी फसलों का चयनः

जहां पाले से अधिक नुकसान होता है। वहां ऐसी फसलों का चयन करना चाहिए जिन पर पाले का बहुत कम प्रभाव पड़ता है। जैसे गेहूँ, जौ, गन्ना, चकुन्दर, गाजर, मूली आदि लेकिन कुछ फसलों को पाले से बहुत अधिक नुकसान होता है। जैसे आलू, अफीम, चना, मटर, सरसों, अरहर व टमाटर आदि अगर ऐसी फसलें बोनी पड़े जिन पर पाले का असर अधिक होता है । उनकी पाले के प्रति सहनशील किस्में प्रयोग में लावें जैसे आलू की कुफरी शीतमान, कुफरी, चन्द्रमुखी तथा अरहर की पूसा शारदा व पूसा अगेती परन्तु अभी सभी फसलों के लिए पालेरोधी किस्में उपलब्ध नही हैं।

5. अन्य कृषि क्रियायें:–

सिंचाई व धुआं के अलावा जैसे आलू आदि को पाले से बचाने के लिए जल्दी सुबह करीब 3 से 4 बजे खेत में जाकर पौधों को हिलाकर उनके ऊपर लगे पाले को नीचे गिरा देते है। इसके लिए दो आदमी एक रस्सी के दोनों किनारों को पकड़ कर खेत में आलू के पौधों छूते हुए घुमाते है। इसके अलावा लम्बें बांस का भी प्रयोग कर सकते है। ऐसा करने से फसल की पत्तियों पर जमा पाला जमीन पर गिर जाता है। ऐसा करने से फसल को अधिक नुकसान नहीं होता है। इस प्रक्रिया को किसान भाइयों को जब तक दोहराना पड़ेगा तब तक पाला पड़ता रहेगा है। यह विधि हर फसल के लिए लागू नहीं होती है। जैसे सरसों आदि क्योकि इस तरह से पौधों को हिलाने से फसल में फूल भी झड़ जाते हैं। इसके अलावा फसलों को पाले से बचाने के लिए बुवाई के समय में परिवर्तन करके सुरक्षा की जाती है। जिस समय पाला पड़ना शुरू होता है। उस समय अधिकतर फसलों में फूल आने शुरू हो जाते हैं। और पाले से सबसे अधिक नुकसान भी फूलों को ही होता है। अतः फसलों की ऐसे समय पर बुवाई करें कि पाला पड़ने के समय तक उनमें निषेचन की क्रिया पूरी हो चुकें। जेसे तोरिया व तारामीरा को सितम्बर के अन्तिम सप्ताह तक बुवाई कर दे, आलू व चना के लिए अक्टुबर का प्रथम सप्ताह तथा सरसों व मटर के लिए अक्टुबर का दूसरा सप्ताह अधिक उपयुक्त रहता है।

29 फसलों में पोषक तत्व एवं उर्वरक प्रबंधन

मालु राम यादव, राजेश कुमार मीना, हरदेव राम, राकेश कुमार एवं मगन सिंह

भाकृअनुप - राष्ट्रीय डेरी अनुसंधान संस्थान, करनाल-132001

फसलें अच्छी बढ़वार और भरपूर उत्पादन के लिए जमीन से अपनी खुराक के रूप से 10 पोषक तत्व लेती है। जबकि 3 पोषक तत्व हवा तथा जल से मिलल जाते हैं। जमीन में इन सभी तत्वों की पर्याप्त मात्रा उपलब्ध होनी चाहिए। इन सभी पोषक तत्वों में से यदि एक भी पोषक तत्व की अधिकता या कमी हो जाये तो जमीन में फसलों की खुराक असंतुलित हो जाती है। इसलिए इन सभी आवश्यक पोषक तत्वों की समानुपातिक मात्रा को बनाये रखने के लिए भूमि में खाद एंव उर्वरक डालने की जरूरत पड़ती है। इस प्रकार जमीन में पोषक तत्वों की आपूर्ति कर खुराक को संतुलित किया जाता है।

आवश्यक पोषक तत्वों की कमी के लक्षणः—

- बोरॉन—नई पतियां गुच्छों का रूप ले लेती है, डंठल, तना एंव फल, फटने लगते है।
- सल्फर—नई पत्तियों का रंग हल्का हरा पीला पड़ने लगता है। दलहनी फसलों की गांठे कम बनती है।
- मैंग्नीज—नई पत्तियों की शिरायें भूरी रंग की तथा पत्तियां पीले से भूरे रंग में हो जाती हैं।
- जिंक—पुरानी पत्तियों पर हल्के पीले धब्बे दिखते हैं। शिरा के दोनों और रंगहीन पट्टी कमी का लक्षण है।
- मैग्नीशियम :— पुरानी पत्तियों की नसें हरी रहती हैं, लेकिन उनके बीच का स्थान पीला पड़ जाता है। पत्तियाँ छोटी व सख्त हो जाती है।
- फास्फोरस :— पत्तियों या तनों पर लाल या बैंगनी रंग आ जाता है। जड़ों के फैलाव में कमी हो जाती है।
- कैल्शियम :— नई पत्तियां पीली अथवा गहरी हो जाती हैं। पत्तियों का आकार छोटा हो जाता है।
- आयरनः— नई पत्तियों की शिराओं के बीच का भाग पीला हो जाता है। अधिक कमी पर पत्तियां हल्की सफेद हो जाती है।
- कॉपरः— पत्तियों की शिराओं की चोटी पर छोटी एंव मुड़ी हुई हल्की हरी पीली हो जाती है।
- मोलिबडिनमः— पत्तियों के किनारे झुलस या मुड़ सकते हैं या कटोरी का आकार ले सकते हैं।
- पोटेशियमः— पुरानी पत्तियों के किनारे पीले पड़ जाते हैं, और पत्तियां बाद में भूरी झुलसी हुई हो जाती हैं।
- नाइट्रोजनः— पुरानी पत्तियों का रंग पीला पड़ जाता है। अधिक कमी होने पर पत्ती भूरी होकर सूख जाती है।

फसलों में संतुलित खुराक की आवश्यकता

जमीन के स्वास्थ्य में गिरावटः—

लगातार एक ही तरह के उर्वरकों का इस्तेमाल करते रहने के कारण भूमि में लवणीयता, क्षारीयता आदि समस्याऐं पैदा हो गई है। भूमि की उत्पादकता में गिरावट आ गई हैं और जमीन की भौतिक एंव रासायनिक दिशा बिगड़ गई है।

फसलों के स्वास्थ्य पर हानिकारक प्रभावः—

कुछ विशेष पोषक तत्वों की कमी हो जाने पर उनकी कमी के लक्षण फसलों पर बीमारी के रूप में दिखलाई देते हैं।

गंधकः— गंधक तत्व की कमी होने पर फसल में पीलिया रोग हो जाता है। इस रोग के होने पर नई पत्तियां आकार में छोटी व पीली पड़ जाती हैं।

जस्ताः— मक्का में जस्ते की कमी होने पर पत्तियों की शिराओं के बीच पीली धारियां पड़ जाती हैं जो बाद में सफेद रंग की हो जाती हैं।

लोहाः— पौधों में लोहे की कमी के लक्षण सबसे पहले नई पत्तियों पर दिखाई देते है। नई पत्तियां पीली सफेद अथवा सफेद रंग की हो जाती है।

संतुलित खुराक पूर्ति के उपायः—

1. अपने खेत की मिट्टी जांच करावेंः— फसलों को संतुलित खुराक देने के लिए सर्वप्रथम मिट्टी की जांच आवश्यक हैं क्योंकि फसल को कितनी मात्रा में पोषक तत्वों की आवश्यकता

है तथा भूमि में इन पोषक तत्वों की कितनी उपलब्धता है। इन सभी प्रश्नों के समाधान के लिए ही मिट्टी जांच कराना आवश्यक है।

2. खुराक की पूर्ति सभी उपलब्ध संसाधनों के समन्वय द्वारा करें:– इस बात को समझने के लिए आवश्यक है कि किसी एक पोषक तत्व की पूरीर मात्रा की पूर्ति केवल एक साधन द्वारा नहीं करनी है। उदाहरण के लिए नत्रजन तत्व की पूर्ति केवल यूरिया डालकर भी की जा सकती हैं लेकिन ऐसा करने से भूमि के स्वास्थ्य पर प्रतिकुल असर होता हैं और धीरें धीरें जमीन की पैदावार क्षमता कम हो जाती है। इसलिए जमीन की पैदावार क्षमता को बढ़ाना हैं तो फसल की खुराक की पूर्ति के लिए हमें उपलब्ध कार्बनिक, अकार्बनिक तथा जैव संसाधनों को तर्कसंगत तरीके से उपयोग में लाना है।

(अ) जैविक खादों का प्रयोग:–

जैविक खादों का उपयाग करने फसलों को सभी पोषक तत्वों की संतुलित मात्रा मिल जाती हैं, मृदा संरचना अच्छी हो जाती है तथा मिट्टी में लाभकारी जीवों की संख्या बढ़ जाती हैं जो जमीन की उपजाऊ शक्ति बढ़ाने में मदद करते है। मुख्य रूप से फसलों के लिए जैविक खादों में निम्नलिखित पदार्थों को शामिल किया गया है।

1. हरी खाद:– हरी खाद के रूप में ढेंचा, सनई, गवार आदि फसलों को हरी उवस्था में खेत में दबा देते हैं और पानी भरकर सड़ने देते हैं।

2. गोबर खाद व कम्पोस्ट खाद :– कम्पोस्ट खाद तैयार करने के निम्नलिखित तरीकों में से किसान अपनी सुविधानुसार अपनाकर काम में ले सकते हैं।

सुपर कम्पोस्टर

नेडेप कम्पोस्ट:– इस विधि में गडढे के स्थान पर जमीन के उपर ईटों का टांका बनाया जाता है। टांके के अंदर हवा का आवागमन बनाये रखने के लिये दीवार पर छेद छोड़े जाते हैं।

वर्मी कम्पोस्ट:– केंचुओं से तैयार खाद वर्मी कम्पोस्ट कहलाती है। केंचुए की ईपीगीज प्रजाति जीवांश पदार्थ को खाकर अच्छी कम्पोस्ट खाद बनाती है।

प्रोम जैविक खाद:– प्रोम जैविक खाद बनाने में गोबर की खाद तथा रॉक फॉस्फेट पाउण्डर काम में लिया जाता है। फसलों को फास्फोरस तत्व की आपूर्ति के लिए उपयोग में लिये जाने वाले उर्वरकों जैसे सुपर फास्फेट व डीएपी के विकल्प के रूप में प्रोम को अपनाया जा सकता है।

खली :– तेल वाली फसलों से तेल निकालने के बाद खलियों का इस्तेमाल खाद के रूप में किया जा सकता है। जैसे नीम की खली, अरण्डी की खली, मूंगफली की खली, करंज की खली, रतनजोत की खली आदि।

(ब) जैव उर्वरकों का प्रयोग (बायो फर्टीलाईजर्स)

नत्रजन तत्व की पूर्ति हेतु

राइजोबियम कल्चर

दलहनी फसलों के लिए राइजोबियम कल्चर का प्रयोग करें। एक हैक्टेयर क्षेत्र के लिए 200 ग्राम के तीन पैकेट बीज से बीज उपचारित करें।

एजेटोबेक्टर एंव एजोस्पाइरीलम कल्चर

बिना दाल वाली सभी फसलों के लिए उपरोक्तानुसार काम में लेवें। रोपाई वाली फसलों के लिए 10 लीटर पानी में 2 पैकेट कल्चर घोल में 15 मिनट पौधे की जड़ों को डुबोकर रोपाई करें।

फास्फोरस को घुलनशील बनाने हेतु:–

पीएसबी कल्चर:– रासायनिक उर्वरकों द्वारा दिये गये फास्फोरस का बहुत बड़ा भाग जमीन में अघुलनशील होकर फसलों को मिल नहीं पाता हैं। पीएसबी कल्चर फास्फोरस को घुलनशील बनाकर फसलों को उपलब्ध कराता है। बीजोपचार उपरोक्तानुसार करें या 2 किलों (10पैकेट) कल्चर को 100 किलो गोबर की खाद में मिलाकर खेत में मिला देवें।

वैम कल्चर :– वैम कल्चर फास्फोरस के साथ साथ दूसरे सभी तत्वों की उपलब्धता बढ़ा देता है। बीजोपचार उपरोक्तानुसार करें।

(स) अकार्बनिक पदार्थ एंव रासायनिक उर्वरकों का प्रयोग:–

पोषक तत्वों की पूर्ति हेतु मुख्य रूप से उपयोग में आने वाले उर्वरक निम्नलिखित हैं–

उर्वरक का नाम	उपस्थित पोषक तत्व	उपयोग का तरीका
यूरिया	नत्रजन 46 प्रतिशत	बुवाई के समय कूड़ों में डालें तथा खड़ी फसल में बिखेरकर देवें या 2 प्रतिशत घोल का छिड़काव करें।
कैन	नत्रजन 26 प्रतिशत केल्शियम 20 प्रतिशत	बुवाई के समय कूड़ों में डाले तथा खड़ी फसल में बिखेरकर देवें।
अमोनियम सल्फेट	नत्रजन 20.6 प्रतिशत सल्फर 23 प्रतिशत	बुवाई के समय कूड़ों में उरकर देवें।
अमोनियम फास्फेट	नत्रजन 16 प्रतिशत	बुवाई के समय कूड़ों में उरकर देवें।
सल्फेट	फास्फोरस 20 प्रतिशत सल्फर 13 प्रतिशत	
एस.एस.पी.	फास्फोरस 16 प्रतिशत सल्फर 11 प्रतिशत केल्शियम 21 प्रतिशत	बुवाई के समय कूड़ों में उरकर देवें।
डीएपी	फास्फोरस 46 प्रतिशत नत्रजन 20 प्रतिशत	बुवाई के समय कूड़ों में उरकर देवें।
नाइट्रोफॉस	फास्फोरस 20 प्रतिशत नत्रजन 20 प्रतिशत	बुवाई के समय कूड़ों में उरकर देवें।
म्यूरेट ऑफ पोटाश	पोटाश 60 प्रतिशत	बुवाई के समय कूड़ों में उरकर देवें।
पोटाशियम सल्फेट	पोटाश 50 प्रतिशत सल्फर 17.5 प्रतिशत	बुवाई के समय कूड़ों में उरकर देवें।
एनपीके	नत्रजन 12 प्रतिशत फास्फोरस 32 प्रतिशत पोटाश 16 प्रतिशत	बुवाई के समय कूड़ों में उरकर देवें।
जिंक सल्फेट हेप्टाईड्रेट	जिंक 21 प्रतिशत सल्फर 10 प्रतिशत	25 किलोग्राम प्रति हैक्टेयर बुवाई के समय खेत में मिलाकर देवें या खड़ी ़सल में 0.5 प्रतिशत जिंक सल्फेट 0.25 प्रतिशत चूना घोल का छिड़काव करें।
जिंक चिलेट	जिंक 12 प्रतिशत	10 किलोग्राम प्रति हैक्टेयर बुवाई के समय खेत में मिलाकर देवें।
कैरस सल्फेट	लोहा 19 प्रतिशत सल्फर 10.5 प्रतिशत	15 किलोग्राम प्रति हैक्टेयर बुवाई के समय खेत में मिलावें या सल्फर खड़ी फसल में 0.4 प्रतिशत फोरस सल्फेट + 0.2 प्रतिशत चूना घोल बनाकर छिड़काव करें।
कॉपर सल्फेट	तांबा 24 प्रतिशत सल्फर 12 प्रतिशत	खड़ी फसल में 0.2 प्रतिशत कॉपर सल्फेट + 0.1 प्रतिशत चूना घोल बनाकर छिड़काव करें।
बोरेक्स	बोरोन 10.5 प्रतिशत	बोरेक्स पाउडर बुवाई के समय 5 से 10 किलोग्राम प्रति हैक्टेयर
प्राकृतिक पदार्थ		
जिप्सम	सल्फर 13 प्रतिशत केल्शियम 19 प्रतिशत	बुवाई के समय 250 किलोग्राम प्रति हैक्टेयर उरकर देवें।
रॉक फास्फेट	फास्फोरस 18 प्रतिशत	देशी खाद के साथ सड़ाकर बुवाई से पूर्व खेत में डालें।

30 स्वयं सहायता समूह के माध्यम से माइक्रोफाइनान्स : खेती के लिए एक व्यावहारिक विकल्प

[1]डेन्नी फ्रान्सको, [1]बुलबुल जी नगराले और [2]ए.के. चौहान

[1]पी.एच.डी. शोध छात्र, भाकृअनुप - राष्ट्रीय डेरी अनुसंधान संस्थान, करनाल
[2]प्रधान वैज्ञानिक, भाकृअनुप - राष्ट्रीय डेरी अनुसंधान संस्थान, करनाल

समावेशी विकास – यह दुनिया भर की सभी नयी सरकारों के लिए एक नई अवधारणा है। समावेशी विकास का सपना तभी पूरा किया जा सकता है, जब सरकार सभी गरीब जो औपचारिक और वाणिज्य वित्तीय प्रणाली के अनुसार क्रेडिट के योग्य नहीं माने जाते हैं, उन्हें शामिल करें। इस पृष्ठभूमि में माइक्रोफाइनांस एक बड़े रक्षक के रूप में सामने आया है जो उन्हें कम से कम तत्काल और बुनियादी आवश्यकताओं को पूरा करने में सक्षम है। **माइक्रोफाइनांस** – यह उद्यमी व छोटे व्यवसायों के लिए वित्तीय सेवकों का स्त्रोत हैं, जिनके लिए बैंकिंग व अन्य सुविधायें उपलब्ध नहीं होती है इस तरह के ग्राहकों के लिए वित्तीय सेवाओं के दो मंत्र हैं – 1) रिश्तों पर आधारित बैंकिंग 2) कई उद्यमियों को एक साथ लाकर समूह आधारित मॉडल। स्वयं सहायता समूह के माध्यम से माइक्रोफाइनांस अंतरराष्ट्रीय स्तर पर गरीबी का मुकाबला और ग्रामीण विकास के लिए एक आधुनिक उपक्रम के रूप में सामने आया है। इसकी सफलता का प्रमाण हम 1976 में बांग्लादेश में मुहम्मद युनुस के नेतृत्व में चलने वाले एसएसजी के माध्यम से देख चुके हैं।

विभिन्न मॉडल :

1. बैंकों द्वारा प्रवर्तित और स्वयं द्वारा जुड़े
2. गैर सरकारी संघटन व अन्य एस एज जी संस्थाओं द्वारा प्रवर्तित और सीधे बैंकों द्वारा जुड़े
3. गैर सरकारी संघटन व अन्य एस एज जी संस्थाओं द्वारा प्रवर्तित और उन्हीं के द्वारा वित्तीय सहायता जो उन्हें द्वारा उपलब्ध होती है।

स्वयं सहायता समुह के माध्यम से माइक्रोफाइनांस : खेती के लिए एक व्यवहारिक विकल्प सहायता समूह यह एक छोटा समूह होता है, जो गरीब लोग अपनी स्वेच्छा से बनाते है और जो आर्थिक और सामाजिक रूप से समान हो। इसका उद्देश्य लोगों की अपनी आम समस्याओं को आपसी मदद के माध्यम से हल करना है। यह समूह अपने सदस्यों में बचत की भावना को बढ़ावा देता है और इस धन को सहायता समूह के नाम से बैंक में जमा किया जाता है। इस तरह सामूहिक निधि लघु बचत के माध्यम से सभी सदस्यों द्वारा नियमित रूप से जमा किया जाता है। समूह निधि को ऋण के रूप में मामूली ब्याज दर पर अपने सदस्यों को दिया जाता है। ऋण की राशि कम और छोटी अवधि के लिए दी जाती है और जिसका ब्याज दर सामान्य दर की तुलना में कम होता है। यह महीनों की अवधि के बाद यदि समूह का कामकाज संतोषजनक पाया गया तो वह सरकारी योजनाओं का लाभ उठाने का पात्र माना जाता है। एसएजजी का लेन–देन कम लागत व कम जोखिम का माना जाता है।

भारत में माइक्रोफाइनांस की स्थिति : भारत में कुल 74 लाख एस एज जी का गठन किया गया है। इन में से करीब 37 लाख देश के दक्षिण भाग में केंद्रित हैं।

	2009-10	2010-11	2011-12	2012-13	2013-14
Northern	3.52	3.73	4.09	3.73	3.65
North Eastern	2.92	3.25	3.67	3.24	3.16
Eastern	13.74	15.27	16.26	14.71	14.69
Central	7.66	7.86	8.13	7.02	6.86
Western	9.46	9.61	10.62	9.06	8.97
Southern	32.23	34.89	36.83	35.41	36.96
Total	**69.53**	**74.61**	**79.60**	**73.17**	**74.29**

Region	No. of SHGs financed by banks during the year (No. Lakh)				
	2009-10	2010-11	2011-12	2012-13	2013-14
Northern	0.37	0.42	0.31	0.31	0.24
North Eastern	0.49	0.39	0.51	0.25	0.16
Eastern	2.77	2.48	2.01	1.83	2.97
Central	0.78	0.49	0.58	0.64	0.66
Western	1.49	0.92	1.01	0.70	0.88
Southern	9.96	7.26	7.05	8.46	8.75
Total	**15.86**	**11.96**	**11.47**	**12.19**	**13.66**

Region	Savings deposit with/Credit outstanding from banks (No. Lakh)									
	2009-10		2010-11		2011-12		2012-13		2013-14	
	Savings	Credit	Savings	Credit	Savings	Credit	Savings	Credit	Savings	Credit
Northern	342	815	329	903	253	1178	291	1161	283	1101
North Eastern	121	673	131	695	153	993	130	797	129	754
Eastern	1120	3695	1408	4203	947	4630	1393	5538	1527	4944
Central	514	2463	603	2365	613	2780	624	2776	790	2697
Western	927	1369	829	1246	872	1364	696	1468	930	1640
Southern	3174	19023	3716	21809	3713	25395	5083	27635	6238	31791
Total	**6198**	**28038**	**7016**	**31221**	**6551**	**36340**	**8217**	**39375**	**9897**	**42927**

Region	Credit to Savings ratio					
	2009-10	2010-11	2011-12	2012-13	2013-14	Avg. of Last 5 Years
Northern	2.38	2.74	4.66	3.99	3.89	3.53
North Eastern	5.56	5.31	6.49	6.13	5.84	5.87
Eastern	3.30	2.99	4.89	3.98	3.24	3.68
Central	4.79	3.92	4.54	4.45	3.41	4.22
Western	1.48	1.50	1.56	2.11	1.76	1.68
Southern	5.99	5.87	6.84	5.44	5.10	5.85
Total	**4.52**	**4.45**	**5.55**	**4.79**	**4.34**	**4.73**

स्वयं सहायता समूह का उद्देश्य :

1. गरीब लोगों की भलाई को बढ़ाना।
2. सदाशयों में आत्मविश्वास, आत्मसम्मान और जीवन के सभी पहलुओं में उनकी जिम्मेदारी में वृद्धि करना।
3. जो बहुत गरीब है और जो औपचारिक वित्तीय संस्थाओं तक नहीं पहुंच सकते उनके लिए एकक के रूप में कार्य करना।
4. सदाशयों को एक दूसरे को सहयोग करने व एक समूह के रूप में काम करने में सक्षम बनाना।
5. अपने सदाशयों को छोटे ऋण के लिए प्रभावी वितरण प्रणाली प्रदान करना।

स्वयं सहायता समूह का गठन और विकास :

स्वयं सहायता समूह अपने गठन से लेकर परिपक्वता तक कई चरणों से गुजरते हैं। जैसे फार्मिंग, स्टॉर्मिंग, नॉरमिंग और पर्फामिंग, जिसमें विशेष ध्यान देने के आवश्यकता होती है।

फॉर्मिंग : इस चरण का मुख्य उद्देश्य आत्मनिर्भर व कामयाब समूह स्थापित करना है। समूह की गठन कर प्रक्रिया में गैर सरकारी संगठन, बैंक और जिला ग्रामीण विकास एजेन्सी द्वारा बढ़ावा दिया जाता है।

स्ट्रोअमिंग – इस चरण में संवेदीकरण की प्रक्रिया होती है। समूह के सदस्यों को स्वयं सहायता के सिद्धांतों के बारे में प्रेरित किया जाता है। चरण में प्रचलित संघर्ष और समूह के सदस्यों के बीच विचारों के भ्रम को व्यक्त किए जाने की अनुमति दी जाती है।

नोरमिंग : इस चरण में समूह अधिक एकजुट हो जाते है और विकास के रूप में धीरे–धीरे व्यक्तिवादी प्रवृति से बदलकर वृति प्रस्थापित हो जाती है।

पर्फॉर्मिंग : इस अंतिम चरण में नेतृत्व की स्थापना, भूमिका स्पष्टता और एक समूह के रूप में कार्य करने के लिए तैयार हो जाता है। सामूहिक कार्रवाई की मदद से और एकीकृत रूप से

व्यवहार करते हैं, जिससे वह ध्येय को प्राप्त कर सकें।

एसएचजी का कार्यकरण

एसएचजी का आकार : एक समूह को बनाने के लिए न्यूनतम 10 सदस्यों की आवश्यकता होती है एवं अधिकतम 20 सदस्यों की अनुमति होती है।

सदस्यता

सदस्य गरीबी रेखा के नीचे होना चाहिए। एक समूह में एक परिवार से केवल एक व्यक्ति शामिल हो ताकि अधिक से अधिक परिवार इस आन्दोलन में शामिल हो सकें। सदस्य आम तौर पर एक ही गॉव से होते हैं ताकि संचार में आसानी हो।

समूह के नेता का चुनाव –

नेता का चुनाव लोकतांत्रिक तरीके से समूह के सदस्यों में से होता है। नेता का कार्य बैठकें बुलाना और रिकॉर्ड को बनाना होता है।

समूह की बैठक

बैठक साप्ताहिक या कम से कम मासिक आयोजित की जाती हैं, जिसमें एक दूसरे की कठिनाइयों को और बेहतर तरीके से समझने में मदद मिलती है।

खाता

सभी अकाउंट सरल एवं लेन देन के लिए रखे जाते हैं। यदि सदस्य रिकॉर्ड बनाए रखने में सक्षम नहीं है तो वह बाहरी व्यक्ति से लाभ ले सकते हैं और इसके लिए भुगतान करते हैं।

एक स्वयं सहायता समूह द्वारा रखे जाने वाले रजिस्टर

मिनिट किताब : सदस्यों के नाम, नियम और विनियम, बैठक की कार्रवाई आदि इस किताब में दर्ज की जाती है।

बचत और बिल रजिस्टर

व्यक्तिगत बचत और समूह बचत इस पुस्तक में दर्ज की जाती है।

साप्ताहिक रजिस्टर

समूह की बैठक

प्राप्ति और भुगतान का सारांश इस पुस्तक में रखा जाता है।

सदस्यों की पासबुक

व्यक्तिगत बचत और बचत ऋण नियमित रूप से यहॉं दर्ज की जाती है।

''पहले बचत–क्रेडिट बाद में'' स्वयं सहायता समूह का आदर्श वाक्य है। स्वयं सहायता समूहों को पहले ऋण प्राप्त करने के लिए अपनी बचत क्षमता दिखानी पड़ती है। एफएसजी के नाम से खाता खोलने के लिए सहमति पत्र जिसमें सभी सदस्यों के हस्ताक्षर हों, इसकी जरूरत पड़ती है। बैंक में सहमति पत्र, आवेदन फॉर्म व नियमों के दस्तावेज जमा करने पड़ते हैं।

ऋण के प्रकार

आंतरिक ऋण

बचत खाते के न्यूनतम दो–तीन महीने के बाद समूह अपने सदस्यों को पूर्व निर्धारित ब्याज दर पर ऋण उपलब्ध कर सकता है। आम तौर पर यह ऋण उत्पाद के साथ ही खपत प्रयोजना के लिए भी प्रति माह दो चार प्रतिशत ब्याज दर से उपलब्ध कराई जाती है।

बाहरी ऋण

अगर चार महीने बाद समूह अपनी विश्वसनीय क्षमता दिखा सके तो वह बाहरी ऋण लेने के लिए सक्षम माने जाते हैं। ऋण की मात्रा आम तौर पर समूह की बचत राशि से एक से चार गुना अधिक हो सकती है। कभी यह इससे भी अधिक हो सकती है। यदि बैंक समूह के व्यवहार से सन्तुश्ट हो।

ऋण की चुनौती

समूह बाह्य ऋण के पुनर्भुगतान के लिए सामूहिक रूप से जिम्मेदार होता है। एक छोटी और नियमित चुनौती राशि समूह द्वारा तय की जाती है। साथियों का दबाव समर्थन, सहकर्मियों की निगरानी इत्यादि डिफॉल्टर को हतोत्साहित करते हैं।

माइक्रो फाइनांस संस्थायें

देश में कई औपचारिक और अनौपचारिक संस्थायें हैं, जो गरीब लोगों को वित्तीय सहायता उपलब्ध कराती हैं। संस्थायें जैसे गैर सरकारी संगठन, एसएजी का संगठन, सहकारी संस्थायें व नैशनल बैंकिंग फाइनेंशियल कंपनियां यह माइक्रो फाइनेंस की संस्थायें हैं।

इंडस्ट्रियल डेवलपमेंट बैंक

यह सर्वोच्च स्तर के माइक्रों फाइनांस संस्थायें हैं व राष्ट्रीय महिला कोष शीर्ष स्तर की संस्था है।

अतः स्वयं सहायता समूह के माध्यम से यह पता चलता है कि गरीब लोगों को रियायती दर पर ऋण देने के बजाय यदि उन्हें वित्तीय सहायता उनके उद्योग के लिए उपलब्ध कराई जाए तो वह कुशल प्रबंधक एवं उद्यमी बन सकते हैं। सब्सिडी के बजाय ऋण समय व पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध कराया जाए।

31

स्वदेशी डेरी उत्पादों के यंत्रीकृत उत्पादन के उपकरण

प्रशांत मिन्ज, वैज्ञानिक एवं डा. जितेन्द्र कुमार डबास, स.मु.तक.अधिकारी
भाकृअनुप - राष्ट्रीय डेरी अनुसंधान संस्थान, करनाल-132001

हमारे देश में स्वदेशी डेरी उत्पाद, लघु उद्योग क्षेत्र में रहते हुए हाथों से ही बनाए जाते हैं तथा हलवाइयों की दक्षता के अनुसार इनकी गुणक्ता परिवर्तनशील रहती हैं। इन्हें बनाने की प्रक्रिया में उपयोग होने वाले उपकरण कम स्वच्छ तथा अधिक ऊर्जा खर्च करने वाले होते हैं, साथ ही इनमें ज्यादा श्रम की आवश्यकता पड़ती है। इसके कारण उत्पादों की गुणवत्ता अच्छी एवं एक समान नहीं रहती। स्वदेशी उत्पादों को बनाने वाली हमें ऐसी इकाइयॉ चाहिए, जिनकी रूपरेखा की विशेषताओं में इतना लचीलापन हो कि यह कच्चे माल व उत्पादों को आसानी से व स्वच्छता से हैंडल कर सकें, उत्पादन के प्रत्येक चरण में उत्पादों की जॉच की सुविधा प्रदान करके उनकी गुणवत्ता को नियंत्रित रख सके और जिसमें बहुक्रियाओं की सुविधा उपलब्ध रहे। पिछले तीन दशकों में स्वदेशी उत्पादों के उत्पादन को यंत्रीकृत करने हेतु बहुत सारे अनुसंधान संस्थानों, अभियांत्रिकी विभागों, विश्वविद्यालयों तथा उद्योगों द्वारा गंभीर प्रयास किए गए हैं। इस लेख में स्वदेशी डेरी उत्पादों के यंत्रीकृत उत्पादों के लिए विकसित किए गए विभिन्न उपकरणों की जानकारी दी गई है।

1) एक चरणीय खरोंचने वाला ऊष्मा विनिमायक

यह एक बेलनाकार उपकरण होता है जिसकी बेलनाकार सतह की दोहरी दीवार होती है। इसकी दीवार की दो परतों के बीच भाप का दबाव रहता है। बाहरी दीवार के ऊपर एक ऊष्मारोधी परत भी चढ़ी होती है। इस बेलनाकार ऊष्मा विनिमायक के अन्दर एक रोटर घूमता है जिसकी शाफ्ट उसके केन्द्र में रहती है व दोनों सिरों पर बने ढ़क्कनों में बियरिंग की सहायता से टिकी रहती है। एक तरफ के ढ़क्कन से यह शॉफ्ट बाहर निकलकर एक विद्युत मोटर से जुड़ी रहती है, जो इसे विभिन्न चक्रों पर घुमा सकती है। रोटर के बाहरी तरफ इसकी परिधि पर चार सीधे ब्लेड पिन(कब्जे) द्वारा जुड़े रहते हैं। ये ब्लेड रोटर की शॉफ्ट के समानान्तर रहते हैं तथा रोटर के घूमने पर अपकेन्द्रीय बल द्वारा बेलनाकार उपकरण की आन्तरिक दीवार के साथ चिपक कर चलते हैं और इस प्रकार यह दूध को गरम करने वाली सतह को खरोंच कर चलते हैं। जब दूध को बेलनाकार उपकरण में एक तरफ बने छिद्र से डाला जाता है व साथ ही रोटर को घुमाया जाता है व जैकेट में जुड़ी भाप की पाइप का वॉल्व खोलकर भाप छोड़ी जाती है तो ब्लेड दूध को पूरी आन्तरिक सतह पर फैलाते रहते हैं, जिससे ऊष्मा का हस्तांतरण बढ़ जाता है तथा खुरचने वाली क्रिया से सतह पर दूध जलता नहीं व इसकी जली हुई परत भी नहीं बनती। इस तरह से दूध शीघ्रता से वाष्पित होकर गाढ़ा हो जाता है व दूसरे सिरे पर बनी निकासी से बाहर आ जाता है तथा दूसरे बर्तन व टैंक में इकट्ठा कर लिया जाता है। मोटर के चक्कर कम व अधिक करने से ब्लेड का गर्म सतह पर दबाब कम व अधिक किया जा सकता है। परन्तु फिर भी इस एक चरणीय ऊष्मा विनिमायक में परिचालन का लचीलापन कम रहता है तथा भिन्न भिन्न प्रकार के उत्पाद बनाने हेतु भिन्न भिन्न प्रकार के उत्पाद बनाने हेतु भिन्न भिन्न स्तर तक दूध को गाढ़ा करने के लिए हमें दो चरणीय व तीन चरणीय ऊष्मा विनिमायक की आवश्यकता पड़ती है, इसकी प्रति इकाई क्षेत्रफल व प्रति घंटे प्रसंस्कृत दूध की मात्रा के रूप में दर्शाई गई क्षमता, विभिन्न मानकों जैसे कि इसमें पम्प किए गए दूध की मात्रा की दर, भाप का दबाव व तापमान, रोटर के घूमने की गति तथा ब्लेडों की संख्या आदि पर निर्भर करती है।

उपयोग : दूध को गाढ़ा करना, डोडा बर्फी व संदेश आदि बनाना।

2) दो चरणीय पतली पर्त खुरचने वाला ऊष्मीय विनिमायक

इसमें हम दो एक चरणीय ऊष्मा विनिमायकों को ऊपर नीचे इस तरह स्थापित करते हैं कि ऊपर वाले चरण में गाढ़ा होकर

निकलता हुआ दूध नीचे वाले चरण में प्रवेश करता रहता है जहॉ पर बची हुई प्रकिया पूर्ण होती है। पहले ऊष्मा विनिमायक में दूध तीस प्रतिशत टी.एस.(कुल ठोस की मात्रा) तक गाढ़ा होता है। पहले ऊष्मा विनिमायक के रोटर में चार परिवर्तनशील निकासी वाले ब्लेड लगे रहते हैं तथा यह 200 चक्कर प्रति मिनट की गति से घूमता है। पहले चरण में गाढ़ा हुआ दूध गुरूत्वाकर्षण से अपने आप दूसरे चरण में प्रवेश करता है, क्योंकि पहले का निकास द्वार दूसरे के प्रवेश द्वार से जुड़ा रहता है। दूसरे चरण के ऊष्मा विनिमायक में रोटर की रूपरेखा अलग तरह की होती है। इसके दो ब्लेड तो उसी तरह से सीधे व परिवर्तनशील निकासी वाले रहते हैं। परन्तु दो अन्य आमने सामने के ब्लेड तिरछे मुड़े रहते हैं। यह तिरछे मुड़े ब्लेड खोए को बाहर निकालने में अर्थात् इसका प्रवहण करने में सहायक होते हैं। एक दूसरा अन्तर यह भी है कि दूसरे चरण का रोटर कम गति अर्थात् केवल दो तीन चक्र प्रति मिनट की दर से घूमता है। इस उपकरण की औद्योगिक क्षमता की भी जॉच की गई। इसमें बने खोए की संवेदी जॉच करने पर पता चला कि यह पारंपरिक तौर पर बने खोए से मिलता जुलता ही है। परन्तु फिर भी खोए में कुछ चिपचिपापन होने के कारण तथा दूध के भरण की दर में थोड़ा बदलाव आते ही खोए की गुणवत्ता में बदलाव आने के कारण, दो चरण के स्थान पर तीन चरणों वाले विनिमायक का अनुसंधान द्वारा विकास किया गया।

उपयोग : दूध को गाढ़ा करके खोया बनाना।

3) तीन चरणीय पतली परत बनाकर खुरचने वाला ऊष्मीय विनिमायक

इस उपकरण में दो चरणों के स्थान पर तीन चरणों में तीन एक समान ऊष्मा विनिमायक स्थापित किए जाते हैं। इनमें से ऊपर के दोनों चरणों में एक जैसे रोटर व सीधे परिवर्तनशील निकासी वाले ब्लेड लगे रहते हैं तथा तीसरे में उसी तरह दो ब्लेड खोये की आसानी से निकासी के लिए भिन्न रूपरेखा वाले होते हैं जो तिरछे होने के कारण घूमने पर खोये को आसानी से आगे निकासी की ओर धकेलते हैं। अंतिम उत्पाद की रचना व गठन को बदलने के लिए सभी चरणों के रोटर को भिन्न भिन्न कोटरों द्वारा अलग–अलग गति से घुमाया जा सकता है। दूध के उपकरण में प्रवाह की दर (फीड रेट) को ठीक तरह से सूच्मता से नियंत्रण करने के लिए अलग से तंत्र लगा होता है। एक पेंचनुमा चीनी को आगे की तरफ धकेलने वाला यंत्र तीसरे चरण के प्रवेश द्वार पर लगा रहता है जोकि लगातार खोये में चीनी मिलाता रहता है। प्रत्येक चरण की भाप की जैकेट में भाप के दबाव के सूचक व संदेशक लगे रहते हैं, जो भाप का दबाव दर्शाते हैं व भाप की लाइन में लगे नियंत्रक तक दबाव की सूचना पहुॅचाते रहते हैं। इससे प्रति–चरण के लिए जो दबाव एक बार कंट्रोल पेनल पर स्थाई कर दिया, नियंत्रक द्वारा भाप के कम व अधिक प्रयोग होने पर भी वहीं दबाव बना रहता है तथा किसी भी जैकेट में भाप का दबाव अस्थिर नहीं रहता।

उपयोग : खोया, बरफी, बासुन्धी, रबड़ी।

4) घी का निरंतर उत्पादन करने वाला संशोधित उपकरण

घी के लिए भी उसी तरह का रोटर व ब्लेड वाला ऊष्मा विनिमायक का डिजाइन व विस्तार किया गया तथा इसमें रोटर व ब्लेड के समूह का संशोधित डिजाइन लगाकर इसे घी के अवशिष्ट कणों का बड़ा आकार देने वाला बनाया गया। पहले इसमें मुख्य कठिनाई यह भी कि ब्लेड के रगड़ने से घी के अवशिष्ट कण महीन हो जाते थे तथा उन्हें घी से अलग करना बहुत कठिन होता था। इस उपकरण की क्षमता एक घंटे में मक्यान से 300 किलोग्राम घी बनाने की है। सामान्य विधि से घी बनाने की प्रक्रिया के स्थान पर इसमें एक कि0ग्रा0 घी बनाने में 320 ग्राम भाप की बचत होती है। इस उपकरण को बिना खोले अपने स्थान पर ही स्वचालित विधि से सफाई करनी भी संभव है।

5) शंक्वाकार प्रसंस्करण टब(कढ़ाई)

यह उपकरण 60 डिग्री कोण वाली शंक्वाकार आकृति वाला स्टेनलेस स्टील का होता है और इसके चारों तरफ दोहरी दीवार वाली भाप की जैकेट होती है। उसके भी बाहर एक ऊष्मारोधित परत चढ़ी होती है। इस प्रकार के डिजाइन में भाप की ऊष्मा केवल टब के अन्दर भरे दूध को ही मिनती है व बाहर नष्ट नहीं होती। उसके बाद भी भाप की तापीय ऊर्जा के दक्षतापूर्वक प्रयोग करने हेतु एवं इसकी हानि को कम करने के लिए भाप की जैकेट को तीन हिस्सों में बॉटा होता है। इसके अन्दर भी एक शंक्वाकार का रोटर तंत्र होता है, जिसकी तीन समान दूरी पर लगी बाजू रहती हैं। इन बाजुओं पर तीन स्प्रिंग द्वारा संचालित ब्लेड रहते हैं जो स्प्रिंग के बल से रोटर के घूमने पर टब की आंतरिक सतह को खरोंचते रहते हैं। इस शंक्वाकार टब(कोनिकल वैट) के तल में निकास द्वार होता है, जो एक पाइप द्वारा एक सकारात्मक

विस्थापन वाले स्क्रू पम्प से जुड़ा रहता है। पम्प चलने पर यह दूध का वैट में पुनः परिचालन करता है तथा इसे उसकी गर्म आन्तरिक सतर पर फलाता है। इस उपकरण को दूध के गाढ़े उत्पादों के लिए और भी सुधारा गया है।

उपयोग : खोया, बरफी, रबड़ी, घी एवं बासुन्धी।

6) इन लाइन उत्पादन पद्धति

दूध को गाढ़ा करके विभिन्न उत्पादों जैसे कि खोया बर्फी आदि में बदलने की प्रक्रिया में इन लाइन उत्पाद पद्धति का विकास किया गया, जिसमें एक चरणीय खरोंचने वाले ऊश्मा विनिमायक की ऊष्मा हस्तांतरण को उच्च दर के कारण उसे इन लाइन सिस्टम में दूध को प्राथमिक तौर पर गाढ़ा करने के लिए पहले लगाया जाता है। उसके बाद शंक्वाकार प्रसंस्करण कढ़ाई को उसकी परिवर्तनशील ऊश्मा सतह तथा ऊश्मा हस्तांतरण पर उत्तम नियंत्रण वाली विशेशताओं के कारण स्वदेशी दूध उत्पादों को बनापने के लिए बची हुई प्रक्रिया पूरी करने में उपयोग किया जता है। भारतीय डेरी उत्पादों को बनाने की परंपरागत प्रक्रिया की सभी सकल क्रियाओं के अध्ययन के बाद उन्हें यंत्रीकृत उत्पादन के लिए ढ़ाला गया। यह पद्धति छोटे व मध्यम स्तर के डेरी उद्यमियों की परंपरागत उपकरणों द्वारा ही तेजी से व अच्छी गुणवत्ता वाले स्वदेशी डेरी उत्पाद बनाने की मॉग को पूरा करती है। यह पूरी पद्धति स्वदेशी डेरी उत्पाद को बनाने के लिए एक प्रायोगिक संयंत्र है।

उपयोग : खोया, बरफी, रबड़ी, घी एवं बासुन्धी।

7) घूर्णन कढ़ाई वाली खोया बनाने की मशीन

इस मशीन में एक 60 से 290 लीटर क्षमता वाली कढ़ाई को एक बॉल बियरिंग व वनज सह सकने वाले बियरिंग पर इसके तल के केन्द्र पर लगी शॉफ्ट द्वारा स्थापित कर दिया जाता है। ऐसा करने से इसे इसकी धुरी पर आसानी से घुमाया जा सकता है। उत्पाद बनाते हुए इसे एक गियर वाली विद्युत मोटर से कम गति पर घुमाया जाता है। शॉफ्ट का डिजाइन इस प्रकार होता है कि टब को इसके अन्दर से आसानी से हटाया जा सकता है अर्थात् शॉफ्ट व टब स्थाई तौर पर जुड़े नहीं रहते पर टब को इस पर रखने पर यह शॉफ्ट के घूमने पर घूमने लगता है। एक खास डिजाइन वाली कपलिंग की मदद से यह एक दो हॉर्सपावर वाली मोटर की शॉफ्ट की रेखा में आ जाती है। इस कपलिंग की सहायता से टब को मोटर के ऑफ रहने पर भी घुमाया जा सकता है। मार्केट में माइल्ड स्टील तथा स्टेनलेस स्टील से बने दोनों प्रकार के घूर्णन टब मिलते हैं। टब को इसके नीचे लगे दो, डीजल से चलने वाले बर्नर द्वारा गरम किया जाता है। इन बर्नर को एक छोटी मोटर द्वारा डीजल स्प्रे कर चलाया जाता है। इनमें एक घन्टे में औसतन तीन–चार लीटर डीजल की खपत होती है। डीजल के विकल में दूसरे ईंधन जैसे गैस, केरोसीन व लकड़ी का प्रयोग भी किया जा सकता है। इस अल्प स्वचालित मशीन का विभिन्न फैट व एस एन एफ के अनुपात जैसे 0.555, 0. 677, 0.666 पर बेनिवाल व उसकी टीम द्वारा मूल्यांकन किया गया। इसमें सभी भौतिक व रायायनिक पैरामीटर मापे गए तथा सभी नमूनों का संवेदी मूल्यांकन किया गया। यह पाया गया कि 0.677 के फैट व एसएसएफ के अनुपात वाला दूध इस घूर्णन टब में खोया बनाने के लिए सबसे अधिक उपयुक्त है। खोया बनाने के लिए आरंभ में निध्ररित की गई दूध की विभिन्न मात्राओं जैसे कि 15, 20, 25, 30 तथा 3 कि0ग्रा0 दूध में से 15 कि0ग्रा0 की मात्रा सबसे उपयुक्त पायी गई। इससे अलग ली गई मात्राओं में भूरे रंग का खोना बना। इस उपकरण में बनाये गये खोये की शेल्फ आयु भी जॉची गई जो कि संतोषजनक पाई गई।

निष्कर्ष :

नए उपकरणों की खोज व विकास ही डेरी उद्योग की सफलता की कुंजी है। विभिनन स्वदेशी डेरी उत्पाद बनाने के लिए अधिक सक्षम व प्रभावी उपकरणों की खोज व विकास में प्रसंस्करण की विभिन्न विशेष आवश्यकताओं को पूरा करना होता है। इसलिए इनकी खोज व विकास में हर तरह से सूक्ष्म से सूक्ष्म ध्यान देना अति आवश्यक है। एक ओर आवश्यक पहलू यह भी है कि इन स्वदेशी उत्पादों की एक समान गुणवत्ता व अधिक क्षमता के लिए यांत्रिकी उत्पादन के साथ उपयुक्त पैकेजिंग मशीनरी की भी बहुत कमी है, जिसे खोज व विकास द्वारा शीघ्र पूरा किया जाना चाहिए।

राजभाषा कार्यकलाप 2016-17

भाकृअनुप-राष्ट्रीय डेरी अनुसंधान संस्थान, करनाल

1. तिमाही हिन्दी बैठकों का आयोजन :

संस्थान राजभाषा कार्यान्वयन समिति की तिमाही बैठकों का संस्थान के निदेशक महोदय की अध्यक्षता में समय पर आयोजन किया जा रहा है। सहायक निदेशक (राजभाषा) इस समिति के सदस्य सचिव हैं तथा सभी प्रभागों के अध्यक्ष एवं प्रभारी अधिकारी इस समिति के पदेन सदस्य हैं। समिति द्वारा निर्णित मुद्दों पर तत्काल कार्रवाई सुनिश्चित की जा रही है।

2. हिन्दी पखवाड़ा एवं हिन्दी चेतना मास का आयोजन

संस्थान में दिनांक 14 सितम्बर से 15 अक्तूबर, 2016 तक आयोजित राजभाषा हिन्दी चेतना मास के दौरान संस्थान के सभी वर्गों के अधिकारियों एवं कर्मचारियों के लिए कई प्रतियोगिताएं आयोजित की गई। राजभाषा चेतना मास का उद्घाटन 14 सितम्बर, 2016 को संस्थान के निवर्तमान निदेशक डा. ए.के.श्रीवास्तव जी ने किया। दिनांक 15.9.2016 को "टिप्पण एवं मसौदा लेखन प्रतियोगिता में वैज्ञानिक स्तर के अधिकारियों ने भी भाग लिया। संस्थान के वैज्ञानिकों, शोध छात्रों एवं तकनीकी अधिकारियों हेतु दि. 22.9.2016 को एक शोधपत्र/पोस्टर प्रदर्शन प्रतियोगिता आयोजित की गई। इस प्रतियोगिता में विभिन्न प्रभागों/अनुभागों से 17 पोस्टर प्रदर्शित किए गए। इसी क्रम में संस्थान के अवर श्रेणी एवं अपर श्रेणी लिपिकों के लिए दिनांक 20.9.2016 को एक दिवसीय हिन्दी प्रशासनिक कार्यशाला का आयोजन भी किया गया, जिसमें 43 कार्मिकों ने भाग लिया। इस कार्यशाला में श्री अभिषेक श्रीवास्तव, वरिष्ठ प्रशासनिक अधिकारी, केन्द्रीय मृदा लवणता अनुसंधान संस्थान ने उद्घाटन सत्र में टिप्पणी एवं मसौदा लेखन पर प्रभावी जानकारी देकर प्रतिभागियों का ज्ञानवर्धन किया। राजभाषा हिन्दी चेतना मास में आयोजित टिप्पणी एवं मसौदा लेखन प्रतियोगिता, शोध पत्र पोस्टर प्रदर्शन प्रतियोगिता एवं गीत-गायन प्रतियोगिता के विजेताओं को दिनांक 26 अक्तूबर, 2016 को रा.डे.अनु.संस्थान, करनाल में आयोजित किए जाने वाले पुरस्कार वितरण समारोह में नकद पुरस्कारों एवं प्रमाण पत्रों से पुरस्कृत किया गया।

3. हिन्दी कार्यशाला/संगोष्ठी/सेमिनार/सम्मेलन आदि

क. दि. 20.9.2016 को एक दिवसीय हिन्दी प्रशासनिक कार्यशाला आयोजित की गई जिसमें 43 मंत्रालयिक स्टाफ ने भाग लिया।

ख. दि. 10.11.2016 को कंप्यूटर पर युनिकोड एवं तकनीकी टूल्स के द्वारा हिंदी प्रयोग को बढ़ावा देने के संबंध में एक हिन्दी कार्यशाला आयोजित की गई, जिसमें 16 अधिकारियों/ कर्मचारियों ने भाग लिया।

ग. नगर स्तरीय 9.3.2017 को हिन्दी कार्यशाला का आयोजन किया गया जिसमें 47 राजभाषा अधिकारियों एवं कर्मचारियों ने भाग लिया।

4. राजभाषा संबंधी अन्य गतिविधियाँ-

क. वर्ष 2015-16 की वार्षिक मूल हिन्दी टिप्पण/आलेखन प्रतियोगिता में 10 कर्मचारियों को नकद पुरस्कारों से पुरस्कृत किया गया।

ख. 7.1.2017 को आयोजित निबंध प्रतियोगिता में 3 विजेताओं को प्रमाण पत्र से सम्मानित किया गया।

ग. हिन्दी टंकण प्रतियोगिता के विजेताओं को अगली तिमाही बैठक में सम्मानित किया जाएगा।

5. हिन्दी प्रकाशन का ब्यौरा :

क. वर्ष 2015-16 की दुग्ध-गंगा पत्रिका पूर्णतः हिन्दी में प्रकाशित हो चुकी है तथा इसका विमोचन माननीय केन्द्रीय कृषि एवं किसान कल्याण राज्यमंत्री श्री सुदर्शन भगत जी द्वारा राष्ट्रीय डेरी अनुसंधान संस्थान करनाल में दिनांक 27.9.2016 को किया गया। इस पत्रिका का वर्ष 2016-17 का छठा अंक आपके हाथों में है।

ख. तिमाही न्यूज लैटर "डेरी समाचार" पूर्णतः हिन्दी में प्रकाशित किया जा रहा है।

6. नराकास करनाल के महत्वपूर्ण दायित्वों का निर्वहन

करनाल में राष्ट्रीय डेरी अनुसंधान संस्थान के निदेशक महोदय जिला-स्तरीय नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति के पदेन अध्यक्ष हैं। श्री के.पी.एस.गौतम, मुख्य प्रशासनिक अधिकारी एवं प्रभारी राजभाषा एकक इस समिति के समन्वयक हैं। श्री राकेश कुमार कुशवाहा, सहायक निदेशक (राजभाषा) समिति के सचिव एवं श्री मिथलेश कुमार, वरिष्ठ वित्त एवं लेखाधिकारी समिति के वित्तीय समन्वयक हैं। वर्ष 2016 में डा.ए.के.श्रीवास्तव, अध्यक्ष नराकास एवं निदेशक (निवर्तमान), भाकृअनुप-राष्ट्रीय डेरी अनुसंधान संस्थान, करनाल की अध्यक्षता में नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति की दो बैठकें, प्रथम बैठक दिनांक 24.6.2016 को एवं दूसरी बैठक दिनांक 29.11.2016 को संपन्न हुई है। नराकास की छमाही बैठकों में करनाल में स्थित 70 केन्द्र सरकार के कार्यालयों, उपक्रमों, निगमों, अनुसंधान संस्थानों, विश्वविद्यालयों, लिमिटेडों तथा राष्ट्रीयकृत बैंकों आदि के प्रशासनिक अध्यक्षों, वरिष्ठ अधिकारियों, राजभाषा अधिकारियों एवं प्रतिनिधि अधिकारियों द्वारा प्रतिभागिता की जाती है। संस्थान की अगुवाई में करनाल नगर के सभी सदस्य कार्यालयों में राजभाषा हिन्दी के प्रगामी प्रयोग की मानीटरिंग के साथ-साथ राजभाषा के प्रचार, प्रसार एवं कार्यान्वयन में सहयोग भी प्रदान किया जा रहा है।

बसंत पर कविता
(संकलनकर्ता - श्री के.पी. एस. गौतम, मुख्य प्रशासनिक अधिकारी)

आज बसंत की रात,
गमन की बात न करना।

धूप बिछाए फूल-बिछौना,
बगिया पहने चांदी-सोना,
कलियां फेंके जादू-टोना,
महक उठे सब पात,
हवन की बात न करना!
आज बसंत की रात,
गमन की बात न करना।

बौराई अमवा की डाली,
गदराई गेहूँ की बाली,
सरसों खड़ी बजाए ताली,
झूम रहे जन-जात,
शयन की बात न करना!
आज बसंत की रात,
गमन की बात न करना।

खिड़की खोल चंद्रमा झांके,
चुनरी खींच सितारे टांके,
मन करूं तो शोर मचाके,
कोयलिया अनखात,
गहन की बात न करना।
आज बसंत की रात,
गमन की बात न करना।

नींदिया बैरिन सुधि बिसराई,
सेज निगोड़ी करे ढ़िठाई,
ताने मारे सौत जुन्हाई,
रह-रह प्राण पिरात,
चुभन की बात न करना।
आज बसंत की रात,
गमन की बात न करना।

यह पीली चूनर, यह चादर,
यह सुंदर छवि, यह रस-गागर,
जनम-मरण की यह रज-कांवर,
सब भू की सौगात,
गगन की बात न करना।
आज बसंत की रात,
गमन की बात न करना।

नराकास के तत्वावधान में ''वसंत का पैगाम, राजभाषा हिंदी के नाम'' राजभाषा संगोष्ठी/कार्यशाला -

हिन्दी चेतना मास के उद्घाटन समारोह का आयोजन -

भाकृअनुप – राष्ट्रीय डेरी अनुसंधान संस्थान

करनाल–132 001 (हरियाणा)